साहित्य अमृत

मासिक

वर्ष-२१ अंक-११ ❖ पृष्ठ ८८ | ज्येष्ठ-आषाढ, संवत्-२०७३ | जून २०१६

संस्थापक संपादक

स्व. पं. विद्यानिवास मिश्र

❖

पूर्व संपादक

स्व. डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

❖

संपादक

त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

❖

प्रबंध संपादक

श्यामसुंदर

❖

संयुक्त संपादक

डॉ. हेमंत कुकरेती

❖

कार्यालय

४/१९, आसफ अली रोड,
नई दिल्ली-११०००२

फोन : २३२८९७७७ • फैक्स : २३२५३२३३

इ-मेल : sahityaamrit@gmail.com

❖

शुल्क

एक अंक —₹ ३०

वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ ३००

वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ ४००

विदेश में

एक अंक—चार यू.एस. डॉलर (US$4)

वार्षिक—पैंतालीस यू.एस. डॉलर (US$45)

❖

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी श्यामसुंदर द्वारा ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२ से प्रकाशित एवं ग्राफिक वर्ल्ड, १६८६, कूचा दखनीराय, दरियागंज, नई दिल्ली-२ द्वारा मुद्रित।

❖

साहित्य अमृत में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

इस अंक में

संपादकीय

सूखे की समस्या, न्यायपालिका की… ४

प्रतिस्मृति

आँखों देखी घटना/ *गोपालराम गहमरी* ९

डायरी-अंश

अखबार में दिखनेवाला पूरा सच नहीं है/ *रामदरश मिश्र* १२

कहानी

चार रुपए बीस पैसे/ *तुलसी देवी तिवारी* १७

पुश्ते में मकान नंबर/ *नीरजा माधव* २४

चौपाल/ *मंजु मधुकर* ४७

कर्ज का मूल्य/ *राकेश भ्रमर* ६०

पापा कब लौटेंगे/ *राकेश 'चक्र'* ७०

आलेख

'विक्रम' के पराक्रमी संपादक/ *राजशेखर व्यास* २०

हिंदी कथा-साहित्य में नारी/ *राहुल* २९

विचार कुंभ से दुनिया को संदेश/ *सिद्धार्थ शंकर गौतम* ३७

अज्ञेय—काव्य और पर्यावरण/ *मनमीत कौर* ७३

लघुकथा

झाँसा/ *अशोक गुजराती* ५९

मैं जो हूँ, हूँ!/ *अशोक गुजराती* ७५

कविता

दिल में समेटे सागर/ *श्वेता राय* ११

सौगात/ *बी.डी. बजाज* ६३

पंछी अब बिरहा गाएँगे/ *शैलेंद्र चौहान* ७९

संस्मरण

श्रीलाल शुक्ल पत्रों में/ *रमेशचंद्र शाह* ३४

भाषा-प्रयोग

हिंदी क्रियाओं का ढाँचा…/ *बदरीनाथ कपूर* ५०

राम झरोखे बैठ के

भ्रष्टाचार का सच और सदाचार की संभावना/ *गोपाल चतुर्वेदी* ५४

साहित्य का भारतीय परिपार्श्व

पागल/ *रघुनंदन* ५७

व्यंग्य

राष्ट्रीय भ्रष्टाचार विश्वविद्यालय/ *मनोहर पुरी* ६४

साहित्य का विश्व परिपार्श्व

सरकारी तख्ता/ *अजीज नेसिन* ६७

यात्रा-संस्मरण

इधर बुडा, उधर पेस्ट/ *रंजन कुमार सिंह* ७६

लोक-साहित्य

किन्नौर के जनजातीय गहने/ *पवन चौहान* ८०

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ ८२

वर्ग-पहेली ८३

साहित्यिक गतिविधियाँ ८४

संपादकीय

सूखे की समस्या, न्यायपालिका की सक्रियता

देश के बारह राज्य इस समय सूखे की चपेट में हैं और करीब एक-तिहाई देश की आबादी भी सूखे से प्रभावित है। उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, कर्नाटक, तेलंगाना, आंध्र प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र, उड़ीसा, झारखंड, बिहार, हरियाणा और छत्तीसगढ़ सूखाग्रस्त राज्य हैं। इन राज्यों के अनेक क्षेत्रों में काफी समय से सूखे के आसार थे, पर उस ओर समुचित ध्यान नहीं दिया गया। वैसे सभी राजनैतिक दल किसानों की हालत पर घड़ियाली आँसू बहाते हैं। इस कॉलम में खेतों और उससे संबंधित समस्याओं की ओर भी कई बार ध्यान दिलाया गया है। वैसे भारत के मुख्यत: खेतिहर देश होने के कारण कम-से-कम अंग्रेजी शासन काल से एक ड्रिल निर्देशित है, जिसके अनुसार जिला अधिकारियों को प्रतिवर्ष पुनर्निरीक्षण करना होता है। यदि किसी बदलाव की आवश्यकता होती है तो वह भी करना होता है। राज्य सरकार को भी सूचना देनी होती है। यदि विपत्ति आती है तो उसी के अनुसार कार्य करना होता है, ताकि परिस्थिति न बिगड़े। आजकल प्रशासन और राजनैतिक व्यवस्था, दोनों ही इसको गंभीरता से नहीं लेते हैं। यह देश का दुर्भाग्य है। सूखा अकाल का भयंकर रूप कब ले ले, यह कहा नहीं जा सकता है। वैसे आशा यही की जाती है कि आवागमन और संचार साधनों की बढ़ोतरी होने के कारण वह भयावह स्थिति पैदा नहीं होगी, जैसी कि अठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में देश के कई भागों में पैदा हुई थी। यह सब इतिहास में अंकित है। दुर्भिक्ष कमीशनों की रिपोर्टें हैं, उनके सुझाव भी हैं। १९४२-४३ के बंगाल के अकाल को मनुष्यकृत अकाल कहा जाता है। द्वितीय युद्ध के कारण विदेशी शासन द्वारा आतंकित करने और १९४२ के आंदोलन के दंश के लिए सब जान-बूझकर किया गया था। अब वह सब जानकारी अधिकृत रूप में शोध पर आधारित पुस्तकों में मिलती है।

खैर, तब विदेशी शासन था। अब तो अपना राज है। वैसे देश में सूखा और अकाल विषयक अनेकों शोधग्रंथ उपलब्ध हैं। अनावृष्टि या सूखे का सामना कैसे करें, इसका क्या प्रबंधन होना चाहिए, यह सब जानकारी प्रचुर मात्रा में राज्यों के पास उपलब्ध है। कमी है तो भी शासन और प्रशासन में तुरंत निर्णय लेने की क्षमता एवं जवाबदेही भावना की। खेती मुख्यत: राज्यों का विषय है। उनके पास अपने अधिकारियों द्वारा तुरंत सूचना आनी चाहिए और परिस्थितियों के अनुसार काररवाई होनी चाहिए। किंतु केंद्र भी अपना पल्ला नहीं झाड़ सकता। केंद्र में भी कृषि मंत्रालय और संबंधित मंत्रालय हैं। आज जो स्थिति पैदा हुई है, वह केंद्र और राज्यों में तालमेल के अभाव की जीती-जागती मिसाल है। संघीय ढाँचे का तात्पर्य यह नहीं है कि समय-समय पर केंद्र राज्यों को आगाह न करे, सावधान न करे। इसी प्रकार राज्य भी केंद्र से आनेवाले परामर्शों को उनके अधिकार क्षेत्र में हस्तक्षेप नहीं कह सकते।

एक चिंता का विषय यह भी है कि कई राज्य हैं, जहाँ कुछ क्षेत्रों में हमेशा वर्षा कम होती है। बुंदेलखंड, मराठवाड़ा और तेलंगाना तथा आंध्र प्रदेश के कई भाग ऐसे हैं। पाठकों को स्मरण होगा कि बुंदेलखंड की समस्या का स्थायी समाधान निकाला जाएगा, यह वादा वहाँ जाकर तत्कालीन प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने किया था। विकास की योजना बनेगी और उसे शीघ्र पूरा किया जाएगा। ठोस काम कुछ नहीं हुआ। स्थिति यथावत् है। प्राय: हर साल गाँव के गाँव खाली हो जाते हैं, अपने जानवरों के साथ परिवार के परिवार रोजी-रोटी की तलाश में अन्य स्थानों पर प्रयाण करते हैं। इस दौरान न केवल दुर्घटनाएँ हो जाती हैं, कभी-कभी स्थानीय लोगों और दूसरे राज्य से राहत के लिए आनेवाले लोगों में दंगा-फसाद भी हो जाता है। आश्चर्य की बात तो यह है कि मीडिया में महीने-दो महीने या अधिक समय तक से सूखे, पानी की कमी, लोगों के पलायन के समाचार और दृश्य देखने को मिल रहे थे, किंतु राज्य सरकारों के कानों पर जूँ नहीं रेंगी। जब पानी गले तक आ गया, तब मंत्री लोग हेलीकॉप्टर से स्थिति का जायजा लेने निकले और विवाद शुरू हो गए कि उनके हेलीकॉप्टर को उचित प्रकार से उतारने, धूल-धूसरित होने से बचाने के लिए कितना पानी बरबाद हो गया, जबकि लोग पानी की एक-एक बूँद के लिए त्राहि-त्राहि कर रहे हैं। राज्य की एक मंत्री एक जिले में पानी के अभाव के आकलन के लिए हेलीकॉप्टर से गईं, पर तुरंत सेल्फी खींचने लगीं। जब मीडिया में आलोचना हुई तो कहा कि उन्होंने एक जगह पानी देखा तो खुशी में सेल्फी लेने लगीं। अब इस देश के मुख्यमंत्री और मंत्री जमीन पर पैर नहीं रखना चाहते हैं, ए.सी. वाली बड़ी गाड़ियाँ नाकाफी हैं, क्योंकि वे सरकारी कार्य में इतना व्यस्त हैं, समय बचाते हैं सरकारी कामकाज के लिए। ऐसी है इनकी संवेदना। एक ओर मनरेगा का धन, जो राज्यों को जाना था, सर्वोच्च न्यायालय के आदेश के बाद ही पहुँचा तो दूसरी ओर सवाल उठता है कि राज्य उसके सदुपयोग में कितनी सावधानी बरत रहे हैं। देश में अब भी सरकारी गोदामों में अनाज सड़ने के समाचार आ रहे हैं, जबकि उस अनाज का आज सूखा पीड़ित क्षेत्रों में उपयोग होना चाहिए। यह समस्या तीन दशक पुरानी है। सीएजी और संसद् की लेखा-जोखा समिति की न जाने कितनी रिपोर्टें हैं, पर समस्या वैसी की वैसी ही है, कोई हल अब तक नहीं निकला। इस लापरवाही के लिए कौन जिम्मेदार है। केंद्र के खाद्य मंत्रालय ने इस ओर पिछले दिनों रोकथाम के लिए क्या कदम उठाए, कहा नहीं जा सकता। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी कहते हैं कि 'सब चलता है' वाला रुख अब नहीं चलेगा, पर बहुत से मंत्रालय अभी भी इस सबसे अनजान हैं। गाँव और खेती विषयक मंत्रालयों में आपसी समन्वय की कमी भी कुछ

कम नहीं है। इनके मूल उद्देश्य क्या हैं, को छोड़कर मंत्रालय अपनी-अपनी रियासतें बनाए रखना चाहते हैं।

पानी की कमी को लीजिए, अभी हमें जल संबंधी नीति बनानी है। उसके बनाने तथा कार्यान्वयन में वस्तुत: राज्यों की भागीदारी होगी। राज्य सरकारों की लापरवाही के कारण अधिकतर पानी के अभाव की समस्या पैदा हुई है। ट्यूबवेल अंधाधुंध बन गए। वर्षों से सरकारी विशेषज्ञ कह रहे हैं कि जलस्तर गिरता जा रहा है, पर आगे काररवाई क्या हुई? पेप्सी और कोकाकोला की कंपनियाँ खोलने की इजाजत देने के पहले स्थानीय लोगों के पानी की आवश्यकता का पता लगाना चाहिए। गाँवों और कस्बों में जो जल एकत्र करने के स्रोत थे, जैसे पोखर, तालाब आदि, भूमाफिया और महाबलियों ने उन पर अतिक्रमण कर लिया है और उनपर निवास हेतु आवास अथवा दुकानें आदि बना ली हैं। बावड़ी या जहाँ कहीं पक्के तालाब थे, उनकी कोई देखभाल नहीं। ये सब काम पंचायत अधिकारियों, तहसील और जिले के अधिकारियों की मिलीभगत से या उनकी उदासीनता से हुए हैं और हो रहे हैं। अतिक्रमणों को रोकना राज्य के स्थानीय अधिकारियों और पंचायतों के दायित्व हैं, पर जब रक्षक ही भक्षक बन रहे हों तो किया क्या जाए। मंत्रियों और उच्च अधिकारियों द्वारा उनको शह मिलती है। होना यह चाहिए कि पुराने रेवन्यू के नक्शे निकालकर इन तालाबों, तलैया आदि का पुनरुद्धार किया जाए। शहरों में कानूनन पानी एकत्र करने या वाटर हार्वेस्टिंग की व्यवस्था करने की बाध्यता है, पर इसकी देखभाल कौन करता है कि आदेश का पालन हो रहा है या नहीं। वैसे भी पीने के पानी का जो संकट है, उसमें यह ऊँट के मुँह में जीरा की तरह है। यह कहानी लंबी है और जमीनी सच्चाई लोगों को मालूम है। जनसाधारण अपने को असहाय पाता है, क्योंकि उनमें आपस में एकता नहीं है। सूखे के सिलसिले में जब कुछ राज्यों के मुख्यमंत्री प्रधानमंत्री मोदी से मिले और केंद्रीय वित्तीय सहायता की माँग की, उस समय प्रधानमंत्री ने तुरंत राहत की काररवाई और उसके बाद निकट भविष्य में क्या किया जाए तथा दीर्घकालीन उपायों के बारे में उनका ध्यान दिलाया। पर कठिनाई यही है कि आज के राजनेता केवल आज की ही बात सोचते हैं, पर जो स्टेट्समैन या राज्यविज्ञ हैं, वे कल और दीर्घकालीन बातों पर विचार करते हैं। उनकी आँखें केवल आज हमें क्या लाभ होगा, इस पर केंद्रित नहीं रहती हैं। जब तक निजी स्वार्थों से ऊपर उठकर समाधान की इच्छाशक्ति पैदा नहीं होती है, तब तक जनता प्रति वर्ष सूखा, अनावृष्टि को सहना ही पड़ेगा।

सूखे की क्या मानवीय कीमत चुकानी पड़ती है, उस सबसे हम अनभिज्ञ नहीं हैं। लोग शहरों की ओर भागते हैं। वहाँ उनका भाँति-भाँति से शोषण होता है। महिलाओं और बच्चों की सुरक्षा का प्रश्न जटिल होता जाता है। नौकरियाँ आसानी से मिलती नहीं हैं। खुले में रहते हैं, बुजुर्गों और बच्चों की बीमारी के सवाल, हैजे जैसी बीमारियों का प्रकोप, खुले आकाश के नीचे सोना और अपने दैनिक कार्य करना। किसान आत्महत्या कर रहे हैं, इसके तो शायद हम आदी हो चुके हैं। इन हालात में उनकी संख्या में और बढ़ोतरी होती है। पशु ही किसान का संबल है, पर न उनके लिए चारा है और न पानी। विकट स्थिति बनती जाती है। एक जन-याचिका की सुनवाई के दौरान सर्वोच्च न्यायालय की एक पीठ ने सूखे की घोषणा में आनाकानी करने और पूरे तथ्य उजागर न करने के कारण कुछ राज्यों, विशेषतया गुजरात, हरियाणा और बिहार को बहुत कुछ कहा-सुना। खरी-खोटी सुनने के बाद भी क्या राज्य सरकारें जागेंगी? जमीनी सच्चाई को न स्वीकार करने की प्रवृत्ति को शुतुरमुर्गी रवैया बताया। न्यायपीठ ने केंद्र सरकार को भी राज्यों को समय रहते सचेत न करने का दोषी ठहराया। सर्वोच्च न्यायालय की पीठ ने सूखा पीड़ितों की समस्या से नागरिक को संविधान प्रदत्त जीने के अधिकार से जोड़ा है। सूखे और अकाल में नागरिक के जीने के अधिकार का दायित्व केंद्र और राज्य सरकारों का है।

सर्वोच्च न्यायालय की खंडपीठ ने केंद्र को दिए मनरेगा की बकाया राशि को तुरंत अदा करने के आदेश और देरी के कारण मुआवजे के भुगतान के लिए भी कहा है। सर्वोच्च अदालत ने वित्तीय अभाव के सरकारी तर्क को मानने से इनकार किया। खंडपीठ ने राज्यों को भी निर्देश दिए कि वे राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनयम के प्रावधानों को सही ढंग से कार्यान्वयन के लिए आयुक्तों की नियुक्ति करें। खंडपीठ ने स्वयं आयुक्तों की नियुक्ति की माँग को नहीं माना। उसने यह भी कहा कि वह याचिका को अभी निपटा नहीं रहा है और एक अगस्त को पुन: सुनवाई होगी। सार्वजनिक वितरण प्रणाली को मजबूत बनाने को कहा। शीर्ष न्यायालय की खंडपीठ ने सरकार को केंद्रीय रोजगार गारंटी परिषद् की स्थापना और फसलों के नुकसान का मुआवजा तय करने के लिए कहा। शीर्ष न्यायालय ने स्पष्ट किया कि राज्य केंद्र के बनाए गए कानून का पालन नहीं करेंगे, ऐसा नहीं हो सकता है। अदालत ने यह भी आदेश दिया कि सूखा पीड़ित राज्यों में पूरी गरमी में मिड डे मील, यानी दोपहर के भोजन की व्यवस्था जारी रहनी चाहिए। सर्वोच्च न्यायालय ने आश्चर्य व्यक्त किया कि आपदा प्रबंधन अधिनियम २००५ के लागू होने के दस साल बाद तक न कोई राष्ट्रीय योजना और न ही कोई राष्ट्रीय आपदा समाधान कोष स्थापित किया गया है। सरकार की निरंतरता रहती है, पर इस मामले में संप्रग सरकार की असावधानी स्पष्ट है। आशा की जा सकती है कि अब राज्य सरकारें और केंद्र सरकार सर्वोच्च न्यायालय की पीठ के निर्देशों का पालन करेंगी।

खंडपीठ का यह कहना कि सूखे को भी राष्ट्रीय आपदा माना जाए, समझ में नहीं आता है। यह सही है कि सूखे के मसले में सरकारें उतनी ही गंभीरता दिखाएँ, जितनी प्राकृतिक आपदा के निदान में अपेक्षित है। प्राकृतिक आपदा यकायक आती है। सूखा भी प्राकृतिक कोप का ही फल है, प्राकृतिक आपत्ति है, किंतु उसका अनुमान तो पहले से लग जाता है और उसके निवारण की व्यवस्था समय रहते की जा सकती है, यदि राज्य सरकारें सजग और संवेदनशील हों। इसकी पूरी ड्रिल है, आवश्यकता हो तो उसमें परिवर्तन करें, किंतु बेहतर होगा, यदि स्थापित व्यवस्था को मजबूत बनाया जाए। यह उत्तरदायित्व भी राष्ट्रीय आपदा प्राधिकरण पर न थोपा जाए। हाँ, यदि ऐसी कोई विषम परिस्थिति पैदा हो, जब देश का बड़ा भू-भाग दुर्भिक्ष या अकालग्रस्त हो जाए तो राष्ट्रीय आपदा प्राधिकरण को भी अपनी भूमिका का निर्वाह करना होगा और राज्यों में जिला प्रशासन की सहायता करनी होगी। जरूरी तो यह है कि राज्य सरकारें अपने दायित्वों को समझें और प्रशासन को चुस्त, सजग

और संवेदनशील बनाएँ, न कि उसका राजनीतीकरण या जातीकरण करें।

मानवाधिकार बनाम अंधविश्वास

पिछले दिनों कुछ ऐसे व्यक्तियों के बयान पढ़ने को मिले, जिन्हें देश में लोग संत और महात्माओं के रूप में देखते हैं। स्वामी स्वरूपानंद, जो कई पीठों के शंकराचार्य कहे जाते हैं, उनका बयान आया कि महाराष्ट्र में सूखे की स्थिति पैदा हुई, क्योंकि महाराष्ट्र में साईं बाबा की पूजा बहुत होती है। अगर ऐसा है तो महाराष्ट्र में उन बेचारों का क्या दोष, जो अन्य देवी-देवताओं की पूजा करते हैं। फिर महाराष्ट्र के अलावा अन्य राज्य सूखा पीड़ित क्यों हुए? यही नहीं, एक बयान उनका आया कि उत्तराखंड में जो आपदा कुछ समय पहले आई थी, उसका कारण है कि बदरीनाथ-केदारनाथ जो पूजा स्थल हैं, वहाँ लोग हनीमून और तफरीह के लिए जाते हैं। तृप्ति देसाई और उनकी सहयोगी महिलाएँ महाराष्ट्र में प्रयास कर रही हैं कि वहाँ के प्रसिद्ध मंदिरों में पुरुषों की तरह महिलाओं के प्रवेश और दर्शन के लिए कोई रोक न हो। काफी जद्दोजहद के बाद ये महिलाएँ एक शनिश्चर देवता के मंदिर में दर्शन के लिए जाने में सफल हुईं। इस पर स्वामी स्वरूपानंद की प्रतिक्रिया समाचार-पत्रों में आई कि महिलाओं के साथ अनाचार के बढ़ने की संभावनाएँ हैं। क्या यह सब कपोल कल्पित बातें अखबार वालों ने गढ़ ली हैं? बड़ी प्रसन्नता होगी यदि वे स्पष्टीकरण करें कि उन्होंने ऐसी कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की है, और उनकी बातों को तोड़-मरोड़कर रखा गया है। हमारा संविधान समानता और समरसता का निर्देश देता है। हमारा धर्म कहता है कि परमात्मा के सामने सब एक हैं, हमारी आत्मा एक है। हम महिलाओं के समान अधिकारों के समर्थक रहे हैं। महिलाओं को उनकी बुद्धि पर छोड़ देना चाहिए कि किस प्रकार का संतुलन और नियंत्रण अपने जीवन में रखें, ताकि उन्हें कोई कठिनाई पैदा न हो।

सावरमला (केरल) के मंदिर में एक उम्र की महिलाओं का जाना वर्जित है। यह किस आधार पर है, यह प्रश्न उठ रहा है। मामला देश के सर्वोच्च न्यायालय के सामने है। भगवान् सबके हैं तो इस प्रकार की रोक क्यों? 'परंपरा है' कहकर तो अनुचित को उचित नहीं ठहराया जा सकता। २०११ तक मुंबई के हजरत अली के मकबरे पर हर धर्म के लोग और औरतें जियारत के लिए जाया करती थीं। वाद में प्रबंधन समिति ने महिलाओं के जाने पर रोक लगा दी। इसपर मुसलिम महिलाओं और अन्य महिलाओं का विरोध है। एक बार कुछ महिलाओं ने वहाँ जाने की कोशिश की, लेकिन भीड़ इकट्ठी हो गई। वे असफल रहीं। पिछले दिनों तृप्ति देसाई वहाँ पहुँच ही गईं और इबादत भी की। यही नहीं, अब तीन बार तलाक-तलाक कहने से जो एक तरफा तलाक हो जाता है, उसके विरोध में एक मुसलिम महिला शीर्ष अदालत में पहुँची है। उसने भी समानता और मानव अधिकार के संरक्षण के प्रश्न का आधार लिया है। शायरा बानू का मामला तो क्रिमिनल प्रोसीजर कोड (सी.आर.पी.ओ.) के अंतर्गत मेनटेनेंस का था। उस समय कुछ कठमुल्लाओं के विरोध के कारण कि यह उनके धर्म में हस्तक्षेप है, राजीव गांधी की सरकार ने कानूनन संसद् के द्वारा सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय को निरस्त करवा दिया था। देखना है कि सर्वोच्च न्यायालय किस प्रकार इस मामले को निपटाता है। दलितों और महिलाओं के साथ अन्याय के मामले रोज सामने आते हैं। संविधान में समानता का जो प्रावधान है, उसकी धज्जियाँ उड़ रही हैं। आज हर समुदाय में राममोहन राय, स्वामी दयानंद, स्वामी विवेकानंद, महात्मा गांधी, महात्मा फूले, वीरेशलिंगम्, डॉ. अंबेडकर जैसे महापुरुषों की आवश्यकता है, जो महिलाओं और दलितों के समानता के युद्ध को देशव्यापी बनाएँ, ताकि अंधविश्वास और दकियानूसी विचारों की समाप्ति हो सके।

बोस भ्राताओं की अंतरंग कथाएँ

थोड़ा पुस्तकों की दुनिया में चलते हैं। डॉ. शिशिर कुमार बोस (१९२०-२०००) कोलकाता के नेताजी भवन में नेताजी रिसर्च ब्यूरो के संस्थापक थे। अपने व्यावसायिक जीवन में उन्होंने बच्चों की बीमारियों के एक समर्थ डॉक्टर के रूप में ख्याति प्राप्त की। उन्होंने अपने पिता शरतचंद्र बोस की जन्म शताब्दी के अवसर पर अपने पिता के विषय में एक संस्मरणों की पुस्तक का प्रणयन किया था। द्वितीय विश्व युद्ध के समय १९४१ में जब सुभाष चंद्र बोस अपने घर में ही हिरासत में थे और पुलिस के पहरे के बावजूद वे रात में घर से निकल गए, उसमें शिशिर बोस की मुख्य भूमिका थी। पता लगने पर शिशिर बोस लाहौर फोर्ट, लाल किले में नजरबंद रहे। उन यातनाओं का भी उन्होंने जिक्र किया है। सुभाष बोस कैसे काबुल होते हुए इटली, फिर जर्मनी पहुँचे और उसके बाद सुदूर पूर्व एशिया पहुँचे, आई.एन.ए. की स्थापना, ये सब आज भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के अभिन्न अंग हैं। शिशिर की एक पुस्तक अंग्रेजी में 'सुभाष और शरत—एक अंतरंग संस्मरण बोस भ्राताओं के' अंग्रेजी में प्रकाशित (रूपा, दिल्ली) हुई है। पहले ये संस्मरण धारावाहिक रूप में महीने में दो बार बांग्ला भाषा की प्रसिद्ध पत्रिका 'आनंद बाजार पत्रिका' में छपते रहे। पत्रिका के यशस्वी संपादक नीरेंद्र नाथ चक्रवर्ती के कहने के उपरांत ही शिशिर बाबू ने यह लेखमाला लिखनी शुरू की। ये संस्मरण बहुत चर्चित रहे और बाद में पुस्तकाकार 'बोसुबारी' के नाम से प्रकाशित हुए। अपने जीवनकाल में शिशिर बाबू ने धीरे-धीरे उनका अंग्रेजी अनुवाद भी कर डाला, पर वह पड़ा रहा, प्रकाश में नहीं आया। इस पुस्तक का यथास्थान संशोधन कर, कुछ टिप्पणियों और एक परिचयात्मक लेख के साथ उनके सबसे छोटे पुत्र सुमंत्र बोस, जो लंदन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स में पॉलिटिकल साइंस में प्रोफेसर हैं, ने प्रकाशन के लिए तैयार किया।

पुस्तक वास्तव में बंगाल के प्रख्यात बोस परिवार, विशेषतया दो भाइयों सुभाष और उनके ज्येष्ठ भाई शरत के आपसी संबंधों और देश के स्वतंत्रता संग्राम में उनकी भागीदारी को रेखांकित करती है। इससे भद्र लोक के बड़े परिवारों की जीवन-शैली और बौद्धिक विचारधाराओं पर भी प्रकाश पड़ता। शिशिर कुमार बोस ने जो देखा और जैसा समझा, उसका प्रस्तुतीकरण किया है। परिवार और कुनबा कैसा विशाल था, उसका अंदाजा इस बात से होता है कि पितामह जानकीनाथ बोस के चौदह पुत्र और छह पुत्रियाँ थीं। सुभाष बोस पिता की नौवीं संतान थे। सबसे छोटे पुत्र का देहांत जल्दी ही हो गया था। कुनबे का ताना-बाना काफी बड़ा था। शिशिर बोस की स्मृतियाँ अपने बचपन से प्रारंभ होती हैं। गत शताब्दी के २०वें और ३०वें दशक में स्वतंत्रता संग्राम भी जोर

पकड़ रहा था। यह परिवार इन दो भाइयों के कारण स्वराज युद्ध से जुड़ गया। यह पुस्तक स्वतंत्रता संग्राम के बहुत से पक्षों पर रोशनी डालती है। अतएव यह एक ऐतिहासिक महत्त्व की पुस्तक है। सबसे ज्येष्ठ भाई शरत को सुभाष के प्रति बहुत लगाव था। उन्हीं की भाँति उनकी पत्नी विभावती देवी का भी देवर सुभाष से विशेष अपनत्व था। कुछ विशेष गुण सुभाष में हैं, इसका अनुमान शरत बाबू को बहुत पहले हो गया था। दोनों माताओं का अपने को देश के स्वराज के लिए समर्पित करने की कहानी और उनका अवदान प्रो. गार्डन ने अपनी पुस्तक 'ब्रदर्स अगेंस्ट राज' अथवा भ्राता राज के विरोध में (रूपा) अंकित है।

पुस्तक में भाँति-भाँति की जानकारी है। बहुत से प्रकरण हैं, जिन्हें उद्धृत करने की इच्छा होती है, पर स्थानाभाव के कारण यह संभव नहीं है। एक प्रकरण की अवश्य हम चर्चा करना चाहेंगे। १९३० के दशक में जब सुभाष बोस यूरोप में इलाज के लिए गए थे, शरत बोस ब्रिटिश सरकार द्वारा नजरबंद कर दिए गए, अतएव परिवार आर्थिक कठिनाइयों में था। सर नृपेंद्र नाथ सरकार, जो बंगाल सरकार के एडवोकेट जनरल थे और बाद में वायसराय की कौंसिल के मेंबर बने, चुपचाप इस परिवार की आर्थिक सहायता करते थे। शरत बोस उनको प्रोफेशन में अपना गुरु कहते थे। सुभाष तो ब्रिटिश सरकार की आँख की किरकरी थे और वे यदि देश में रहते तो बीमार होते हुए भी फिर जेल भेज दिए जाते। नृपेंद्र नाथ सरकार उस गवर्नमेंट के एडवोकेट जनरल थे। राजनैतिक मतभेद उस समय व्यक्तिगत संबंधों को गौण नहीं बनाते थे। आज की राजनीति अब दूसरी तरह की है। शिशिर लिखते हैं कि वे अपनी माँ विभावती के साथ एक बार नृपेंद्र नाथ सरकार के यहाँ गए थे। आव-भगत और बातचीत के बाद जब वे चलने लगे तो नृपेंद्र नाथ सरकार ने एक लिफाफा चुपचाप माँ को पकड़ा दिया। बहुत सी उल्लेखनीय घटनाओं की चर्चा पुस्तक में है, जिनके बारे में न के बराबर ही जानकारी साधारणतया मिलती है। पुस्तक केवल बोस परिवार तक सीमित है, यह समझना गलत होगा। यह एक ऐतिहासिक दस्तावेज है, जो स्वतंत्रता संग्राम के कई पहलुओं पर रोशनी डालती है। अति उत्तम होगा, यदि यह पुस्तक हिंदी और अन्य भाषाओं में अनुवादित होकर प्रकाशित हो, ताकि भारतीय इतिहास के कुछ अनकहे तथ्यों की जानकारी सर्वसाधारण को हो सके। पुस्तक में कई चित्र हैं, जो साधारणतया देखने को नहीं मिलते हैं। एक चित्र बचपन का है। शिशिर बोस के साथ सुभाष की पुत्री अनीता और एक छोटे पुत्र की फोटोकॉपी है। पत्र में अनीता लिखती है—'मेरे प्यारे भाई, मैं अपना प्यार भेज रही हूँ। अब वियना कब आ रहे हो, और तब क्या मुझसे जर्मन में बातचीत करोगे।'

इंदिरा गांधी अपने डॉक्टर की नजरों में

इंदिरा गांधी के साथ लंबे अरसे, करीब २० वर्ष साथ रहे डॉ. के.पी. माथुर ने एक संस्मरण पुस्तक लिखी है और कोणार्क प्रकाशन, नई दिल्ली ने प्रकाशित की है। क्यों और कैसे उनका चुनाव हुआ से लेकर इंदिरा गांधी की हत्या तक उनको डॉ. माथुर ने कैसा जाना और देखा, उसको स्पष्टता के साथ लिखा है। डॉ. माथुर इनके साथ देश और विदेश की यात्राओं में साथ रहते थे। श्रीमती गांधी की दूसरे राजनेताओं के बारे में कैसे संबंध और प्रतिक्रियाँ होतीं, उसका भी जिक्र किया है। कुछ बातें, जैसे प्रारंभ में वे चाहे संसद् हो अथवा बाहर, बोलने में असहज महसूस करती थीं और झिझकती थीं, किंतु धीरे-धीरे उनका आत्मविश्वास बढ़ता गया, यह सब और लोगों ने भी लिखा है। डॉ. माथुर ने जिक्र किया है कि जो लोग, जैसे टी.टी. कृष्णाचारी, कृष्ण मेनन आदि, जो पहले सत्ता में रह चुके थे, पर अब उनको खयाल था कि उनको महत्त्व नहीं मिल रहा है, अकसर चुटकी लेते और फब्तियाँ कसते। डॉ. माथुर ने शिमला सम्मिट और पोखरण के परमाणु विस्फोट का भी जिक्र किया है। डॉ. माथुर ने विभिन्न स्थितियों में प्रधानमंत्री गांधी की प्रतिक्रियाओं को अच्छे ढंग से प्रस्तुत किया है। श्रीमती गांधी के व्यक्तित्व के मानवीय पक्ष का अच्छा चित्रण है। अपने साथ काम करनेवालों की सुविधाओं का ध्यान रखना, हँसी-मजाक की प्रवृत्ति आदि का सुंदर विवेचन घटनाओं के साथ किया है।

डॉ. माथुर स्वयं बड़े मजाकिया हैं। उनके अपने निजी अनुभव हुए। अलग-अलग स्तर पर सबका विवरण उन्होंने दिया है। श्रीमती गांधी की पढ़ने की आदत और खासकर किस प्रकार की पुस्तक पढ़ती थीं, उसकी चर्चा की है। उनमें वैज्ञानिकों और फौजियों के लिए खास आदर की भावना थी। कुछ विवादग्रस्त विषयों, जैसे मेनका गांधी के संबंधों का भी जिक्र किया है। डॉ. माथुर के अनुसार वे मेनका गांधी को राजनीति में लाना चाहती थीं, पर उनका साथ राजीव गांधी के विरोधियों के साथ रहा और मेनका प्रधानमंत्री आवास छोड़कर चली गईं। सोनिया गांधी से उनके अत्यंत मधुर संबंध थे। पुस्तक में कई अच्छे फोटो हैं, जो पुस्तक की उपादेयता को बढ़ाते हैं। डॉ. माथुर ने एक अच्छा काम यह किया है कि समय-समय पर जिन चिटों पर लिखकर इंदिरा गांधी उनको भेजती थीं, चाहे वे चिकित्सा के बारे में हों या किसी अन्य विषय में, उनको सुरक्षित रखा; उनकी छाया प्रतियाँ भी पुस्तक में यथास्थान सम्मिलित की हैं। श्रीमती गांधी के मजबूत निश्चयी स्वभाव की कई जगह चर्चा की है। हिंदी विरोधी आंदोलन के समय जब उनको मद्रास विश्वविद्यालय में न जाने की राय दी गई, फिर भी वे गईं और विद्यार्थियों को संबोधित किया। जब विद्यार्थियों ने कहा—हिंदी में मत बोलिए, तमिल में बोलिए। इंदिरा गांधी ने तड़ाक से कहा कि मैं तमिल सीखूँगी, आप हिंदी सीखेंगे। इस बात ने विद्यार्थियों को हतप्रभ कर दिया।

डॉ. माथुर ने अपने निजी निकट संबंधों और अनुभवों की काफी विस्तार से चर्चा की, जो इंदिरा गांधी के व्यक्तित्व के कई अनकहे पहलुओं पर रोशनी डालते हैं। जब इंदिरा गांधी प्रधानमंत्री नहीं रहीं तब भी डॉ. माथुर प्रतिदिन उसी प्रकार उनकी सेहत की देखभाल करते रहे जैसा कि जब वे औपचारिक रूप से नियुक्त थे। डॉक्टर से बहुत निजी और घरेलू संबंध बनना स्वाभाविक ही है। डॉ. माथुर ने इस बात की परवाह नहीं की कि राज नारायण उनके इस व्यवहार को पसंद नहीं करते हैं। डॉ. माथुर की व्यक्तिगत और प्रोफेशन की नैतिकता प्रशंसनीय है। खासकर पृष्ठ १६ पर एक छोटी सी कविता, जो इंदिराजी ने डॉ. माथुर के जन्मदिवस पर लिखकर भेजी, वह उद्धृत है, और जो इंदिराजी का उनके और उनके परिवार के प्रति अपनापन था, उसकी परिचायक है। कुल मिलाकर डॉ. माथुर के संस्मरण 'द अनसन इंदिरा गांधी, थ्रू हर फिजीशियंस आइज',

यानी 'अनदेखी इंदिरा गांधी अपने चिकित्सक की दृष्टि में' एक अत्यंत पठनीय पुस्तक है और उसका अनुवाद शीघ्र ही हिंदी में होना चाहिए। डॉ. माथुर को इसके लिए साधुवाद! पुस्तक का कलेवर प्रकाशक ने अत्यंत सुंदर बनाया है।

मोदी सरकार के दो साल

२६ मई को एन.डी.ए. सरकार अपने दो साल पूरे कर रही है। पत्र-पत्रिकाओं में सरकार की सफलताओं और कमियों की समीक्षा हो रही है। विशेषतया ध्यान इस बात पर है कि जनता में २०१४ के आम चुनाव में वोट मोदी को दिए, उनकी पार्टी को नहीं। जनता यू.पी.ए. सरकार की अकर्मण्यता और भ्रष्टाचार से परेशान थी, हताशा थी। नरेंद्र मोदी के व्यक्तित्व ने लोगों में एक नई आशा की किरण जाग्रत् की। उनके परिवर्तन और देश के विकास के संदेश को जनता जनार्दन ने सराहा, अतएव जनता की अपेक्षा के अनुसार मोदी और मोदी की सरकार कहाँ तक खरी उतरती है, उसका आकलन हो रहा है। देश की एक प्रसिद्ध अंग्रेजी साप्ताहिक पत्रिका 'इंडिया टुडे' ने करीब एक पूरा अंक इस आकलन को समर्पित किया है। प्रधानमंत्री मोदी को पत्रिका ने 'सिल्वर मेडल' दिया है और कहा है कि आज भी जनता को विश्वास है कि मोदी अपने आश्वासनों को पूरा करने के लिए सक्षम हैं। अन्य मंत्रियों और मंत्रालयों की भी सार्थक समीक्षा है। प्रधानमंत्री को स्वर्ण मेडल के लिए और प्रयास करना है, वैश्विक मंदी चल रही है। ७.६ प्रतिशत विकास की दर प्रशंसनीय है, जबकि अन्य देशों की विकास दर ३ प्रतिशत के आसपास ही सीमित है। प्रधानमंत्री ने कई नई पहल की हैं और उनकी सफलता की आशा करनी चाहिए। कुछ पर्यवेक्षकों का विचार है कि इतनी बड़ी जीत के उपरांत उन्होंने धूम-धड़ाके से बड़े आर्थिक सुधारों का अवसर गँवा दिया, पर ध्यान देने की बात है कि हमारी संवैधानिक व्यवस्था में द्रुतगति से कार्य करने की सीमाएँ हैं। बहुत से आर्थिक सुधार राज्य सभा में बहुमत न होने के कारण आगे न बढ़ सके। इस विवरण में अभी हमें नहीं जाना है। कुछ मुद्दे हैं, जिनके विषय में कुछ चर्चा करना चाहेंगे। रास्ता लंबा है, पर लोगों की आशा मोदी पर ही है कि वह देश को वास्तव में विकास के रास्ते पर ले जा सकते हैं—अपने उद्देश्य 'सबका था और सबका विकास' का अनुसरण करते हुए।

कहा जाता है कि प्रधानमंत्री मोदी ने करीब ३३ योजनाएँ, जैसे मेक इन इंडिया, स्किल इंडिया, डिजिटल इंडिया, स्वच्छ भारत, जन-धन योजना, स्टार्टअप इंडिया आदि की शुरुआत की है। हमारा तात्पर्य स्कीमें गिनाना नहीं है। आवश्यकता है कि ये योजनाएँ अपने लक्ष्यों में सफल हों और इनका लाभ उनको मिलना चाहिए जिनके लिए ये बनी हैं, विशेषतया सोशल सेक्टर में डिलीवरी सिस्टम अथवा व्यवस्था की क्षमता में, निष्पक्षता और ईमानदारी में लोग शंका प्रकट करते हैं। अतएव उनकी निरंतर निगरानी होनी चाहिए। बहुत सी योजनाओं के लिए केंद्रीय स्तर के मंत्रालयों और राज्य सरकार के विभागों और मंत्रियों में समन्वय जरूरी है। बहुत सी योजनाओं में जिस प्रकार का सहयोग राज्यों से मिलना चाहिए, नहीं मिलता है। इसके लिए व्यक्तिगत संपर्क की आवश्यकता होगी। रोजगार और नौकरियों के साधन बढ़ाने की अत्यंत आवश्यकता है। बेरोजगारी एक बड़ी विकट समस्या है। इसके लिए निवेश बढ़ाना और व्यापार, उद्योग की स्थापना आवश्यक है। विदेशी पूँजी निवेश के लिए काम-धंधा करने में आसानी है, यह संदेश व्यवस्था के हर स्तर से जाना चाहिए। कुछ बड़े आर्थिक सुधारों की संभावना शीघ्र ही होगी। जैसे कुछ परिवर्तन राज्यसभा की सदस्यता में होते हैं। नई योजनाएँ जो गाँवों और रूरल क्षेत्रों में प्रधानमंत्री ने घोषित की हैं, उनकी ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। वहाँ पारदर्शिता, कार्यकुशलता और निष्पक्षता सदैव दिखनी चाहिए। जो भ्रांति फैलाने की कोशिश बराबर हो रही कि मोदी सरकार केवल कॉरपोरेट या उद्योगपतियों के लिए है, तभी दूर होगी। जनसाधारण को एहसास होगा कि सरकार सब वर्गों के लिए बहुमुखी और समावेशी विकास के लिए प्रयत्नशील है। इसमें संसद् सदस्यों और विधानसभा के सदस्यों की बहुत बड़ी भूमिका है। न केवल उन्हें योजनाओं को ठीक से समझना चाहिए, बल्कि पूरी जानकारी लोगों तक पहुँचानी चाहिए। उसका अपना व्यवहार और आचरण ऐसा होना चाहिए कि लोग उनको जनसेवक समझें। प्रधानमंत्री को आदर्श गाँव के सुझाव और जो पैसा उनको स्थानीय विकास के लिए आवंटित होता है, उसका समुचित उपयोग होना चाहिए। सबसे अधिक आवश्यकता इस बात की है कि इधर-उधर के मुद्दे उठाकर विकास के पथ से भटकना नहीं चाहिए। नए-नए विवादग्रस्त अथवा विभाजक मुद्दों को या पुराने मुद्दों को उखाड़कर प्रस्तुत करने की प्रवृत्ति से बचने की बहुत आवश्यकता है। विपक्ष तो सरकार को इसी भ्रमजाल में फँसाना चाहेगा, ताकि विकास का काम ठीक से न हो सके। मंत्रियों और सांसदों को इस ओर विशेष सावधानी बरतनी चाहिए। हम समझते हैं कि देश में विकास की संभावनाओं की जो आशा बन रही है, उसमें प्रधानमंत्री कार्यालय की निगरानी और मार्गदर्शन जरूरी है; उसे अनावश्यक केंद्रीकरण नहीं समझना चाहिए। आज सरकार की दो साल की उपलब्धियों से देश की जनता आश्वस्त है, अतएव न तो गति में शिथिलता आनी देनी चाहिए और न विकास की निश्चित दिशा से भ्रमित होना चाहिए।

आज बिहार में जंगलराज की वापसी को लेकर मीडिया में बहुत चर्चा है। गया में विधान परिषद् की एक सदस्या मनोरमा यादव के पुत्र रॉकी यादव ने एक १९ साल के युवक आदित्य की दिन-दहाड़े गोली मारकर हत्या कर दी। पुलिस जब पार्षद के मकान में रॉकी यादव को पकड़ने गई, उसने वहाँ शराब की बोतलें पाईं। मनोरमा यादव फरार हो गईं और अब आत्मसमर्पण किया है। रॉकी यादव अपने बाप की फैक्टरी में छिपा था। पुलिस उधर सीवान में हिंदुस्तान समाचार के एक वरिष्ठ पत्रकार राजदेव रंजन की हत्या हो गई। सीवान कुख्यात है, वहाँ के माफिया नेता शहाबुद्दीन के कारण। समझ में नहीं आता है, जो तथाकथित उदारवादी और इंटेलेक्चुअल अवार्ड वापस करने और असहिष्णुता के बढ़ते वातावरण तथा अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के हनन की बातें कर रहे थे। बिहार में चुनाव के पहले और चुनाव के समय जोर-शोर से मुखर थे, इस समय क्यों चुप हैं? क्या उनका वह नाटक उस समय राजनीति से प्रेरित नहीं था?

त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

(त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी)

आँखों देखी घटना

● गोपालराम गहमरी

बात सन् १८९३ की है, जब मैं बंबई से लौटकर मंडला में पहले-पहल पहुँचा था। वहाँ मेरे उपकारी मित्र पंडित बालमुकुंद पुरोहित तहसीलदार थे। उन्हीं की कृपा से मैं मंडला गया था।

स्व. गोपालराम गहमरी

मंडला नर्मदा नदी के बाएँ किनारे बसा है। दाहिने किनारे ठीक उसी के सामने महाराजपुर गाँव है। वहाँ के माननीय जमींदार राय मुन्नालाल बहादुर एक सुयशवान् परोपकारी वैश्य थे। उनके उत्तराधिकारी बाबू जगनाथ प्रसाद चौधरी एक हिंदीप्रेमी युवक ने उपर्युक्त तहसीलदार साहब के द्वारा मुझे बुलाया था। मैं जब वहाँ पहुँचा, तब चौधरी साहब ने मुझे बांग्ला पढ़ाने का काम सौंपा। चौधरी साहब की रुचि बांग्ला पढ़कर हिंदी साहित्य में बांग्ला की पुस्तकें अनुवाद करने और हिंदी सेवा में समय बिताने की थी। चौधरी साहब को मैंने बांग्ला भाषा की शिक्षा दी और उन्होंने मेरे वहीं रहते ही बांग्ला से दो पुस्तकों का हिंदी अनुवाद करके छपवाया। एक 'दीवान गंगा गोविंद सिंह', दूसरी पुस्तक 'महाराजा नंद कुमार को फाँसी' थी।

उन दिनों मैं सवेरे नर्मदा स्नान किया करता था। नहाते समय मैंने वहाँ दो युवतियों की बातें सुनीं। एक थी लाली नाम की मल्लाहिन अपनी सखी निरखी के साथ। दूसरी थी एक त्रिशूल धारिणी कषायवसना, नाम इसका मालूम नहीं था।

लाली स्नान करते समय अपनी सखी निरखी से कहने लगी, अरी विन्ना! ऐसे साधू तो हमने कभी नहीं देखे। बड़ो देवता आए, ओको रूप देखते सोई जीव जुडाय जात है। ऐसो सुघर रूप विधाता ने मानो अपने हाथ से सँवारे हैं ओको तो। न जाने कब से संन्यास लए हैं ओने। ओकी उमिरि संन्यासी बन वे की ना आय। विन्ना लाली की यह बातें निरखी ध्यान से सुन रही थी। लेकिन उसके कुछ कहने से पहले ही पास ही घाट पर त्रिशूल गाड़कर स्नान करती हुई साधुनी ने कहा, हाँ बहन! तुम्हारी रूप तो विधाता के नौकर-चाकर के हाथ की कारीगरी आय काहे।

लाली रोज उसी घाट पर नहाने आती थी। मैं भी उसी घाट पर रोज स्नान करता था। वह अवधूतिन पहले ही दिन वहाँ दीख पड़ी थी। उसी दिन लाली से अवधूतिन का बहुत मेल-जोल हो गया।

वह संन्यासिनी त्रिशूलधारिणी उस अवधूतिन मंडली के साथ आई थी, जो नर्मदा को परिक्रमा करने अमरकंटक से चली थी। लेकिन उस त्रिशूलवाले का मन उन माताओं से नहीं मिलता था। अकेले माँगकर खाना और अलग उस मंडली के पास ही कंबल डालकर रात काट डालना उसकी दिनचर्या थी। लेकिन महराजपुर पहुँचने पर जब उस मंडली की संन्यासिनों को मालूम हो गया कि चौधरी साहब के यहाँ से परिक्रमा करनेवाले संतों को रोज भोजन मिलता है, तब उसने भी लंबी तान दी। माँग लाने की चिंता से वहाँ उसको रिहाई मिल गई।

स्त्री जाति के लिए लिखा है कि सदा गृहस्थी के काम में लगे रहने में ही कल्याण है, नहीं तो बिना काम के जब चार-पाँच बैठ जाती हैं, वहाँ चारों ओर का चौबाव चलने लगता है कि समालोचक भी मात खाते हैं। उनमें ऐसा बत वढ़ाव भी हो जाता है कि झोंटउल की भी नौबत पहुँच जाता है।

हम अपनी माताओं, बहनों और बेटियों से वहाँ इन पंक्तियों के लिए क्षमा माँगते हैं। हमारे कहने का यह अभिप्राय हरगिज नहीं है कि मर्दों में यह लत नहीं है और वे लोग इस तरह चार संगी बैठ जाने पर चर्चा-आलोचना नहीं करते।

बात इतनी है कि बेकाम समय बितानेवाली रमणियों में यह गलचौर बहुत बड़ा रहता है। मर्दों में यह गप्प हाँकनेवाले बहादुरों का जब चौआ-छक्का बैठ जाता है, तब वह लंतरानिया ली जाती हैं कि आकाश-पाताल के कुलाबे खूब मिलाए जाते हैं। लेकिन यह ठलुए ऊबकर झट अपना रास्ता नापने लगते हैं और देवियों को देखा है कि ऐसी ठल्ली रहनेवालियों का नित्य का यही रोजगार हो जाता है और जब उनकी मंडली बैठ जाती है, तब उनका निठल्लपुराण बड़ा विकट, बड़ा स्थायी और बड़ा प्रभावशाली हो जाता है। घर-घर की आलोचना का अध्याय जब चलता है, तब परनिंदा का चस्का जिन्हें लगा हुआ है, उनकी लंतरानियों के मारे भले लोगों में त्राहि-त्राहि होने लगती है।

यह लाली उसी मंडली की एक थी। उसने जो नहाती बेर पुरवा के साधु की सराहना की तो साधुना ने बड़े ध्यान से सब सुना और बड़े चाव से साधु का स्थान, वहाँ जाने का रास्ता और रंग-ढंग तथा हुलिया भी पूछ ली।

□

दूसरे दिन भिनसारे ही धूई के सामने पद्मासन लगाए हुए पुरवा गाँव के साधु के पीछे वह अवधूतिन शांत भाव से जा खड़ी हुई।

सवेरे का समय था। वहाँ और कोई नहीं था। साधु स्नान करके विभूति लगाए अकेले बैठे थे। अवधूतिन जब पीछे से चलकर उनके सामने हुई, तब उनका चेहरा देखते ही बोली, 'काहे देवता! ई आँसू काहे बह रहे हैं तुम्हारे!'

बाबा ने चारों ओर चौकन्ना होकर देखा और हाथ के इशारे से संन्यासिनी को सामने बिठाया।

जब वह बैठ गई तब वे धीरे से बोले, 'आँसू नहीं धूई का धुआँ लगा है, देवीजी!'

संन्यासिनी बोली, 'ना,ना! धुआँ तो इस घड़ी हुई नहीं देवता, आपको कुछ मन की वेदना है! सच कहिए, क्या बात है?'

बाबा को अब इतनी करुणा उमड़ी कि रहा नहीं गया। बोले, हाँ बात सही है। यह आँसू अब मेरी जिंदगी में सूखनेवाले नहीं हैं। जाने दो, तुमने देख लिया तो बचा! किसी से कहना नहीं। मैं तो संन्यासी हूँ। तुम भी गेरुआधारिणी हो। मेरा दोष छिपा डालना।

नए अपरिचित साधु की इस साफ बात पर साधुनी कुछ देर तक चुप रही। फिर हाथ जोड़कर बोली, 'मैं किसी से नहीं कहूँगी देवता, लेकिन मेरी विनती यही है कि इस आँसू का कारण आप बतला दें। मैं चुपचाप चली जाऊँगी।'

साधु ने पहले बहुत टाला, लेकिन यह तो छोड़नेवाली देवी नहीं है। सुने नहीं मानेगी, तब बोले, 'मेरी कथा लंबी और दुःख भरी है। तुम सुनकर क्या करोगी। दुःख की बातें सुनकर दुःख ही होगा।'

'ना-ना! दुःख कह देने से हल्का हो जाता है, इसमें दुःख क्यों होगा भला?' अब साधु कहने लगे, 'मैं काशी के क्वींस कॉलेज में पढ़ता था। घर में माँ और स्त्री यही तीन आदमियों का परिवार था। लेकिन माता का मिजाज बड़ा चिड़चिड़ा था। मेरी स्त्री को लड़का नहीं हुआ, यही उसका अपराध था। इसी कारण सब गृहकाज सुंदर रूप में करके भी उसको सास की सराहना कभी नसीब नहीं हुई। कभी कुछ भूल हो जाए तो माताजी की मार से उसकी पीठ फूल जाती थी। यह सब सहते हुए वह लक्ष्मी सास के सामने होकर कभी जवाब नहीं देती थी। एक दिन माँ ने उसपर और दरनापा चलाया। मैं भोजन करने बैठा था। माताजी पास आकर बैठ गईं। बहुत दिनों से परोसकर सामने बैठ के मुझे खिलाना माताजी ने छोड़ दिया था। आज बहुत दिनों पर खाते समय उनका पास बैठना देख बड़ा आनंद आया। माँ बोली, 'खावो बेटा! हमारे आने से हाथ क्यों खींच लिया। हम हट जाएँ?' मैंने कहा, 'ना माई! न जाने आज भूख काहे नहीं लगी है।'

मां-तरकारी अच्छी नहीं बनी है का रे बंझिया, ला बचवा को चटनी दे। अरे कटहर का आम का अंचार मरतवान में से निकाल ला। तोको केतना कोई सिखावे, अपनी अकल से कुछ नहीं करती। माता ने मेरा नाम टुअरा और मेरी स्त्री का नाम बंझिया या बंझेलवा रखा था।

मेरी स्त्री अचार-चटनी लाने गई तब माँ ने कहा, देख बेटा! अब तू मेरी बात मान ले। यह पतोहू बाँझ निकल आई। अब मैं मरे के किनारे पहुँच गई हूँ। कब चल दूँ, इसका कुछ ठिकाना नहीं है बेटा! लेकिन पोते का मुँह देखे बिना मर जाऊँगी तो इसका दुःख परलोक में पाऊँगी।

वह बोली, तुम अपना एक ब्याह और करो। मैं समझ गया कि माँ से जो मेरी बातें हुईं, इसने सब समझ लिया है। मैंने कहा, तुम ऐसी बातें क्यों करती हो? वह बोली, स्त्री का कर्तव्य है कि स्वामी जिससे सुखी रहे, जिससे स्वामी का वंश चले, इसके वास्ते अपना सब त्याग दे। मैं अभागिन हूँ। भगवान् मुझे बाँझ कर दिया तो तुम्हारा वंश ही डुबा दूँ। यह मेरा काम नहीं है। मैंने कहा, अच्छा अब अपनी बात कह चुकी तो मेरी भी अब सुन लो। पुरुष का कर्तव्य है कि स्त्री को सुखी करे। स्त्री पुरुष की विलास की सामग्री नहीं है। वह देवी है, उसे प्रसन्न रखना पुरुष का कर्तव्य है। जहाँ स्त्री प्रसन्न नहीं, वह घर नरक है। मेरी बात बीच में रोककर बोली, बस तो मैं तभी प्रसन्न होऊँगी जब तुम एक ब्याह और कर लोगे।

अब मैंने सब बात और कहा-सुनी बंद कर दी। माँ से कह दिया। तुम्हारी बात मानता हूँ। मैं ब्याह कर लूँगा। अब मेरा ब्याह उस मोहल्ले के चक्रधर की लड़की सूगा से हो गया।

□

ब्याह के बाद मैं काशी चला गया। सूगा की चिट्ठी बराबर आती रही। हर चिट्ठी में सूगा अपनी सौत की शिकायत लिखने लगी। मैं बराबर समझता गया कि सौत का सौत पर जो मान होता है उसी का यह सब प्रसाद है। एक दिन जो सूगा की चिट्ठी आई, उसको पढ़कर तो मुझे काठ मार गया। उसने लिखा, 'माँजी ने कई दिन हुए, उनको घर से खदेड़ दिया है।' उस दिन शनिवार था। झट टिकट लेकर घर पहुँचा। रात के समय भीतर जाते ही नई दुलहन मिली। मैंने तुरंत पूछा, माँ ने किसको खदेड़ दिया है।

फिर सूगा कुछ कहने चली थी कि मैंने उसे डाँटा। तब चुप रही। फिर से हाथ छुड़ाकर गंभीर हो गया। कहा, बिछोना ठीक है?

जब मेरी नींद खुली। कान पर जनेऊ चढ़ाकर लघुशंका करने गया। लौटकर देखा तो घड़ी में एक बजा है। बिछोने पर सूगा नहीं है। मैं दबे पाँव बाहर गया। दरवाजे के सामने बड़ के नीचे दो आदमियों को लिपटा देखकर पास गया। देखा तो वही पिछवाड़े वाला महादेव सूगा

को आलिंगन करके चुंबन कर रहा था। मैं नहीं कह सकता, मुझे कहाँ का धीरज आ गया कि आँखों के सामने वह लीला देखकर मैं सह गया।

महादेव तो मुझे देखकर भाग गया और सूगा चिल्लाकर गुहार करने लगी। मैंने पास जाकर कहा, तुम डरो मत सूगा। मैं तुमको कुछ नहीं कहूँगा। लेकिन यह तो बताओ कि जिसने तुम्हारे वास्ते अपना सबकुछ छोड़ दिया, उसको तुमने इतना कलंक क्यों लगाया?

सूगा ने रोकर कहा, 'मैंने बड़ा पाप किया है। तुम्हारे आगे मुँह दिखाने लायक नहीं हूँ, मुझे क्षमा करो।' मैंने कहा, 'मैं तो तुमको क्षमा देता हूँ सूगा। लेकिन जिस देवी के साथ तूने ऐसा विश्वासघात किया है, वह तुझे माफ करेगी कि नहीं मैं नहीं जानता, लेकिन मैं भी तुम्हीं पर सब छोड़कर जाता हूँ, उस लक्ष्मी का दर्शन पाऊँगा तो क्षमा माँगूँगा। अगर नहीं मिलेगी तो घर का मुँह नहीं देखूँगा। यही कहकर मैं चला गया। आज बारह वर्ष हो गए। उस लक्ष्मी का दर्शन नहीं मिला। कल रात को उस लक्ष्मी को मैंने सपने में देखा है। आज सवेरे से ही उसकी याद आ रही है। आँसू नहीं रुकते। नहीं जानता, वह मेरी आशा जगत् में है या नहीं।

यही कहकर संन्यासी ने उस अवधूतिन की ओर देखा। उसके भी आँसू बहकर गाल से टपक रहे थे।

उसने अधीर होकर पूछा, 'आप क्यों करुणा करती हो देवी?'

अब वह संन्यासी के चरणों में पड़कर बोली, 'मैं वह तुम्हारी दु:खिनी हूँ देवता। मैं ही हूँ हे नाथ? तुम्हारी वह आशा।'

इतना सुनते ही साधु ने 'अरे तुम हो हमारी लक्ष्मी आशा, तुम्हीं हो' कहते हुए उसको अपनी ओर खींच लिया। फिर उनका दर्शन वहाँ किसी को नहीं मिला।

प्रस्तुति : संजय कृष्ण

कविता

दिल में समेटे सागर

● **श्वेता राय**

विलोम

जब से मिली हूँ तुमसे
विलोम के मायने जान गई हूँ
सीख लिया है
चेहरे पर चिपकाना हँसी
समेटे मनभावों को
करती हूँ कल्पना—
कर लूँगी पूरी यात्रा एक दिन अनंत की
पर प्रारंभ ही नहीं खोज पाती,

यों ही खत्म होते जाते हैं दिन के चौबीस घंटे
लेकिन नहीं आता कोई नया दिन
और उम्र जाती है घट,
समेटे अनगिन पलों को
बरस-दर-बरस
जारी है क्रम मौसम के बदलने का भी

बस नहीं कुछ बदल रहा है
तो मेरे बाहर और भीतर।

तुम विक्षिप्त हो

बड़े-बड़े गंदे मटमैले नाखून
धूल गर्द से भरे पड़े उलझे बाल,
और बेतरतीब बढ़ी दाढ़ी लिये
तुम विक्षिप्त हो।

पीठ से सटा पेट
दूर तक गंध मारती मुँह की बास
दाँतों में पीलापन और
चमड़ी का रूखापन लिये
तुम विक्षिप्त हो।

फटे पुराने कपड़े से झाँकती बदहाली
फटी एड़ियों से रिसता खून,
और बदन पर मोटी परत की मैल लिये
तुम विक्षिप्त हो।

नहीं पड़ता फर्क तुम पर
किसी की खुशियों और दु:ख का

तुम खोए रहते हो स्वयं में,
कभी हँस पड़ते हो खिलखिलाकर तो
कभी आते-जाते राहगीरों पर
लगते हो फेंकने पत्थर
लिये हुए मन भर अपशब्द अपनी जुबान पर
तुम विक्षिप्त हो।

तुम्हारे पास से गुजरने वाला
लिये रहता है एक डर मन में—
न जाने कैसा कर बैठो व्यवहार तुम
क्योंकि तुम विक्षिप्त हो।

हाँ, विक्षिप्त ही हो
और तुम नहीं छुपा सकते अपनी विक्षिप्तता
कि यही तो है
तुम्हारा सकल नैसर्गिक स्वरूप
जिसे यों ही सामने आना है,

तुम अभिशप्त हो भोगने को
अपनी ये विक्षिप्तता सदैव
क्योंकि तुम समय हो।

पूर्व माध्यमिक विद्यालय
देवरिया (उ.प्र.)

डायरी-अंश

अखबार में दिखनेवाला पूरा सच नहीं है

● रामदरश मिश्र

१३.३.१५, सेमल

कल इंडिया इंटरनेशनल गया था। मेरे प्रिय अनिल जोशी तीन साल के लिए फिजी जा रहे हैं। इस संदर्भ में डायमंड पॉकेट बुक की ओर से एक छोटा सा समारोह आयोजित था। तो वहाँ जाने के लिए चार बजे गाड़ी से घर से निकले। साथ में सरस्वतीजी, बहू सागरिका और पौत्री कुहू भी थीं। इस मौसम में जब भी घर से निकलता हूँ, दृष्टि मार्ग में खिले फूलों पर लगी होती है। इस बार और फूल तो खिलखिला ही रहे थे, सेमल दहके हुए थे। नई दिल्ली में सड़कों के आसपास सेमल के अनेक वृक्ष हैं। वे दहके हुए थे। आसपास का आकाश लालिमा में रंजित हो उठा था। क्या विडंबना है कि वसंत के समारोह में भाग लेने के लिए इन पेड़ों के अंग-अंग से उल्लास फूट पड़ता है। लगता है जैसे वे अपना सर्वस्व न्योछावर कर रहे हैं, किंतु उनके इतने सुंदर लाल-लाल फूलों को महक नहीं मिलती और किसी निर्गुण सुंदर व्यक्ति के लिए यह व्यंग्योक्ति प्रयुक्त होती है, अरे यह तो सेमल का फूल है। मुझे सेमल पर लिखी गई अपनी एक कविता याद आ गई। वसंत से सेमल कह रहा है—

प्रिय
तुम आए तो मैं हाड़-हाड़ फोड़कर
तुम्हारे लिए फूट पड़ा
और मेरा सारा रक्त फूल बनकर दहकता रहा
अब इसमें मेरा क्या कसूर
कि मेरे सर्वस्व समर्पण को भी
तुम अपनी गंध नहीं दे सके
और औरों का अधूरा समर्पण भी
तुम्हारी दी हुई साँस से महकता रहा

१५.३.१५, फिल्म-निर्माण

कल का दिन बहुत व्यस्त रहा। साहित्य अकादमी के लिए राखी ठाकुर मेरे ऊपर एक फिल्म बना रही हैं। परसों उनका फोन आया कि कल वे मेरे घर आकर शूटिंग करना चाहती हैं। मुझे आश्वस्त किया कि आपको परेशानी होने नहीं दूँगी, किंतु अपने ऊपर बनी कई फिल्मों के अनुभव से जान गया था कि कल का पूरा दिन मुझे चैन लेने नहीं देगा। मैं तो चाहता रहा कि वे मेरे घर रविवार को आएँ, उस दिन छुट्टी होने के नाते कई मित्र बाइट देने के लिए आसानी से आ सकते हैं। मुझे चिंता

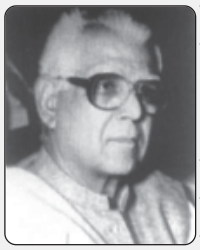

हिंदी के मूर्धन्य कवि-साहित्यकार, जिन्होंने साहित्य की अनेक विधाओं को अपने रचनात्मक अवदान से समृद्ध किया। 'जल टूटता हुआ' और 'पानी के प्राचीर' उपन्यासों की धूम रही। अभी हाल में कविता-संग्रह 'आम के पत्ते' व्यास सम्मान से अलंकृत। इसके अतिरिक्त भी अनेक विशिष्ट सम्मानों से सम्मानित।

इस बात की भी थी कि पुत्री स्मिता भी, जिसकी बाइट अनिवार्य है, कॉलेज में ही रहेगी। किंतु राखीजी की कोई विवशता रही होगी, जिसके नाते उन्होंने कल का दिन रखा। उन्होंने कहा था कि वे साढ़े नौ बजे तक आ जाएँगी, लेकिन पौने नौ बजे ही आ गई और कार्य शुरू हो गया। उनके साथ मैथिली के विशिष्ट लेखक रवींद्रनाथ ठाकुर भी थे। वे निर्देशन कर रहे थे। सबसे पहले मेरे आँगन को सजाया गया। यानी वहाँ जो फूलों के गमले थे, उन्हें शूटिंग के लिहाज से यहाँ से वहाँ और वहाँ से यहाँ किया गया। काफी देर तक यह कार्य चला। फिर मुझे आँगन वाटिका में बैठाकर शूटिंग का कार्य शुरू किया। कुरसी पर बैठकर मुझे कुछ आत्मालाप करना था। किया। मन में जो आया, बोलता गया। कोई प्रश्न तो किया नहीं गया कि मैं उसके अनुकूल उत्तर देता। लेकिन मेरे आत्मालाप को रवींद्रनाथ ठाकुर ने खूब सराहा। मैं कुछ कह ही रहा था कि अंदर से विवेक झाँकते हुए दिखाई पड़ गए। अरे, यह कैसे आ गया। यह तो मुंबई में था। एकाएक बिना किसी सूचना के यहाँ कैसे! बाद में ज्ञात हुआ कि मुंबई में उसकी शूटिंग नहीं थी और कल सागरिका ने फोन से उसे सूचित कर दिया था कि कल पापाजी की शूटिंग के लिए टीम आ रही है। अत: चुपचाप सुबह का विमान पकड़ा और अप्रत्याशित रूप से यहाँ उदित हो गया। उसके आने से सबको प्रसन्नता तो होनी ही थी, कुहू तो मगन हो गई।

उसी समय मेरे प्रिय प्रताप सहगल आ गए। कुछ देर बाद उनका बाइट लिया गया। एक दृश्य निर्मित किया गया, जिसमें पौत्री मेरा हाथ पकड़कर सीढ़ियों पर से नीचे ला रही है। यानी नई पीढ़ी पुरानी को सहारा देकर आगे-आगे चल रही है। नीचे आने पर उसने कहा, 'दादाजी, कुछ सुनाइए न।' मैं अपने गीत की एक पंक्ति गुनगुना उठा—

'अजिर में शिशु से नया रस घोलते हैं ये अबोले फूल कितना बोलते हैं।'

इस फिल्म मेकिंग में एक कार्यक्रम था संवाद का। इसके लिए अलका सिन्हा को आना था। वे मनु के साथ समय से आ गई थीं। कैमरा अब आँगन से मेरे ड्राइंग-रूम में आ गया था। कुछ देर तक अलका से बातचीत हुई। उन्होंने कुछ आत्मीय, कुछ साहित्यिक प्रश्न किए। प्रश्नों के साथ मेरे और मेरे साहित्य के बारे में अपना मत व्यक्त करती गई। रवींद्रनाथजी का सुझाव था कि वह मेरा आत्मालाप हो या संवाद, कविता की पंक्तियाँ आती रहनी चाहिए—

कभी खुलकर कभी गुनगुनाहट के रूप में।

तो यह क्रम चलता रहा। अलका मेरी कुछ कविताओं की ओर इशारा करती रहीं।

कुछ समय के पश्चात् फिर बाइट का काम शुरू हुआ और विवेक तथा सरस्वतीजी से बाइट ली गई। मध्याह्न भोजन का समय हो गया था। उसे संपन्न करना ही था। राखी ठाकुर, रवींद्रनाथ ठाकुर, अलका, मनु के साथ भोजन करना भी एक समारोह जैसा प्रतीत हुआ। सागरिका के सहयोग से सरस्वतीजी ने काफी मन से भोजन तैयार किया था, वैसे वे हमेशा मन से ही और उत्साह से ही अतिथियों का स्वागत करती हैं। उन्हें खिलाने-पिलाने में उन्हें बहुत आनंद आता है। उससे बाहर के लोगों में मेरी भी छवि निखरती है।

अब बारी थी किसी उद्यान में जाकर शूटिंग करने की। पास का छोटा सा उद्यान तो उजाड़ सा लगता है और वह ताशियों से ऊपर-नीचे भरा रहता है, अत: शू मार्केटवाले उद्यान में चलने का मन बनाया गया।

राधेश्याम तिवारी भी आ गए थे। वे भी साथ हो लिये। बहुत दिनों बाद इस उद्यान में गया था। पता नहीं था कि अब इसका क्या रूप हो गया होगा। पता नहीं इसमें वसंत की छवि कहीं दिखाई पड़ेगी कि नहीं। किंतु पहुँचने पर प्रसन्न हो गया। वैसे पूरे उद्यान में पेड़ों की छवि तो थी, किंतु एक हिस्से में वसंत की छवि व्याप्त थी—लाल-लाल फूलों और लतिकाओं के रूप में। बहुत दिनों बाद एक हिस्से में खड़ा पीपल का पेड़ भी देख रहा था, जो अपने तने में काफी संश्लिष्ट हो गया था और उसके नीचे कुछ धार्मिक क्रिया-कलाप हो रहे थे। लोगों को प्रकृति के सौंदर्य से वास्ता नहीं होता, उससे विमुख होकर उसके भीतर धर्म के नाम पर कुछ स्थापित कर देते हैं और कर्मकांड चलता रहता है।

तो हम उद्यान के उस क्षेत्र से वावस्ता हुए, जहाँ प्रकृति का उल्लास ढाठें मार रहा था। अलका सिन्हा, मनु सिन्हा, राधेश्याम तिवारी के साथ घूमते हुए और बातचीत करते हुए मुझे फिल्माया जा रहा था। अकेले भी चहलकदमी कराई गई। वहाँ शूटिंग का कार्य संपन्न करके हम फिर अपने आवास पर आ गए। देखा, भाई नरेंद्र मोहन और डॉ. गुरचरण बैठे हुए हमारी प्रतीक्षा कर रहे थे। आत्मीय बातें होती रहीं। फिर बारी-बारी से डॉ. गुरचरण तथा डॉ. नरेंद्र मोहन के बाइट लिये गए। अपना कार्य संपन्न करके वे लोग चले गए। मुझमें थकान भरती चली जा रही थी। पल भर को भी देह सीधी करने का अवसर नहीं मिला। यद्यपि अब मेरी भूमिका कुछ देर के लिए नहीं प्रतीत हो रही थी, फिर भी यह सोचकर आराम नहीं कर रहा था कि पता नहीं कब मेरी पुकार हो जाए। जाकर आँगन में खाट पर बैठ गया। अब शॉल ओढ़े हुए था। कैमरे ने देखा और मुझे इस रूप में देखकर मेरे आगे घूम गया और सरस्वतीजी तथा कुहू को मेरे पास बिठाकर मुझ पर टिक गया।

कुछ देर पश्चात् बारी-बारी से सरस्वतीजी, विवेक और सागरिका के बाइट लिये गए। उसके पश्चात् टीम मेरे ड्राइंग-रूम में आ गई। सोचा अब समापन है, लेकिन अभी कहाँ, फरमाइश आई कि मैं अपनी कुछ कविताएँ रिकॉर्ड कराऊँ, जिनमें कुछ एकदम नई हों। सुनाना ही था सुनाता गया। पास बैठी सागरिका इस-उस कविता की फरमाइश करती रही। मुझे भी रस आने लगा था।

इसके बाद मेरी और राखीजी की भूमिका संपन्न हो गई। वे और रवींद्रनाथजी विदा लेकर चले गए, लेकिन अभी मेरे ड्राइंगरूम की हलचल बंद नहीं हुई थी। अब कमरे में मेरी पुस्तकें फैली थीं और यहाँ-वहाँ से सम्मान में प्राप्त कैमरामैन अपने सहायकों के सहयोग से इन्हें कैमरे में उतारते रहे। अत: अभी भी निश्चिंत होकर मेरे आराम करने का समय नहीं आया था। मेरा लिखना-पढ़ना, सोना सब इसी कमरे में तो होता है। अत: जब दस बजे यह सारा कार्य संपन्न करके कैमरा मैन तथा अन्य चले गए, तब मुझे अपने तख्त पर पसरकर आराम करने का अवसर मिला। देह में थकान तो खूब भर गई थी, किंतु यह थकान एक सुखद प्रतीति से भी तो भरी थी। अफसोस यही रहा कि बेटी स्मिता बाहर रहने के कारण कैमरे के सामने नहीं आ सकी।

२३.३.१५, फिल्म की शूटिंग, दूसरा दौर

कल शूटिंग का दूसरा दौर था, लेकिन दिल्ली से दूर सोहना झील के पास के एक गाँव में। मुझे लगा कि इतनी दूर शूटिंग के लिए बुलाया जा रहा है तो कोई अद्‌भुत प्राकृतिक परिवेश होगा। यद्यपि देह में टूटन थी और सिरदर्द भी चल रहा था, किंतु अपने को तैयार इसलिए कर लिया कि काफी दिनों बाद खेतों के बीच से गुजरूँगा और अंत में अपने को सुंदर प्राकृतिक सौंदर्य के बीच पाऊँगा। सुबह-सुबह यात्रा पर निकल जाना सुविधाजनक होता, यानी कि धूप की कृपा से बचाव हो जाता, किंतु फरीदाबाद से भाई प्रकाश मनु को आकर साथ चलना था। अत: प्रस्थान का समय साढ़े नौ बजे रखा गया था। साढ़े नौ बजे टैक्सी आ गई और प्रकाश मनु भी नौ तक आ गए थे। साढ़े नौ बजे श्रीमती राखी ठाकुर को फोन कर दिया कि हम लोग अब घर से चल रहे हैं। गाड़ी जिस गति से और निरवरोध रूप से जा रही थी, उससे तो यही प्रतीत हुआ कि हम डेढ़ घंटे में यानी ग्यारह बजे गंतव्य पर पहुँच जाएँगे, यद्यपि गंतव्य स्थान का ठीक-ठीक पता नहीं था।

दिल्ली से बाहर निकलने के बाद एक जगह भयानक जाम का सामना करना पड़ा। यह वह जगह थी, जहाँ टोल टैक्स के कई कमरे बने थे। अब टोल टैक्स तो बंद कर दिया गया, लेकिन कमरों के खँडहर वर्तमान थे पथावरोध किए हुए। करीब तीस-चालीस मिनट के पश्चात् हम उस जाम से निकल पाए। सोहना वाली सड़क पर आ गए तो राखीजी को सूचित कर दिया गया, इस खयाल से कि गढ़ी मुरली के पास आकर

उनके आदमी हमारी प्रतीक्षा कर लें। चलते-चलते हम गढ़ी मुरली भी पहुँच गए और उम्मीद थी कि वहाँ कोई व्यक्ति हमारी प्रतीक्षा कर रहा होगा। वहाँ कोई नहीं था। मैंने फोन करके राखीजी को सूचित कर दिया कि हम गढ़ी मुरली पहुँच गए हैं। हम गाड़ी में से बाहर निकलकर आदमी का इंतजार करने लगे। हमने सोचा था कि गंतव्य यहाँ से पास ही होगा, दो चार मिनट में कोई आ जाएगा, लेकिन आधा घंटा बीत जाने पर भी कोई नहीं आया। हम जहाँ थे वहाँ और उसके आसपास छाँह नहीं थी। हम धूप में तप रहे थे। मैं तो कुछ अस्वस्थ था ही, मनुजी का चेहरा धूप से आक्रांत हो रहा था। स्मिता मनुजी का चेहरा देखकर घबरा गई और गुस्से में आ गई। जब वहाँ से कार आई, तब हमारी कार उसके पीछे-पीछे चल पड़ी और ज्ञात हुआ कि गंतव्य स्थान गढ़ी मुरली से काफी दूर था। जब हम वहाँ पहुँचे तो स्मिता का गुस्सा फूट पड़ा। खैर, कुछ देर बाद एसी बस सामने आई। हम लोगों ने उसमें बैठकर कुछ आश्वस्ति प्राप्त की। कुछ सहज हुए तो शूटिंग के लिए प्रस्तुत हुए।

हम समझे थे, इतना दूर इसलिए बुलाया गया है कि यहीं कुछ अनुपम प्राकृतिक परिवेश होगा, किंतु यह तो एक मामूली सा गाँव निकला। मैंने यहाँ पहुँचते ही राखीजी से पूछा था—आपको क्या दिल्ली के आसपास कोई गाँव नहीं मिला। राखीजी ने बताया कि गाँव तो हैं, किंतु गाँव वाले शूटिंग में तरह-तरह से विघ्न डालते हैं। इस गाँव के लोग हमें पूरा सहयोग देते हैं, इसलिए इतनी दूर के इस गाँव को शूटिंग के लिए चुन रखा है।

भिन्न-भिन्न कोणों से भिन्न-भिन्न रूपों में हमें चलाया गया। भिन्न-भिन्न रूपों में बैठाया गया। पहले बेटी स्मिता से संवाद कराया गया, फिर प्रकाश मनु से। संवाद के पश्चात् डॉ. मनु ने बाइट दिया। फिर हमें टहलाकर दूसरे स्थान पर ले जाया गया, जहाँ स्मिता ने बाइट दिया। सब कुछ बहुत अच्छा हुआ। राखीजी, रवींद्रनाथजी दोनों बहुत प्रसन्न और आश्वस्त दिखे। हम तो प्रसन्न और आश्वस्त थे ही। बस एक परेशानी होती रही, वह थी मक्खियों की परेशानी। गाँव के एक खुले भाग में शूटिंग हो रही थी तो मक्खियों को होना ही था। एक आदमी बार-बार ब्लैक हिट मार रहा था, लेकिन खुले में ब्लैक हिट कितना कारगर होता। भोजन करते समय भी मक्खियों का आतंक मचा रहा। खाना खाया जाए या मक्सियों से उसे बचाया जाए, यह द्वंद्व चलता रहा। बहरहाल दोपहर वाली थोड़ी परेशानी के बावजूद सबकुछ प्रीतिकर रहा। ५ बजे पारस्परिक उल्लास के साथ हमने एक-दूसरे से विदा ली।

२४.३.२०१५, जाना प्रधानमंत्री के यहाँ

डॉ. सी.पी. ठाकुर अंतरराष्ट्रीय दिनकर अकादमी के अध्यक्ष हैं। परसों उनका फोन आया। पूछा कैसे हैं आप? 'स्वस्थ नहीं हूँ।' मैंने कहा। तो बोले, 'मैं ही आता हूँ।' वे आए और कहा, 'कल प्रधानमंत्री ने मिलने का समय दिया है तीन और चार बजे के बीच। वहाँ चलना है और दिनकरजी की स्मृति में सरकार कुछ करे, यह निवेदन करना है।' 'परशुराम की प्रतीक्षा' और 'संस्कृति के चार अध्याय' दोनों के पचास वर्ष हो गए हैं, अत: उनके बहाने दिनकर की स्मृति में कुछ होना चाहिए। 'क्या होना चाहिए' यह स्पष्ट नहीं था। उनके साथ एक वृद्ध सज्जन थे, जिनका मन था कि दिनकरजी को भारतरत्न मिलना चाहिए। मैंने मन-ही-मन कहा कि यह विचार तो बहुत अच्छा है। यदि क्रिकेट प्लेयर (जो लोकहित में कुछ नहीं करता) को भारतरत्न दिया जा सकता है तो किसी बड़े साहित्यकार को क्यों नहीं ३ बड़े साहित्यकार का साहित्य तो देश की संस्कृति, लोकजीवन की बाहरी-भीतरी छवियों, समस्याओं, संघर्षों, मूल्यों का दस्तावेज होता है। वह हमारी संवेदना और मूल्य चेतना को समृद्ध करता है। वह हमें जीने का सलीका समझाता है। लेकिन यदि किसी दिवंगत साहित्यकार को भारत रत्न मिलता है तो दिनकरजी से पूर्व कई बड़े साहित्यकार हैं, पहले उनका हक बनता है। कल प्रधानमंत्री के सामने क्या माँग करनी है यह स्पष्ट नहीं हो रहा था। तब मैंने बेटी स्मिता को आवाज दी। वह आई। उसने बहुत ही सहज भाव कुछ माँगों की सूची बना दी। उनमें मुख्य दो थे—एक तो दिनकरजी के नाम से कोई बड़ा पुरस्कार प्रदान किया जाए, दूसरे उनकी स्मृति में एक पुस्तकालय का निर्माण किया जाए जो शोध संस्थान भी हो। सभी लोग प्रसन्न हो गए और ठाकुर साहब ने कल के लिए बेटी को भी निमंत्रित कर दिया।

कई लोग प्रधानमंत्री को अपनी अपनी पुस्तकें देने के लिए टूट पड़े। प्रधानमंत्री इनसे घिर गए। मैं और आलोक मेहता जी बुदबुदाते रहे, 'अरे यह क्या हो रहा है। प्रधानमंत्रीजी को बोलने देना चाहिए। इन महान साहित्यकारों को प्रधानमंत्रीजी का व्याख्यान सुनने की अपेक्षा अपनी-अपनी पुस्तकें उन पर लादना ज्यादा महत्त्वपूर्ण लग रहा है।' बहरहाल कुछ देर बाद जब इन पुस्तकवालों का ज्वार थमा, तब प्रधानमंत्रीजी कुछ बोले। महत्त्वपूर्ण बोले।

दूसरे दिन १ बजे के आसपास डॉ. सी.पी. ठाकुर के यहाँ से कार आई। हम वहाँ पहुँचे तो देखा, वहाँ कई लोग बैठे हुए हैं। हिमांशु जोशी, पद्मा सचदेव, श्यामसिंह शशि, आलोक मेहता, विंदेश्वरी पाठक, विनोद बब्बर, डॉ. राहुल इस जमात में विद्यमान थे। तीन बजे के करीब कारवाँ प्रधानमंत्री निवास की ओर रवाना हुआ और वहाँ पहुँचकर हम अनेक औपचारिकताओं से टकराते हुए अंत में गंतव्य कक्ष में पहुँच गए। चार बजे प्रधानमंत्रीजी पधारे। डी.सी.पी. ठाकुर ने दो मिनट में कुछ औपचारिक शब्द कहे। फिर मुझसे कुछ कहने के लिए कहा गया। दो मिनट में मैंने दिनकर के बारे में कुछ कहा और उनकी स्मृति में सरकार को क्या करना चाहिए, यह बताया। वही बताया, जो बेटी स्मिता ने प्रस्तावित किया था। बहुत दुखद आश्चर्य हुआ यह देखकर कि मेरे बोलने के पश्चात् ही कई लोग प्रधानमंत्री को अपनी-अपनी पुस्तकें देने के लिए टूट पड़े। प्रधानमंत्री इनसे घिर गए। मैं और आलोक मेहताजी बुदबुदाते रहे, 'अरे यह क्या हो रहा है। प्रधानमंत्रीजी को बोलने देना चाहिए। इन

महान् साहित्यकारों को प्रधानमंत्रीजी का व्याख्यान सुनने की अपेक्षा अपनी-अपनी पुस्तकें उन पर लादना ज्यादा महत्त्वपूर्ण लग रहा है।' बहरहाल कुछ देर बाद जब इन पुस्तकवालों का ज्वार थमा, तब प्रधानमंत्रीजी कुछ बोले। महत्त्वपूर्ण बोले।

उसके बाद प्रधानमंत्रीजी हमारे साथ जलपान स्थल तक गए और जलपान का आनंद लेने का निवेदन करके चले गए।

जलपान स्थल तक उनके आने की प्रक्रिया में कई चिपकू व्यक्ति अपनी आदत के अनुसार उनसे चिपके रहे और संवाद बनाने की कोशिश करते रहे, किंतु प्रधानमंत्रीजी तो मौन रहे।

२९.४.१५, विश्वास जिंदा है

विद्युत्कर्मी सरदार रवींद्र सिंह मेरे यहाँ कुछ काम करने आए। वे बहुत खुशदिल हैं और मैं भी खुशदिल व्यक्ति हूँ। अत: जब वे आते हैं, तब पारिवारिक जन की तरह हम लोग हँस-हँसकर बातें करते हैं, लतरानियाँ भी छेड़ते हैं, किंतु आज जब वे आए तो मुझे देखकर देखते ही रह गए। उन्होंने पूछा, 'क्या बात है, आज इतने उदास और खोए-खोए से क्यों हैं। आपको क्या तकलीफ है?'

'नहीं, कोई बात नहीं रवींद्र।'

'नहीं अंकलजी, कुछ बात तो है।'

जब उसने काफी जिद की तो मैंने कहा, 'भई, अपनी कोई तकलीफ नहीं है। अखबार में यों तो फरेब, विश्वासघात और हत्याओं की खबरें रोज छपती ही रहती हैं, रोज ही सुबह-सुबह मन खिन्न हो उठता है, लेकिन आज कुछ ज्यादा ही बुरी खबरें थीं। मैंने तो उस जमाने में बचपन और यौवन बिताया है, जो विश्वास और भाईचारा से दीप्त था। मैं १६-१७ साल की अवस्था में बारह कोस दूर बरहज पढ़ने जाता था, कभी कहीं कोई खतरा महसूस नहीं हुआ, कभी रास्ते में अपने साथ या किसी अन्य के साथ लूटपाट, मार-धाड़ की घटना नहीं घटी। किंतु आज समय को क्या हो गया है। अविश्वास और दहशत से भर गया है।'

'आप सही कहते हैं अंकलजी, लेकिन इसी अंधकार में कहीं-कहीं प्रकाश भी दिखाई पड़ जाता है।'

'तुम ठीक कहते हो। मैं तो साहित्यकार हूँ और महसूस करता हूँ कि अखबार जो दिखा रहे हैं, वह पूरा सच नहीं है। जो दिखा रहे हैं, उससे अलग भी एक सच है, मूल्य का सच और साहित्यकार उसी सच को गली-कूचों में, आम आदमियों के बीच खोजता फिरता है और अपने साहित्य में उसे उजागर करता है। फिर भी रोज-रोज अखबार पढ़कर मन खट्टा तो हो ही जाता है। लगता है कि कहीं भी, कोई भी छल-कपट कर सकता है। फिर भी जीने के लिए विश्वास का सहारा तो चाहिए ही और उसे अपने मन में जलाए रखना चाहिए।'

'अंकलजी, आप ठीक कह रहे हैं। अखबार में दिखाया गया सच पूरा सच नहीं है। मैं अपनी एक घटना आपको सुना रहा हूँ। मेरठ के पास एक गाँव में मेरा संबंधी रहता है। उसका फोन आया कि मैं उसके गाँव पहुँच जाऊँ। बिजली का ढेर सारा काम है यहाँ। मैं वहाँ के लिए चला तो रास्ते के एक गाँव में ही शाम हो गई। उस गाँव से गुजर रहा था कि एक घर के सामने पेड़ के नीचे बैठे हुए एक रोबीले से बुजुर्ग आदमी ने कहा, 'कौन हो और कहाँ जा रहे हो?'

'मैं तो डर गया अंकलजी कि पता नहीं यह कौन है और क्या चाहता है। फिर भी बोलना तो था ही। बताया कि हम दिल्ली से आ रहे हैं और वीरपुर गाँव जा रहे हैं अपने संबंधी के यहाँ।

'अरे बेटे, वह गाँव तो यहाँ से १२ किलोमीटर दूर है। इस रात में आगे जाना खतरनाक हो सकता है। यहीं रुको, खाना-वाना खाओ, कल सुबह चले जाना।' शुक्रिया बाबाजी, आपके प्यार के लिए, लेकिन हम दो व्यक्ति हैं, चले जाएँगे।'

'तो पहला भय प्यार में बदल गया और हमें राहत मिली। आगे बढ़े। कुछ दूर जाने के बाद दूधवालों की गाड़ी पीछे से आई और हमें देखते ही गाड़ी रोक दी गई। उसमें तीन हट्टे-कट्टे आदमी थे। हमने सोचा, तब नहीं तो अब सही। ये जरूर हमारे साथ कुछ करेंगे। लेकिन ड्राइवर ने प्यार से पूछा, 'कहाँ जाओगे सरदारजी।' मैंने बताया तो उसने कहा, 'अरे इतनी रात को इतनी दूर पैदल जाओगे। आओ बैठ जाओ मेरी गाड़ी में।' मैं तुम्हें तुम्हारे गाँव से ५ किलोमीटर पहले उतार दूँगा।' हम बैठ तो गए लेकिन जी धुक-धुक कर रहा था। गाड़ी एक जगह रुक गई। ड्राइवर बोला, 'अब हमें दूसरी ओर जाना है। आप लोग उतर जाओ।'

उतर गए और उसे शुक्रिया अदा किया। कुछ दूर जाने के बाद एक कार हमारे सामने आकर खड़ी हो गई। हमने सोचा—अब तक तो हमारे डर के बावजूद अच्छे लोग मिलते आ रहे हैं, किंतु अब जरूर कुछ होगा। इसमें जरूर कुछ बदमाश लोग बैठे होंगे।

ड्राइवर लड़के ने पूछा, 'कहाँ जाओगे तुम लोग।'

'हमें वीरपुर गाँव में जाना है।'

'किसके यहाँ?'

'सरदार करतार सिंह के यहाँ।'

'तो आओ गाड़ी में बैठ जाओ, मैं तुम्हें तुम्हारे गाँव पहुँचा दूँगा।'

'नहीं भाई, हम पैदल चले जाएँगे।'

'अरे पागल हो गए हो। इतनी रात को पाँच किलोमीटर पैदल जाओगे? आओ गाड़ी में बैठो। करतार सिंह तो मेरी जान-पहचान का आदमी है।'

मन मारकर हम बैठ गए। और कार ने हमें वीरपुर गाँव में ले जाकर छोड़ दिया और फिर वापस लौट पड़ी।

पता नहीं उन्हें कहीं जाना था। अपने गंतव्य पर जाने से पहले वे हमें छोड़ गए। उनकी सज्जनता के आगे हम नत हो गए और एक मानवीय मूल्य का सहज साक्षात्कार करने से हमारा मन महकने लगा। और इस क्रूर समय में भी आदमियत के प्रति विश्वास घना हो गया।

२९.११.२०१५, पर्यावरण पर एक किताब

कल पर्यावरण पर लिखित कविताओं का एक अच्छा सा संकलन 'काव्य चयनिका' प्राप्त हुआ। संपादन किया है केरल के डॉ. प्रमोद कोवप्रत ने। आज पूरे देश में पर्यावरण के दूषित होने, मनुष्य द्वारा प्रकृति

के आहत होने की चिंता व्याप्त है। आदमी अंधाधुंध रूप से प्रकृति का विनाश कर अपने विनाश को आमंत्रित कर रहा है। अपने छोटे-छोटे व्यक्तिगत स्वार्थ की पूर्ति के लिए उन प्राकृतिक रूपों को ध्वस्त कर रहा है, जिन्हें हमारे पूर्वजों ने सामाजिक हित के लिए निर्मित किया-कराया था। शहर तो यांत्रिक उपादानों से मलिन हो ही रहा है और निरंतर हमारी साँसों में धुआँ घोल रहा है। गाँव भी अपने ढंग से स्वार्थन्यस्त होकर प्राकृतिक देनों से छेड़छाड़ कर रहा है। उपर्युक्त पुस्तक में संकलित कविताएँ इसी दर्द से गुजरी हैं। मैं तो शहर और गाँव दोनों में व्याप्त होते हुए पर्यावरण-प्रदूषण देख रहा हूँ।

काफी समय बाद कुछ दिन पहले गाँव गया था। गोर्रा नदी के पास पहुँचा तो उसे देखकर दंग रह गया। उसका बहता हुआ पानी ठहरकर बजबजा रहा था। लगता था कि यह कोई नदी नहीं, कोई गंदा तालाब है। रास्ते के दोनों ओर फसलें लहलहा रही थीं, किंतु पेड़ों की सघनता विरलता में बदल गई थी। गाँव के पास पहुँचा तो देखा, गाँव के तीनों बाग उजड़ चुके थे और वे खेत बन गए थे। ज्ञात हुआ कि पाँच वर्ष पहले आई बाढ़ सारे पेड़ों को निगल गई। महसूस हुआ कि जिनके पेड़ थे, उन्हें पेड़ों के सूख जाने का दर्द नहीं था बल्कि प्रसन्नता थी कि खेती करने के लिए उन्हें थोड़ी और जमीन मिल गई। फिलहाल तो फसलें लहलहा रही हैं, इसलिए सूनापन नहीं लग रहा है, किंतु जब खेत कट जाते होंगे तो एक सन्नाटा भाँय-भाँय करने लगता होगा।

गाँव से सट कर उत्तर ओर एक बड़ी पोखरी थी। उससे होकर बाढ़ का पानी आता था और खेतों की ओर बह जाता था। बाढ़ के लौट जाने पर वह पानी से लबालब भरी होती थी। रबी की फसल की सिंचाई होती थी उसके पानी से। उसमें खूब मछलियाँ पलती थीं और एक दिन लोग मछली मारने के लिए टूट पड़ते थे। चैत में दँवरी से छूटकर प्यासे बैल पोखरी की ओर भागते थे और जल पीकर तृप्त होते थे। जब मैं गाँव में था, तभी देखता था कि कुछ सरहँग लोग अपने आगे की पोखरी को पाटकर उस पर निजी कब्जा बनाते जा रहे थे। इस बार देखा कि पोखरी पट सी गई है। सार्वजनिक निधि व्यक्तिगत होती चली गई है।

छोटकी बारी के पास एक पोखरा था। उसे मलगड़ही बोलते थे। पता नहीं यह नाम क्यों पड़ा। लेकिन इसके साथ मेरी कितनी ही स्मृतियाँ जुड़ी हुई हैं, प्यारी भी और डरावनी भी। इसमें बाढ़ लबालब पानी छोड़ जाती थी। मैं और भाई रामनवलजी घास लेकर आते थे और इसके पानी में धोते थे। फिर तैर-तैर कर नहाते थे। हाँ, बाढ़ के पानी में ही मैंने तैरना सीखा था। तो मलगड़ही के पानी में हम नहाते तो थे, किंतु बालमन में न जाने कितने डर भर दिए गए थे। लोगों का कहना था कि उसमें बुड़वा रहता है। कोई इसमें डूबकर मरा है, वही बुड़वा बन गया है। इसलिए हम लोग अकेले नहीं, कई-कई दोस्त साथ नहाते थे तथा बहुत गहराई की ओर नहीं जाते थे। पानी में पत्थर फेंककर उसे खोजकर निकालने का खेल खेलते थे। मलगड़ही के एक ओर बाग था और एक बँसवारी भी। दूसरी तरफ इमली का बड़ा सा पेड़ था। लोगों का कहना था कि इमली के पेड़ पर भूत रहता है, दूसरी ओर बँसवारी में चुड़ैलें रहती हैं। बाग में मरे हुए शिशुओं को गाड़ा गया है, वे गड़ंत भूत बन गए हैं। बाग के एक पेड़ पर कोई देवी रहती हैं। यानी कि जल और पेड़ सभी भुतहे थे।

छोटकी बारी के पास एक पोखरा था। उसे मलगड़ही बोलते थे। पता नहीं यह नाम क्यों पड़ा। लेकिन इसके साथ मेरी कितनी ही स्मृतियाँ जुड़ी हुई हैं, प्यारी भी और डरावनी भी। इसमें बाढ़ लबालब पानी छोड़ जाती थी। मैं और भाई रामनवलजी घास लेकर आते थे और इसके पानी में धोते थे। फिर तैर-तैर कर नहाते थे। हाँ, बाढ़ के पानी में ही मैंने तैरना सीखा था। तो मलगड़ही के पानी में हम नहाते तो थे, किंतु बालमन में न जाने कितने डर भर दिए गए थे। लोगों का कहना था कि उसमें बुड़वा रहता है। कोई इसमें डूबकर मरा है, वही बुड़वा बन गया है। इसलिए हम लोग अकेले नहीं, कई-कई दोस्त साथ नहाते थे तथा बहुत गहराई की ओर नहीं जाते थे।

एक आदमी तो यह बता रहा था कि वह देर रात को कहीं से आ रहा था तो देखा, बँसवारी से निकलकर चुड़ैलें नाच रही हैं, भूत बाजा बजा रहे हैं। किसी ने कहा कि रात को उसने इमली के पेड़ की डाल पर बैठे भूत को देखा, जब मुझमें कुछ समझ आई तो लगा कि कुछ लोग मजा लेने के लिए भूत-प्रेत की कहानियाँ गढ़ते रहते हैं। जो भी हो, मलगड़ही का पानी खेतों की सिंचाई के काम भी आता था। यही स्थिति डीह पर के पोखरे की थी। वह गाँव से एक किलोमीटर की दूरी पर सुनसान में था। उसके किनारे सेमल का बड़ा सा पेड़ था और लोगों का कहना था कि उस पर एक जाबिल नट रहता है। इस पोखरे में भी बुड़वों के होने की कहानी कही जाती थी। कहानी तो कहानी थी, किंतु वास्तविकता यह थी कि इस या उस तालाब का पानी फसलों की सिंचाई करके गाँव को जीवन देता था। पशु-पक्षियों के नहाने और पीने के काम आता था। यानी कि ये तालाब सार्वजनिक निधियाँ थे, जिन्हें हमारे मूल्यधर्मी पूर्वजों ने खुदवाया था। अब धीरे-धीरे ये तालाब पट गए, यानी कि पाट दिए गए। जिन लोगों की जमीन में ये ताल थे, वे लोग अब उसमें खेती करने लगे। पर से स्व हो गया। अब गाँव खेत सींचने के लिए जमीन का दोहन करने लगे। यानी धरती अब भीतर-ही-भीतर सूखती चली जाएगी। और एक दिन जो अप्रिय होना है, होकर रहेगा। हाँ अब पेड़ नहीं रहे, तालाब नहीं रहे तो काल्पनिक भूतों का डर खत्म हो गया है। अब तो जीवंत पिशाच दिखाई पड़ रहे हैं।

आर-३८, वाणी विहार
उत्तम नगर, नई दिल्ली-११००५९
दूरभाष : ९२११३८७२१०

चार रुपए बीस पैसे

● तुलसी देवी तिवारी

पूरी रात डी.जे. पर गाने बजते रहे थे। भंडारा था सुराज पासवान के घर। उसके लड़के राजेश का सलेक्शन उ.प्र. पुलिस में हो गया था। नया-नया आया था पुलिस की वरदी पहनकर। गर्व से भर उठा था सुराज। वह तो जेल में वार्डन ही रह गया, बेटे ने मान बढ़ाया। सभी रिश्तेदारों को बुला लिया था उसने। चार बहन-बेटियाँ, नई-पुरानी सब आई थीं। पहले दिन सत्यनारायण भगवान् की कथा हुई। देर रात तक भजन होता रहा, फिर नाच प्रारंभ हो गया। सुराज का इकलौता भानजा दीपक भी पुलिस में भरती हो गया था। दोहरी खुशी थी।

जेठ की जान लेवा गरमी। दिन भर जैसे आग बरसाता हो आसमान, खेतों में दूर तक हरियाली का नामोनिशान तक नहीं। अहीरों के जानवर न जाने कैसे खेतों की सूखी मेंड़ों पर हरित तृण ढूँढ़ लेते हैं, दिन भर डोलते रहते हैं इधर से उधर। गाँव के उत्तर की ओर आम-महुए की बारी है, चरवाहे वहीं लाठी टेके बैठे रहते हैं। कभी बिरहा की तान, कभी ताश की बिसात। नई-पुरानी बतकही। इन्हें तो जैसे एहसास ही नहीं होता इस भीषण गरमी का। घरों घर काज-परोजन पड़े हैं। किसी के यहाँ ब्याह-गवन तो किसी के यहाँ भागवत-भंडारा। पलक मारने की फुरसत नहीं उदय को। लगातार चक्की का धड़-धड़ बजता शोर, तपती छत। पड़ोस में बजता डी.जे. कब तक अच्छा लगे किसी को। दस बोरे पीसकर खाली नहीं हुआ कि दस और गँज गए। 'भइया, तोहरे बिटिया के बिआह बा। परसों बारात होये। पिसान पीस देह रचि क।' दाँत निकालकर विनय करते लोग।

'ठीक है, पीसने के लिए तो बैठे ही हैं। पीसेंगे नहीं तो बिजली का बिल, पूरे घर का खर्च कैसे चलेगा?' वैसे तो दोनों भाई सिक्यूरिटी गार्ड की नौकरी में हैं। दस-दस हजार लेकर आते हैं महीने में। उसे भी तो निकालना चाहिए कुछ-न-कुछ। उसने एक लंबी साँस ली। कब सुबह का धुँधलका फैलने लगा, उसे पता भी नहीं चला। बार-बार चक्की में गेहूँ डालते, कपड़े की थैली सीधी करते, आटा देखते रात गुजर गई। वह तो हवा में आई सुहानी सी ठंडक ने पसीने में डूबे जिस्म का जब हौले से स्पर्श किया, तब उसने नजरें उठाईं। लोग लोटा ले-लेकर खेतों की ओर जा रहे थे। वह सुराज पासवान के घर का गेहूँ पीसकर आटे की बोरियों को चबूतरे पर रख रहा था। कमर घाव जैसे दुःख रही थी। यों तो पूरा बदन ही टूट रहा था, मन हो रहा था, कोई चढ़कर जरा कचर दे! चक्की

सुपरिचित कथाकार। अब तक सात कहानी-संग्रह, दो यात्रा-संस्मरण, वृहद उपन्यास-१, दस बालोपयोगी पुस्तकें, 'पुकार जगन्नाथ की' (यात्रा-संस्मरण) प्रकाशित। छत्तीसगढ़ी राजभाषा सम्मान, न्यू कबीर सम्मान, राज्यपाल शिक्षक सम्मान, छत्तीसगढ़ रत्न, राष्ट्रपति पुरस्कार।

बंद कर वह घड़ी भर के लिए चक्कीवाले कमरे के बाहर रखे बोरों पर लेट गया। आह! इस सुख का वर्णन करने के लिए शब्द कहाँ से लाए उदय।

उनका दो मंजिला पक्का घर अभी नया ही बना था। यही कोई दस वर्ष हुए होंगे। इसके पहले तो उनका घर यहाँ से पचास किलोमीटर दूर के गाँव सीतापुर में था। पुरखौती घर-द्वार। खेती-बाड़ी। इज्जत-आबरू सबकुछ जमा-जमाया था। गाँव में अनायास बढ़ गई दुश्मनी के कारण पिताजी सबकुछ बेच-बाचकर कमालपुर में आ बसे। यहाँ थोड़ी सी अपनी जमीन थी, उसी पर दो मंजिला घर बनाया। सामने यह चक्की लगा ली और मेहनत करके अपने तीनों बच्चों को पढ़ाने-लिखाने लगे। वह स्वयं मेकैनिकल इंजीनियर की डिग्री रखता है। बड़े भइया ने एम.एस-सी. किया, मझले ने एम.ए., एल-एल.बी. किंतु नौकरी के नाम पर यही प्राइवेट सिक्यूरिटी गार्ड की नौकरी पा सके। दो बंदूकों के लाइसेंस लेते-लेते सारी जमा पूँजी चुक गई। पर हाँ, रोजी-रोटी का ठिकाना तो हो गया। आँखें बंद होने के पहले माँ-पिताजी को संतोष हो चुका था कि बच्चे जी-खा लेंगे।

आह! जरा कमर सीधी कर लूँ, फिर खेत की तरफ जाऊँ। एक तरह से देखा जाए तो कमालपुर है कमाल का, सभी श्रेणी के लोग हैं। धनी से धनी और गरीब से गरीब। गेहूँ ज्यादा होता है। इसलिए लोग रोटी ही ज्यादा खाते हैं। चक्की खाली नहीं रहती, लगन के दिनों में तो लगता है, दो-तीन चक्की और लगा लेते तो काम चलता। सभी से प्रेम का रिश्ता। ज्यादातर लोग नाना-नानी या मामा-मामी, भइया-बहन होते हैं। उसका ननिहाल जो है कमालपुर। उसकी चक्की के दक्षिण में अनुसूचित जातिवालों का टोला था। सामान्य जनों से लेकर गरीब-गुरबा तक अधिकांश की एक ही प्रवृत्ति, पिसाई देते नानी मर जाती है—'काल्हि नई लेह बेटवा, तू त हमार भयने हयय हमसे का पिसाई? आधा ले लो,

आधा दूसरी बार ले लेना।' फुटकर तो किसी के पास रहता ही नहीं।

पासवानों की तो इस समय चाँदी है। पढ़े-लिखे सरकारी नौकरी में लग गए हैं। धड़ाधड़ पक्के घर, पक्की सड़कें, शौचालय, चकाचक है पूरा मोहल्ला, लेकिन दाँत निपोरने की आदत कहाँ जाएगी? पिसाई देते फटती है, 'दई जाब महाराज, का लई के भागि जाब? होत बिहाने पहुँचाई देब, फुटकर नहीं आय, का गाँव छोड़ के भागि जाब?' पिसवाए और लेकर चलते बने, फिर जब गेहूँ लेकर आएँगे तभी भेंट होगी, जब नए बहाने रहेंगे। वह रात-दिन खड़े-खड़े आटा पीसता है, दुनिया भर का बिजली बिल आता है। ससुर पिसाई नहीं देंगे तो कहाँ से होगा सब? अभी आते होंगे महाराजा सरीखे पिसान लेने, बुला लिये हैं गाँव भर को। उसका ध्यान सुराज पासवान के तीन बोरी आटे की ओर था, कितनी मुश्किल से पीसा था, तीन बजे रात से, इसी समय तो जरा सी ठंडी होती है धरती हवा के शीतल संपर्क में आकर, सो लो या कोई जरूरी काम कर लो।

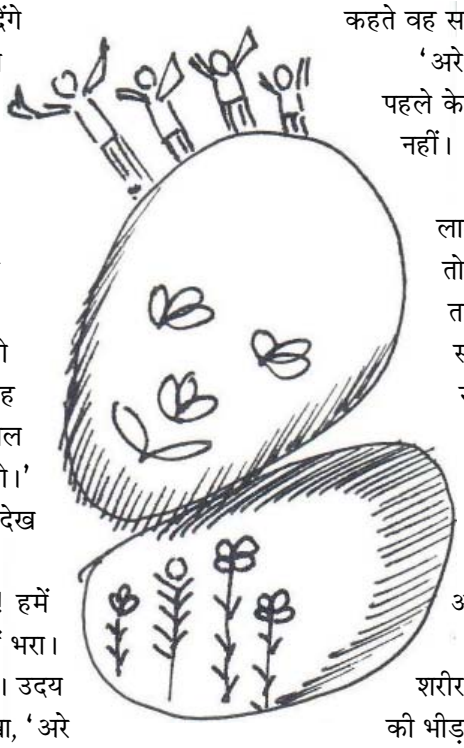

उसे झपकी आ गई, बंद आँखों के आगे तरह-तरह के दृश्य नाचने लगे, आराम का यह प्यारा सुख तो आज जैसी मेहनत के बाद ही मिल सकता है। 'ए-इ-ऽ-ऽ उठो! अब तक सो रहे हो।' किसी की आवाज सुन उसे लगा, वह सपना देख रहा है। नींद नहीं खुली उसकी।

'ए-ई-ऽ-ऽ चक्कीवाले! उठो न, उठो! हमें जल्दी पीसना चाहिए।' रात भर सोए तो पेट नहीं भरा। आगंतुक सुराज पासवान का भानजा दीपक था। उदय ने लाल-लाल आँखें खोलकर एक पल उसे देखा, 'अरे यार! पाँच मिनट रुक जाओ!' विवश आँखें फिर मुँद गईं।

'नहीं एक मिनट भी नहीं! हलवाई आकर बैठ गए हैं, अभी घंटे भर में गरमी बढ़ जाएगी, तब क्या तुम भुगतोगे?' वह जोर-जोर से चिल्लाने लगा।

'काहे चिल्लाता है यार? दे पिसाई। वह देख, बोरियाँ उठा ले।'

'तौल दो।' उसने आँखें लड़ेरते हुए कहा।

'लाओ उठाकर।' उदय ने जम्हाई लेते हुए कहा।

वह खड़ा रह गया।

उदय उसका आशय भाँपकर बोरियाँ तौल-तौलकर रखने लगा। सभी में थोड़े-बहुत अंतर से बराबर आटा था। टीपे में रखे आटे से उसने ठीक कर दिया। वह बोरी साइकिल की कॅरियर पर लादने लगा।

'पहले पिसाई दे दो भाई।'

'एक बोरी रखकर आऊँ, फिर देता हूँ।'

'लेकर आना चाहिए न, मुझे भी इधर-उधर जाना है।' उदय को झुँझलाहट हुई।

'अरे, खा नहीं जाएँगे भाई। जरा सब्र करो।' वह भी झल्लाता हुआ साइकिल पर बोरी लेकर चला गया।

'साले रहेंगे वहीं के वहीं, दाँत निपोरकर माँगने-खाने की आदत नहीं जाएगी। धन-पद चाहे जितना मिल जाए। ले लेना आवश्यक है, वरना यह अपने गाँव चला आएगा। फिर कौन देता है पिसाई!' उदय को उस लड़के के बात करने का ढंग शुरू से ही अच्छा नहीं लगा था।

थोड़ी देर बाद फिर आया। बोरी उठाकर चलता बना।

'अरे भाई, पिसाई?' उदय आवाज देता रह गया।

'मामा खेत गए हैं, आते ही होंगे। ले आता हूँ पिसाई।' कहते-कहते वह साइकिल की सीट पर बैठकर दूर निकल गया था।

'अरे भाई, ३०४ रुपए २० पैसे लाना, ४ रुपए २० पैसे पहले के पड़े हैं।' उदय जान नहीं सका कि उसने सुना या नहीं।

'एक बार उधार छूटा कि भूल ही जाते हैं, कौन लाठी चलाए इनसे रोज-रोज। आज मौका है, दे देगा तो दे ही देगा।' वह जैसे स्वयं से बातें कर रहा था। तब तक उदय न सो सका, न कहीं बाहर-भीतर जा सका। अधूरी नींद के कारण सिर दर्द से फटा जा रहा था। शरीर में जैसे कुछ ताकत ही न रही हो।

'यह दस बोरी धान है भइया। दरि दिहौ।' ठकुराने से एक आदमी आया था। विनय से बातें कर रहा था। 'गेहूँ के बाद दर देंगे दद्दा, रखकर चले जाओ। शाम को आकर देख लेना।' उदय को वह आदमी अच्छा लगा।

छह नहीं बजे कि सूर्य की किरणें प्रखर हो गईं। शरीर से पसीना बहने लगा। हाँ, अभी चौक पर लोगों की भीड़ थी। चाय-समोसेवाले के यहाँ लोग खड़े-बैठे खा-पी रहे थे। दूध के ठेले से लोग दूध के पैकेट ले जा रहे थे। गँजेड़ी लोग गाँजे की चिलम सुड़क रहे थे और देशी शराब की दुकान पर कई नए-नए लड़के सुबह-सुबह मुँह जूठा करने के लिए खड़े थे। उदय की सुबह बिगाड़ दी साले दीपकवा ने। 'बहुत शान बढ़ गई है इनकी। कोई सुधारने वाला नहीं है न इसीलिए। ये लोग आज से ४०-५० वर्ष पहले हमारे घरों में चाकरी करते थे। और मजूरी के लिए रिरियाया करते थे। अब देखो, समय ने ऐसा पलटा खाया कि ये हमारी मजदूरी देने में मरने लगे हैं।' उदय उबाल खा रहा था कि दीपक फिर साइकिल लेकर आ गया।

'ये लो तीन सौ रुपए। ऐसे जान खा रहे थे, जैसे हम कोई चोर-बदमाश हैं। अरे काम कराए हैं तो पइसा तो देंगे ही।' उसने बड़ी हिकारत से उदय की ओर देखा और उसके हाथ पर तीन सौ रुपए पटक दिए।

'अरे भले मनई, ४ रुपए २० पैसे पहले के बाकी हैं तुम्हारे मामा के हाथ के। वह भी दे दो न।' उदय हिसाब साफ करना चाहता था।

'अभी इतना ही लाया हूँ, उनके हाथ का उन्हीं से लेना।' उसने लापरवाही से कहा और अपनी बोरी उठाने लगा।

'जब तक बाकी न दे दो, आटा नहीं ले जा सकते।' उदय अड़

गया। उसने बोरी उसके हाथ से लेकर अलग रख दी।

'ठीक है, जा रहा हूँ। लेकर आता हूँ, जब तुम्हें सब्र नहीं है तो।' वह ताव खा गया। क्रोध के लक्षण उसके चेहरे पर स्पष्ट झलक रहे थे। वह साइकिल पर चढ़कर फनफनाता पैडल मारता चला गया। 'नीच कहीं के, पिसाई देने में फटती है। बिजलीवाले बाप होते हैं न।' उदय भी बड़बड़ा रहा था।

थोड़ी ही देर मैं दीपक वापस आ गया। उसने ४ रुपए २० पैसे उदय के सामने फेंक दिए। 'ले भिखारी बाम्हन, भर ले अपनी बेटी के···में।' सुनते ही उदय के तन-बदन में आग लग गई। उसने पास पड़ा हँसिया फेंककर मार दिया। वह आटा लेकर जाते दीपक के पैर में लगा। वहाँ से खून निकलने लगा। वह रुका नहीं, गाली देता, रोता-चिल्लाता घर की ओर तेजी से चला गया।

'मार दिया रे! जान से मार दिया!'

'मादर··· ! मामा हो मामा।' वह रो रहा था।

'रुक साले, जान न ले लिया तो असल बाम्हन की बूँद का नहीं।' उदय आपा खो चुका था।

अभी वह घर के अंदर जाने के बारे में सोच ही रहा था कि उसकी नजर सामने से आती भीड़ पर पड़ी। पचास के लगभग स्त्री-पुरुष हाथों में लाठी, भाले, टँगिया लिये हल्ला करते, गालियाँ बकते, ललकारते चले आ रहे हैं।

'कहाँ है, वह कमीना, जिसने हमारे बच्चे को चोट पहुँचाने का साहस किया?'

'वह बच नहीं सकता।'

'आज मजा चखा देंगे बम्हनौटी का।' अगले पल ही वह घिर चुका था। लोग उस पर लाठियाँ बरसाते, उससे पहले ही छत से आवाज गूँजी, 'हाथ मत छोड़ना कोई भी। वरना सबको भून के रख दूँगा।' वह भय से काँप रहा था। उसने मझले भइया विजय की दहाड़ सुनी, रात की ड्यूटी कर अभी-अभी आए थे। उसने तो उन्हें घर में घुसते भी नहीं देखा। मेन गेट से गए होंगे शायद।

'चला के देख दोगला गोली। आन गाँव से आकर गुंडई कर रहा है? आज दिखा देंगे कि हम भी किसी से कम नहीं।' लोग चिल्ला रहे थे। वह उन्हें रोकना चाहता था, गुस्से में उससे पहले ही गलती हो चुकी थी। परंतु अब तो माफी माँगने का भी अवसर नहीं था। विजय की चेतावनी के पश्चात् भी उनका क्रोध शांत न हुआ। लोगों ने उसे डंडे से पीटना शुरू कर दिया।

बस फिर क्या था, ऊपर से फायरिंग शुरू हो गई, और लोग तो भाग गए, किंतु दीपक और राकेश लहूलुहान होकर पड़े रह गए। विजय भी सकते में आ गया। किसी की हत्या करना उसका उद्देश्य नहीं था। बहरहाल अब तो परिस्थिति से दो-चार होना ही था। वह बंदूक लिये नीचे आया और चक्की के कमरे का शटर गिराकर ताला बंद कर उदय को सहारा देकर उठाया तथा घर के अंदर ले जाकर दरवाजा अंदर से बंद कर लिया।

उदय के माथे से खून बह रहा था। उसकी मरहमपट्टी की गई। घर की औरतें राग धर के रोने-पीटने लगीं, कुत्ता भी रोने लगा। विजय ने थाने फोन करके घटना की सूचना दी। उसे पता था, यह अंत नहीं, प्रारंभ है। थोड़ी ही देर में सैकड़ों लोगों ने आकर उनका घर घेर लिया। सबके हाथ में हथियार थे। मिट्टी-तेल के पीपे भी दिखा रहे थे, लड़कों के हाथ में बम के गोले भी दिखाई दे रहे थे। यों तो सारे कमालपुर में खबर आग की तरह फैल चुकी थी, किंतु इस आग में जलने के लिए कोई तैयार नहीं हुआ था।

पहले तो उन्होंने गंदी से गंदी गालियाँ दीं, ललकारा। माँ के दूध को धिक्कारा, जब अंदर से दरवाजा नहीं खुला तो सबने मिलकर लोहे का दरवाजा तोड़ दिया। भीड़ अंदर घुस चुकी थी, जब बाहर से पुलिस का सायरन बजा। जल्दी-जल्दी में भीड़ ने घर में आग लगा दी। पुलिस ने भीड़ को तितर-बितर किया। पांडे परिवार के साथ ही पासवान परिवार को भी पुलिस ने वैन में बैठा लिया। शवों को अपने कब्जे में ले लिया। अभय ड्यूटी जा चुका था, खबर पाकर पहुँचा तो विरोधी की रिपोर्ट पर उसे भी अंदर कर दिया गया। पूरा परिवार दिखा, किंतु अभय का ग्यारह वर्षीय बेटा मिंटू वहाँ नहीं था, पुलिस ने खोज की। परंतु वह कहीं नहीं मिला। दमकल मँगाकर घर की आग बुझाई गई। किंतु तब तक सबकुछ जलकर राख हो चुका था। चक्की पर रखा अनाज और इंजन गाँववाले लूट ले गए। दूसरे दिन मिंटू की लाश मिली थी नाले में क्षत-विक्षत फूली हुई।

घर की औरतें बार-बार बेहोश हो रही थीं, बयान लेकर उन्हें उनके रिश्तेदारों के यहाँ भेज दिया गया। दूसरी पार्टी अपने बच्चे गँवाकर खून की प्यासी हो रही थी। मिंटू को मारकर अब शांत हो गई थी। उधर से पचास आदमी आरोपी बने, इधर से तीनों भाई। उदय के ऊपर उकसाने वाला व्यवहार करने की धारा लगी, विजय हत्या का आरोपी बना और अभय साथ देने का।

सुराज तो नैनी जेल में वार्डन रह चुका था। उसे इसका लाभ मिल रहा था। उसने तीनों भाइयों की खूब खातिरदारी करवाई जेल के अंदर। 'और लेगा ४ रुपया २० पैसा?' उदय पर लात से प्रहार करते, दाँत किटकिटाकर उसने पूछा था। आँखों में आँसू भरकर मुँह से बहते हुए खून को पोंछते हुए उदय ने कहा था, 'मेरी मजदूरी के थे, माँगकर कोई गुनाह तो नहीं किया मैंने?'

बी/२८ हरसिंगार, राजकिशोर नगर
बिलासपुर (म.प्र.)
दूरभाष : ९९०७१७६३६१

पुण्य तिथि (२२ जून) पर विशेष

'विक्रम' के पराक्रमी संपादक

● राजशेखर व्यास

प्राय: कहा करता हूँ कि चंदन की छाया में कुछ दिन रहने का सौभाग्य मिला था, सो दुनिया समझ रही मुझको, मैं भी मलयानिल हूँ, मैं भी चंदन हूँ। वस्तुत: पंडित व्यास पर लिखने/बोलने के अधिकारी तो डॉ. प्रभाकर श्रोत्रिय हैं, जिन्होंने पं. सूर्यनारायण व्यास के समस्त जीवन एवं साहित्य पर बड़ा आलोड़न-विलोड़न किया है और एक ग्रंथ 'अनुष्टुप' का संपादन भी।

स्व. सूर्यनारायण व्यास

फिर कई बार मैं स्वयं चौंकता हूँ कि पंडितजी अपने से ६०-६० बरस उम्र में छोटे लोगों से कैसे गहन और जीवंत संपर्क रखते थे ?

जब व्यासजी के बारे में मैं बात करता हूँ, तो मुझे कभी-कभी और कई बार यह समझ में नहीं आता कि मैं कौन से व्यासजी की बात कर रहा हूँ, लेखक सूर्यनारायण व्यास, पत्रकार सूर्यनारायण व्यास, क्रांतिकारी सूर्यनारायण व्यास, इतिहासकार सूर्यनारायण व्यास, ज्योतिषाचार्य सूर्यनारायण व्यास या कालिदास समारोह के संस्थापक सूर्यनारायण व्यास विक्रम विश्वविद्यालय के निर्माता सू.ना. व्यास, जितना आसान लगता है एक-एक शब्द में ये सब कह देना, उतना ही मुश्किल एक-एक बात पर जीवन व्यतीत हो जाए तो भी कम है। जैसे-जैसे मैं उनके पत्रों, साहित्य से गुजरता हूँ, मैं कई बार कँपकँपा उठता हूँ कि कैसे एक आदमी इतनी विभिन्न विधाओं में एक साथ और इतनी तन्मयता के साथ कार्य करता है। अकेले अकादमी बना देना या कालिदास समारोह को जन्म दे देना और उसे जीवन भर चलाए रखना वर्ष ५८ में शासन को सौंपा, वर्ष २८ से ५८ तक उन्होंने स्वयं चलाया। मैंने भी विगत वर्ष व्यासजी का जन्म शताब्दी मनाने का दुस्साहस किया। एक बरस, दो बरस आप कितना बड़ा भव्य समारोह करोगे। भारत सरकार ने डाक टिकट निकाला, दो फिल्म बन गईं, किताबें छप गईं, ज्ञानपीठ से पुस्तक आ गई, लेकिन आपको लगता है कि कैसे एक व्यक्ति अनवरत इस समारोह को जारी रखता होगा, बगैर किसी शासकीय सहयोग के, तो मैं सिर्फ समारोह की संकल्पना, जिस विक्रम कीर्ति मंदिर में समारोह का उद्घाटन हो रहा है, उस कीर्ति मंदिर के निर्माता भी पं. सू.ना. व्यास हैं। तो बहुत सारी बातें सोचने में आती हैं। जो कुछ मुझे बचपन में चार साल उनके साथ का सौभाग्य मिला तो प्रभाकर श्रोत्रिय बालकवि बैरागीजी हैं, तो मुझे बल मिल जाता है कि जो कुछ उनके मानस पुत्र हैं, उनसे रोशनी मिलती है।

आज मेरा मन है कि 'पत्रकार' विक्रम संपादक सूर्यनारायण व्यासजी के बारे में आपको कुछ बताऊँ। और उसका भी कालिदास समारोह से गहरा नाता है—पत्रकार सूर्यनारायण व्यास का। वर्ष १९४२ में उज्जैन ही में ये ५८ में जो अखिल भारतीय कालिदास समारोह की जो बात की जाती है, उससे पहले १९४२ में विक्रम द्विसहस्राब्दी समारोह की परिकल्पना और संकल्पना पं. सूर्यनारायण व्यास ने की। वे स्वयं उस समय ४० वर्ष के थे। १९०२ में जनमे और लगभग ११४ देशी राजाओं को उन्होंने उज्जयिनी में एकत्र किया। कुंभ का भी पर्व था। असंख्य यात्रियों का जुलूस, विक्रमादित्य का और संवत् स्थापना हेतु उन्होंने 'विक्रम' पत्र का प्रकाशन आरंभ किया और उसके संपादक थे हिंदी के विलक्षण संपादकाचार्य पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र'। उग्रजी महाराज इस 'विक्रम' पत्र के संपादक, संचालक हुए पं. सू.ना. व्यास। मोहन प्रेस जो पंडितजी की अपनी प्रेस थी, जहाँ से वे 'पंचांग' निकाला करते थे। सेंट्रल इंडिया का सबसे बड़ा प्रेस था। लगभग ४०० कर्मचारी वहाँ काम करते थे।

उनके काम करनेवालों की सूची अंत में मैं आपको दूँगा तो आप चौकेंगे। जो कंपोजिटर वो हैं, जो इस राष्ट्र के बहुत बड़े नाम हैं। जिन्होंने वहाँ कंपोजिंग की 'विक्रम' कार्यालय में। दुर्भाग्य मालवा का मित्रो यह है कि मेरे अग्रजों से भी अकसर कहता हूँ कि मैं किसी प्रदेश और राज्य के चिंतन से जुड़ा हुआ हूँ, न प्रदेशवादी हूँ, न जातिवादी हूँ, लेकिन जो इलाहाबाद को यश मिला पत्रकारिता में दिल्ली के जो गुण गाए जाते हैं या कानपुर को, गणेश शंकर विद्यार्थीजी हालाँकि मालवा से गए थे, पुराने लोग शायद जानते हों। बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' भी यहाँ हमारे शाजापुर से गए थे। प्रभागचंद शर्मा भी, लेकिन जो यश मालवा को मिलना चाहिए, जिस यश का मालवा सच्चा हकदार है, वो अब तक नहीं मिला, सुभद्रा कुमारी चौहान लिखती थीं, माखनलाल चतुर्वेदी लिखते थे, सिद्धनाथ माधव आगरकर लिखते थे, लेकिन वो कोर्स बुक में क्या जाएगा, यह ध्यान में रखकर नहीं लिखते थे। कम-से-कम डॉ. रामकुमार वर्मा की तरह 'एकांकी' या धीरेंद्र वर्मा की तरह 'एकांकी' लिखते हो कि ये पाठ्य पुस्तकीय लेखन हो जाए, इस दृष्टि से नहीं उनका लेखन होता था, तो १९४२ में जब 'विक्रम' पत्र का आरंभ हुआ तो व्यासजी ने उसमें अपनी संकल्पनाएँ साफ-सुथरे ढंग से कह दीं कि मेरे तीन लक्ष्य हैं। पहला उज्जयिनी में विक्रम विश्वविद्यालय की स्थापना। दूसरा विक्रम कीर्ति मंदिर की स्थापना और तीसरा हिंदी, मराठी और अंग्रेजी में अपने युग का सबसे बड़ा जीवंत दस्तावेज 'विक्रम स्मृति ग्रंथ' का प्रकाशन है। आज मित्रो, ये तीनों उनके स्वप्न साकार

उज्जयिनी में खड़े हैं, मगर उनके नाम का अता-पता नहीं।

मैं अकसर कहा करता हूँ कि सपने देखना बहुत आसान है, मगर उसे अपने जीवन में चरितार्थ कर देना आसान नहीं होता। मैं 'निराला', 'उग्र', 'दिनकर', 'बच्चन' और 'सुमन' सबके चरणों की धूल मस्तक पर धारण करना चाहता हूँ। मुझे अच्छा भी लगता है, लेकिन कई बार मैं यह सोचता हूँ, हो सकता है, यह मेरी अल्प बुद्धि हो।

मुक्तिबोध भी लिखते हैं 'अँधेरों के खिलाफ', लेकिन अगर मोहल्ले में एक 'लट्टू' नहीं जल रहा तो मुक्तिबोध उसके लिए नगर-निगम से लड़ने गए हों तो मुझे नहीं मालूम, मैं नहीं जानता। लिखने के लिए लिख देना बहुत आसान है। आपकी प्रतिबद्धता क्या है? अब महाश्वेताजी पूछती हैं दिल्ली में राजेंद्र यादव से भी, क्या आप लिखते हैं नारी-विमर्श, दलित-विमर्श, लेकिन क्या आप यमुना सूखती है तो जाकर साफ करने खड़े होते हैं? मैं सुमनजी से कहता था, आप लिखते हैं, मैं क्षिप्रा की तरह तरल बहता हूँ, अच्छी बात है बहते हैं, पर क्षिप्रा बहती है या नहीं बहती, जाकर देखते हैं आप?

हमारे सरोकार क्या हैं? लेखन की दृष्टि से, सू.ना. व्यास ने विक्रम का नाम इसलिए नहीं उठाया मित्रो कि ये कोई राजा है, प्रगतिशील लेखकों या मार्क्सवादी लेखकों को कुछ ऐसा लगता हो तो मैं उनको ये जानकारी दे दूँ कि पं. सू.ना. व्यास बोल्शेविज्म और कम्युनिस्टों पर १९१८ से यानी बहुत पहले लिख चुके थे। इसलिए नहीं कि 'विक्रम' कोई हिंदुवादी राजा हैं, बरसों से आपको यह पढ़ाया जा रहा था कि आप मुगलों के, अंग्रेजों के गुलाम हैं, हारे हुए, थके हुए जुआरी हैं, लुटे-पिटे, मरे हुए निराश, पराधीन और आत्मविश्वासहीन भारतीय हैं। तब इतिहास से 'विक्रम' नाम के पराक्रम का चरित्र निकालकर सूर्यनारायण व्यासजी ने और अब तो स्वर्ण-पत्र में वह लिखी कविता भी उपलब्ध है, जो अरब, ईरान तक में, जरहम-बिरतोई पंडितजी ने विक्रम स्मृति ग्रंथ में प्रकाशित की थी। उन्होंने विक्रम को अपने पराक्रम का चरित्र बनाया और भारतीय डाक टिकट विभाग ने जब उन पर डाक टिकट निकाला तो तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने भी एक सुंदर बात कही कि वे चाहते तो 'महाकाल' यूनिवर्सिटी नाम रख देते और वे चाहते तो पं. सू.ना. व्यास विश्वविद्यालय भी रखवा देते, किसी और से बात उठवाकर, क्योंकि प्राय: ही होता है कि सागर यूनिवर्सिटी हरि सिंह गौर के नाम से जानी जाती है। बनारस यूनिवर्सिटी मदनमोहन मालवीय के नाम से, लेकिन विक्रम यूनिवर्सिटी के तो संस्थापक के बारे में प्राय: ऐसा हुआ कि कई कुलपतियों को भी नहीं मालूम था कि कौन थे वो संस्थापक। पंडितजी ने अपना नाम कहीं चाहा नहीं। लेकिन 'विक्रम' क्यों इस पर बहुत महत्त्वपूर्ण बात है। वे भारतीयों के सोये हुए पराक्रम को जगाने के लिए विक्रम के नाम पर विश्वविद्यालय चाहा। मंदिरों और मसजिदों के शहर में उन्होंने कम-से-कम मंदिर और मठ नहीं बनाए, शिक्षा अनुसंधान और कला संस्थान खुलवाए और यह बहुत महत्त्वपूर्ण है कि जब-जब राजधानी का प्रश्न आया, उसी 'विक्रम' में सू.ना. व्यास की संपादक की टिप्पणी है। १९४२ में वे लिखते हैं कि 'दिल्ली राष्ट्र की असुरक्षित राजधानी होगी।' उनकी संपादकीय के नाम बहुत सुंदर होते थे,

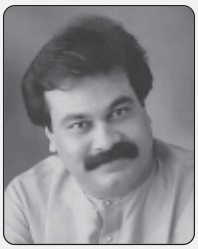

देश-विदेश की प्रायः सभी पत्र-पत्रिकाओं में लगभग ३,५०० लेख प्रकाशित। लगभग ५४ ग्रंथों की रचना। उज्जयिनी पर ३ महत्त्वपूर्ण वृत्तचित्र। अब तक २०० से अधिक वृत्तचित्र, कार्यक्रमों का निर्माण, निर्देशन, लेखन तथा प्रसारण। फ्रांस सरकार एवं संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार से फैलोशिप तथा अनेक सम्मान।

पहले वे लिखते थे 'बिंदु-बिंदु विचार।' उग्रजी लगभग ५ अंकों के संपादन के बाद व्यासजी से अलग हो गए। २-४ अंक प्राप्त हुए, शासन ने उनसे कहा, माफी माँगें। पंडितजी और उग्रजी ने माफी माँगने से इनकार किया। फिर उग्रजी और पंडितजी में आगे जाकर मजेदार बैर हुआ, और उग्रजी घर में ही रहते हुए विक्रम से पृथक् हो गए।

बड़े संपादक हुआ करते थे रामानंद चटर्जी के यहाँ, जैसे बनारसी दासजी रहते थे और विरोध में भी लिखते थे। उग्रजी ने व्यासजी के खिलाफ भी लिखा है। 'विक्रम' में रहते हुए, पर मैं ऐसा मानता हूँ कि बड़ों के झगड़े बड़े ही समझ पाते हैं, छोटे आदमी नहीं। मुझे यहाँ हिंदी के एक बड़े कवि हुआ करते थे अब, नहीं रहे, महेश शरण जौहरी 'ललित', उन्होंने एक बार संस्मरण सुनाए थे जब व्यास जी और उग्रजी में थोड़ी खट-पट हुई थी तो उज्जैन के कुछ ५-५० विघ्न संतोषी साहित्यकार 'उग्रजी महाराज' के पास जा पहुँचे। 'साहब, व्यासजी के खिलाफ कुछ मसाला लेकर आए हैं, आप इसको छापिए'।

तो उग्रजी ने कहा कि 'जब दो शेरों का झगड़ा हो तो गीदड़ों की जरूरत नहीं।' पं. सूर्य नारायण व्यास पर हमला तो मैं ही करूँगा, कोई दूसरा नहीं करेगा, लेकिन बाद में जब सूर्यनारायण व्यास गिरफ्तार हुए 'इंडियन डिफेंस ऐक्ट' आजादी की लड़ाई में, तो अकेला उग्र ही जिसने संपादकीय लिखा है कि सूर्य नारायण व्यास का मित्र नहीं शत्रु हूँ, हाँ हिंदी संसार भी जानता है, सच भी है, पर मैंने जीवन भर उसके खिलाफ लिखा है, पर मार डालने की नियत से कम और कूट-पीट के पुष्ट बनाने की नीयत से अधिक। ये ऐसे महान् लोग थे।

ग्वालियर महाराज को चेतावनी देते हुए उग्रजी उसमें लिख रहे हैं कि संपादक 'सूर्यनारायण व्यास' विक्रम संपादक अब जेल से छूटेंगे तो क्या करेंगे, हरि भजन?

उग्रजी 'मतवाला' में लिख रहे हैं, नहीं! ग्वालियर महाराज शायद भूल गए हैं, वे लिखते हैं, व्यासजी को भी जनता के निकट जाने का बड़ा शौक था। अब जेल भुगते, फिर आगे पंक्ति लिखते हैं कि महाराज भूल रहे हैं व्यासजी को जेल में डालकर मध्य भारत को एक नया पूत व्यक्तित्व प्रदान करने जा रहे हैं। यह उग्र की टिप्पणी थी, तो उस उग्रजी के साथ पंडितजी का उठना-बैठना। 'विक्रम' में 'व्यासोवाच' शीर्षक से संपादक व्यासजी लिखा करते थे। उससे पहले 'बिंदु-बिंदु विचार'। उन्होंने १९४२ में लिखा कि दिल्ली जो है वो राष्ट्र की असुरक्षित राजधानी होगी किन कारणों से यहाँ कोई योग्य कारण नहीं। पंडितजी; हाँ अपना 'भविष्य वक्ता' विक्रम में नहीं लाते। बाकायदा भू-गर्भीय विश्लेषण दे रहे हैं कि दिल्ली

सुरक्षा की दृष्टि से असुरक्षित राजधानी रहेगी, फिर कौन सी राजधानी हो ? वो कहते हैं कि उज्जैन ही 'विक्रम' की राजधानी सबसे सुरक्षित है। विक्रमादित्य की नगरी है। और उस पर राजेंद्र बाबू के बयान आ रहे हैं, अमरनाथ झा के बयान आ रहे हैं और वे सब विक्रम में छप रहे हैं कि उज्जैन ही सर्वाधिक सुंदर राजधानी हो सकती है। नहीं बनी ! राष्ट्र आजाद हो गया। पंडितजी बोले, मध्य भारत की राजधानी बने, नहीं बनी। पंडितजी ने 'विक्रम विश्वविद्यालय' के लिए आग्रह किया, यूनिवर्सिटी मेरे शहर को चाहिए। इस पर बालकवि बैरागी ने लिखा है कि पंडित व्यासजी के पं. नेहरू से दो टूक संवाद बहुत उम्दा हुए। जवाहरलालजी ने उन पर व्यंग्य करते हुए कहा कि पंडितजी आप तो उज्जैन को राष्ट्र की राजधानी चाहते थे, वो तो बनी नहीं। म.प्र. की भी नहीं बनी, अब आप विश्वविद्यालय पर अड़े हैं, क्या वजह है ? इस पर भी मान गए आप, तब तक इंदौर, भोपाल में विश्वविद्यालय नहीं थे। यह बात याद रखने/करने की है, व्यासजी ने कहा कि जवाहरलालजी, आजादी की लड़ाई में लड़ते थे, अभी भी थके तो नहीं हैं, पर मेरा ऐसा मानना है कि मेरे शहर में विश्वविद्यालय आ गया तो मेरी बाकी लड़ाई मेरे शहर के छात्र खुद लड़ लेंगे। इस नगर की अस्मिता की लड़ाई, बाकी लड़ाई तो मेरे शहर के छात्र खुद लड़ लेंगे। पढ़-लिख लेंगे तो अपने शहर की अन्य लड़ाइयाँ भी लड़ लेंगे।

उस 'विक्रम' पत्र के संपादक सूर्य नारायण व्यास ने आज जो हम, 'आपकी अदालत' टी.वी. चैनलों पर देखते हैं, 'जनवाणी' देखते हैं, बहुत सारे कार्यक्रम खुले मंच और जन-मंच आते हैं। वर्षों पूर्व एक नियमित कॉलम चलाते थे पंडितजी, उसमें मंत्रियों के श्रीमुख से और यह मैं जो घटना दे रहा हूँ सन् ५० की है। देश को आजाद हुए कुल जमा ३ वर्ष हुए। व्यासजी अपने पत्र 'विक्रम' में एक स्तंभ की शुरुआत करते हैं 'मंत्रियों के श्रीमुख से', उसमें उस समय के राष्ट्र के राष्ट्रपति से लेकर (जिनसे उनकी व्यक्तिगत और अंतरंग मित्रता भी है) प्रधानमंत्री और अन्य केंद्रीय मंत्रियों को, एक पत्र लिखते हैं, एक-एक समस्या देते हैं। राजेंद्र बाबू से राष्ट्र के संविधान के बारे में मेरा ऐसा मानना है कि दुनिया भर के संविधान की नकल भर है, उसमें भारतीयता का पुट नहीं है। इस विषय पर आपका क्या कहना है ?

राजेंद्र बाबू का उत्तर उसमें आता है, सरदार पटेल को लिख रहे हैं गृह-समस्या, कश्मीर-समस्या पर जवाहरलाल नेहरू से उनके पत्र व्यवहार। बार-बार उसमें लिख रहे हैं कि यह संपादक 'विक्रम' की बात है। मेरे आपके व्यक्तिगत संबंध और स्नेह-सौहार्द का इससे कोई संबंध नहीं। अब वे 'कश्मीर' की समस्या पर लिखते हुए जवाहरलालजी से कह रहे कि इसे आपने यू.एन.ओ. में भेजकर एक नासूर बना दिया, इस बारे में आपकी टिप्पणी ? तो जवाहरलालजी कहते हैं कि एक प्रश्न ऐसा बार-बार दोहराया जाना मुझे उचित नहीं प्रतीत होता।

तो पंडितजी लिख रहे हैं कि जो दिल और दिमागों को मथ रहा है, वह कश्मीर अब दोहराया जाना उचित प्रतीत नहीं होता ? यह राष्ट्र का आगे जाकर विकराल दानव रूप लेगा और यह लेखमाला कई महीने चली। उसका सबसे दिलचस्प, मैं उस लेखमाला का अंत बताऊँ तो आप चौंकेंगे। २० किस्त में है, अंतिम लेख मध्य भारत के कोई मुख्य मंत्री थे गोपीकृष्ण विजयवर्गीय। पंडितजी ने लिखा कि देश को आजाद हुए अभी ३ साल नहीं हुए हैं, कल तक वे आदमी जो घर के दरवाजों पर दुम हिलाते घूमते थे, वे सत्ता के दलाल अपने आपको वायसराय समझ सत्ता की कुरसियों पर बैठ गए हैं। 'संपादक' की भाषा है, बड़ी जबरदस्त है, उसमें लिखते हैं कि जनता के पत्रों का उत्तर भी छपा-छपाया देने का दुस्साहस करते हैं कि मैं मामले को दिखवा रहा हूँ, ऐसा हो रहा है तो कई मामलों में यह भी कि कई राजनेता लिख रहे हैं कि चूँकि मैं मामले से अनभिज्ञ हूँ, इसलिए इस बारे में तहकीकात करूँगा तो पंडितजी लिखते हैं कि जो राजनेता जनता के पत्रों का उत्तर भी छपा-छपाया देने का दुस्साहस करता है, उसका हश्र क्या होना चाहिए ? अगले अंक समाचार टिप्पणी में लिखते हैं कि श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय पदच्युत हुए। उनको निकाल दिया गया। तो लिखते हैं—जनता के प्रश्नों का उत्तर न देकर गोपीकृष्णजी आज हमारे प्रश्नों का खुद उत्तर बनकर प्रत्यक्ष उदाहरण बन गए हैं कि जो जन-मन का अनादर करेगा, उसको लोकमत कैसे बाहर निकाल फेंकेगा।

इस तरह की अद्‌भुत किश्त/धारावाहिक टिप्पणियाँ एक तरफ संपादक व्यासजी में, ऐसी प्रखर तेजस्विता 'बिंदु-बिंदु विचार' बाद में रामानंद जोशी ने 'कादम्बिनी' में, उनका यह शीर्षक यहीं से लिया। अटल बिहारी वाजपेयीजी ने भी अपनी पुस्तक का शीर्षक लिया और उसमें उल्लेख किया कि मैं विक्रम से प्रभावित हूँ। मुझे विष्णु कांत शास्त्रीजी ने एक पत्र लिखा कि मेरे पिता नरोत्तम शास्त्रीजी नियमित 'विक्रम' पढ़ते थे, और मैं बचपन में 'विक्रम' का पाठक था। नियमित पाठक। मुझे राजेंद्र माथुर ने कहा था कि मैं अपने बचपन में रामानुजकोट उज्जैन में रहता था और रोडेशिया, साइप्रस, ईरान, इराक पर कोई आदमी उज्जैन में बैठकर लिखता है, यह बात मुझे बहुत चौंकाती थी। मैं रामानुजकोट की लाइब्रेरी में 'विक्रम' के १६ पृष्ठ के संपादकीय ही पढ़ता था। एक प्रसंग जिसका उल्लेख प्रभाकर श्रोत्रिय ने भी 'अनुष्टुप' में किया है। 'अभाव मगर दबाव नहीं'। ग्वालियर में ४ महारानी के बाद एक युवराज का जन्म हुआ, जिन्हें हम सब लोग आज 'श्रीमंत माधवराव सिंधिया' (अब तो वे भी स्व.) के नाम से जानते हैं। वे भी हमारे बीच अब नहीं हैं। मेरे उनसे अच्छे अंतरंग संबंध रहे हैं। उनके जन्म के अवसर पर महाराज सिधिंया ने राष्ट्र की सब पत्र-पत्रिकाओं को कुछ पुरस्कार भिजवाए।

उस समय विक्रम को भी ५,००० रुपयों का पुरस्कार पहुँचाया गया। पंडित व्यासजी ने अगले ही क्षण उस चेक को आदरपूर्वक लौटाते हुए, उस चेक का मय नंबर पत्र अगले संपादकीय में छाप दिया। 'जिससे मेरे संपादकीय और पत्रकारिता को प्रभावित करने की कोशिश की जाती है, विक्रम इस तरह के पुरस्कार नहीं स्वीकार करता।' दूसरी तरफ वही व्यासजी 'विक्रम' यूनिवर्सिटी के लिए और पंडित सूर्यनारायण व्यास महाराजा सिंधिया के आगे हाथ भी पसारते हैं। लेकिन घर आए ५,००० रुपए के चेक को लौटा देना और उसे अपने संपादकीय में प्रकाशित कर देना कि इस से मेरी पत्रकारिता को प्रभावित करने की कोशिश की गई, यह पुरस्कार मेरे मन को स्वीकार नहीं है। और जब 'विक्रम' बंद किया तो उन्होंने लिखा है कि

मैं अपने हाथों अपने बेटे का गला घोंटना उचित समझूँगा, किसी और के द्वार पर भीख माँगने के बनिस्बत। तो विक्रम के अंतिम संपादकीय में पंडित सूर्यनारायण व्यास ने लिखा है कि हम पुनर्जन्म में विश्वास करते हैं, चाहे कोई करे न करे, मैं जानता हूँ कि एक दिन 'विक्रम' फिर जनमेगा और मुझे उम्मीद थी और जब पंडित व्यासजी ने कहा कि मेरी आत्मा को संतोष इस बात का है कि जब मैं विक्रम विश्वविद्यालय बना पाया, विक्रम विश्वविद्यालय का जो त्रैमासिक जर्नल था, उसका नाम भी उन्होंने 'विक्रम' ही रखा, वह आज भी जीवित है।

संपादक की जो गरिमा, संपादक का जो रूप, आचार-विचार और व्यवहार मर्यादा का व्याकरण आप पाएँगे कि गणेश शंकर विद्यार्थी, माखन लाल चतुर्वेदी, सिद्धनाथ माधव आगरकर, बाबुराव विष्णु पराड़कर, कृष्ण राव परदे, माधवराव सप्रे और १०-५ बड़े नाम अगर आप देंगे तो सूर्य नारायण व्यास हिंदी के उन ५ सवारों में इसलिए भी दिखाई देंगे बनारसी दास चतुर्वेदी ने 'विक्रम' का सिर्फ २ वर्षों का आकलन करते हुए लिखा था कि जो काम आपने मालव भूमि के लिए विक्रम के माध्यम से किया है, उसका शतांश भी हमसे हमारे बृज के लिए नहीं बन पड़ा है। २ वर्षों के आकलन में! अगर २ वर्षों में एक आदमी 'विक्रम यूनिवर्सिटी' खड़ी कर सकता है, विक्रम कीर्ति मंदिर खड़ा कर देता है और 'विक्रम स्मृति ग्रंथ' हिंदी, मराठी और अंग्रेजी में। मैं खुद २००२ तक जन्म शताब्दी वर्ष तक भी यही मानता था कि विक्रम स्मृति ग्रंथ जो है, वही हिंदी में है, वही मराठी में है और वही अंग्रेजी में है। लेकिन तीनों भाषाओं में तीन पृथक्-पृथक् ग्रंथ हैं। २१/२ हजार पृष्ठ का ग्रंथ है। संसार भर के महान् विद्वानों का विक्रम पर लिखा हुआ। एक जगह संपादक व्यासजी की और अनेक भूमिकाएँ थीं, 'विक्रम' पत्र के माध्यम से वो अपने प्रेस में क्रांतिकारियों को प्रश्रय दिया करते थे, और यह बात मुझे वर्ष ८० के सिंहस्थ में जब ज्ञात हुई तो 'श्रीराम शर्मा' शांति कुंजवाले जो गायत्री युग निर्माण योजना 'हम बदलेंगे युग बदलेगा', वे कभी १९४२ में विक्रम के मोहन प्रिंटिंग प्रेस में छुपकर रहे थे। १९४२ की क्रांति के समय 'श्रीराम शर्मा', एक और हुए 'पं. उदयन शर्मा' वे भी अब स्व. के पिता पत्रकार उदयन शर्मा के पिता जो शिकार कथाएँ लिखते थे, वे यहाँ रह चुके हैं। बाद के काल में उनके प्रेस में काम करनेवालों में से प्रवासीलाल वर्मा मालवीय जो प्रेमचंदजी के साथ चले गए। बालकृष्ण शर्मा नवीन के भाई संतु जिन पर बालकृष्ण शर्मा नवीन की सबसे मार्मिक कहानी है। और बसंतीलाल 'बम' श्रीधर पाठक से लेकर बड़ी भारी परंपरा रही। लेकिन ८ बरस तक 'विक्रम' जो उन्होंने निकाले, आज उसके २५३६ पृष्ठ के संपादकीय भी। 'विक्रम' के अंकों पर उन्होंने 'कालिदास' पर एक विशेष अंक निकाला, 'विक्रम' पर विशेषांक निकाले। 'सिंहस्थ' अंक निकाले। मालवी अंक, आगरकर स्मृति अंक, हृदयांक निकाले।

जो आज भी ऐतिहासिक दुर्लभ धरोहर है। लेकिन सबसे दिलचस्प बात कि वो 'विक्रम' का होली अंक भी निकालते और उसमें अनेक अंतरराष्ट्रीय राजनेताओं पर अंतरराष्ट्रीय व्यंग्य भी छापते थे। १६ पेज की संपादकीय के साथ-साथ व्यंग्यकार व्यासजी का वह रूप। साथ-साथ 'विक्रमांक' का जो सबसे बड़ा योगदान है, जो मैं मानता हूँ कि आज प्रायः लुप्त हो गया है। आज की पूरी-की-पूरी पीढ़ी अपने संस्कार दाताओं के प्रति कृतज्ञ नहीं है। मैं अकसर डॉ. सुमन से भी कहा करता था कि आपको जो प्रेम मिला है 'निरालाजी' से, अपने युग के महापुरुषों से मैंने स्मृति-लेखा में पढ़ा था, तो गंगा का जो एक प्रवाह है अपने अग्रजों से मिलता आ रहा है, उस को न रोकें, क्योंकि वह प्रवाह अपने बाद की पीढ़ियों तक जाएगा। पं. व्यासजी ने अपने अग्रजों पर विशेषांक निकाले, प्रोफेसर रमाशंकर शुक्ल विशेषांक, सिद्धनाथ माधव आगरकर 'विशेषांक' लोग कम जानते हैं। लोग माखनलालजी को 'कर्मवीर' का संपादक मानते हैं। माखनलालजी चतुर्वेदी से पहले 'कर्मवीर' संपादक सिद्धनाथ माधव आगरकर थे। उनपर विशेषांक, हृदयजी पर विशेषांक, सप्रे जी, गर्दे जी, पर विशेषांक। कई लोगों पर उन्होंने विशेषांक निकाले और उस पर लिखते हैं कि यह 'अभावों की भेंट' है।

तब हिंदी के समीक्षकों ने पद्म सिंह शर्मा ने, बनारसी दासजी चतुर्वेदी ने कहा, नहीं! यह अभावों की नहीं 'सद्भावों की भेंट' है। आज कितने लोग हैं अपने अग्रजों के प्रति इस भाव से जीते हैं? मैं नहीं जानता, इलाहाबाद में कितने लोग अब इलाचंद्र जोशी को स्मरण भी करते हों? कितने ही धर्मवीर भारती उन्होंने बनाए थे। लेकिन हमारे संस्कार दाताओं के प्रति हम किस तरह से भुलक्कड़ और कृतघ्न होते चले जा रहे हैं और उस पर से हमें यह भ्रम है कि हमें लोग याद रखेंगे। आज से १०० वर्ष पहले मुझे लगता है कि महान् लोगों, महान् विद्वानों और विचारकों की और साथ-साथ राष्ट्र भक्तों की पीढ़ी रही थी। अंधे राष्ट्र भक्तों की नहीं, जिस तरह आज चौतरफा दिखाई दे रहे हैं। महान् राष्ट्र भक्तों की पीढ़ी। लेकिन अब मुझे लगता है आज यह पूरी-की-पूरी शताब्दी 'बौनों की शताब्दी' है। अब बड़े कद के लोग पैदा होना बंद हो गए हैं। बड़ी बात करनेवाले लोग पैदा होने बंद हो गए हैं। तो अकसर मैं कहा करता हूँ कि वे पत्रिका निकालते थे साहित्य की, 'विक्रम' साहित्यिक पत्रिका थी, मगर संपादकीय टिप्पणियाँ राजनैतिक और सामयिक होती थीं। जो बाद के काल में पहल, हंस/ज्ञानोदय में भी देखने को मिलती हैं। पत्रकार पक्ष पर ये कुछ बातें हैं, जिन पर अभी काम होना शेष है, 'व्यास-उवाच', 'बिंदु-बिंदु विचार,' आज भी उतने सामयिक, प्रासंगिक हैं। हैरत में डाल देते हैं, चाहे राज्यपालों का पद समाप्त करने का उनका सुझाव या 'दल-बदलुओं पर अंकुश चाहिए', बाद में दल-बदलू विधेयक बना उनके संपादकीय आज भी उनकी प्रखर निर्भीक, साहसी पत्रकारिता की याद दिलाते हैं, 'विक्रम' पं. सूर्यनारायण व्यास के बल-विक्रम-पराक्रम-पुरुषार्थ का परिचायक बन गया था, 'पत्रकारिता' ऐसी होती है, यही याद दिलाता है उनका 'विक्रम'।

(कालिदास अकादमी में पं. सूर्यनारायण व्यास स्मृति व्याख्यान में 'पत्रकार पं. व्यास' विषय पर दिए व्याख्यान का संपादित और बेहद संक्षिप्त अंश)

बी-३०५, एम.एस. अपार्टमेंट
कस्तूरबा गांधी मार्ग
नई दिल्ली-११०००१
दूरभाष : ९८६८८१४४७५

कहानी

पुश्ते में मकान नंबर

● नीरजा माधव

एकाएक पीठ पर पैर की ठोकर से वे दोनों चिहुँककर उठ बैठे थे। ठोकर मारनेवाला आदमी अब उनके सामने खड़ा था। अँधेरी रात में कुछ दूरी पर जलती दो-तीन चिताओं की रोशनी उसके चेहरे और भद्दे शरीर पर पड़ रही थी। जटाजूट की तरह उसके उलझे-उलझे से बड़े बाल दोनों ओर की कनपटियों पर झूल रहे थे। मोटे ओठों से सुरती की पीक दाएँ-बाएँ पानी की बूँदों की तरह बहती हुई चमक रही थी। रोशनी में वह भी लाल लग रही थी। आँखों में गजब का वहशीपन, जैसे अभी उन दोनों को लील जाएँगी। उसके कंधों से फटा कंबल झूल रहा था। शायद काले रंग का या फिर धूसर या फिर कोई और रंग। चिता की रोशनी में उसका वास्तविक रंग किसी को समझ में नहीं आ सकता था। पैरों में मोटा पुराना जूता। उसी जूते की ठोकर से उन दोनों को शायद जगाया गया था।

''उठ बे! चल यहाँ से। चिता सजानी है यहाँ। बाप का बँगला समझकर शाम से ही लंबलेट हो जाते हो साले।'' उसने भद्दी सी गाली उछालते हुए सुरती की पीक उन दोनों के बगल में उगल दी और अपनी मोटी सी लाठी से वहाँ पड़ी जली-अधजली लकड़ियों को हटाने-बढ़ाने लगा। लकड़ियों के नीचे राख में दबी एकाध चिनगारी चिट्-चिट् की आवाज के साथ पुन: शांत होती जा रही थी।

लाले डर के मारे उठकर खड़ा हो गया। नींद तो उसे पहले से ही नहीं आ रही थी। निगमबोध घाट पर सोने का यह उसका पहला मौका था। उसकी हिम्मत इधर आने की नहीं पड़ रही थी, पर डान ने उसे समझा-बुझाकर राजी कर लिया था—

''यार लाले, देख इस पुश्ते में तो ठंड से अकड़ जाएँगे। अच्छा है, वहीं चले चलते हैं। आग की गरमी से कुछ तो राहत मिलेगी। अपुन की तो आदत है यार वहाँ सोने की। जाड़ा यहाँ और गरमी बरसात···।''

''उठे नहीं अभी तक तुम दोनों?''

वह फिर जल्लाद की तरह लाले और डान को देखकर गुर्राया। उसकी लाल-लाल आँखें डरावनी लग रही थीं। लाले ने घबराकर डान की ओर देखा। वह अभी भी जमीन पर पड़ी प्लास्टिक की बोरी पर बैठा नींद में झुलमुला रहा था। लाले ने खड़े-खड़े ही अपने घुटने से उसे दो-तीन टिहोका मारा।

''डान! डान, चलो भाई यहाँ से। उठो।'' घबराहट में वह सामने खड़े भयानक शक्लवाले आदमी को देख रहा था और कभी अपने साथी डान को।

जानी-मानी साहित्यकार। सात कहानी-संग्रह, सात उपन्यास, तीन कविता-संग्रह, छह ललित-निबंध एवं अन्य विधाएँ, तीन पुस्तकें अंग्रेजी में, तीन अनुवादित पुस्तकें तथा कई उपन्यास, कहानी, कविता आदि पाठ्यक्रमों में शामिल। 'सर्जना पुरस्कार', 'यशपाल पुरस्कार', 'भारतेंदु प्रभा', 'शंकराचार्य पुरस्कार', 'शैलेष मटियानी राष्ट्रीय कथा पुरस्कार' सहित कई अन्य सम्मान। संप्रति कार्यक्रम अधिशासी, आकाशवाणी दूरदर्शन।

''ऊँ हूँ, क्या है बे, सोने नहीं देता अपुन को।''

''चलो उठो, यहाँ चिता बनेगी।'' लाले ने झपटकर जमीन पर बिछी बोरियाँ उठा लीं और डान को कंधे से दबोचते हुए लगभग घसीटने लगा।

''क्या यहीं पुश्ते में रहते हो?'' वह भयानक आदमी लाले से पूछ रहा था। उसका स्वर अपेक्षाकृत नरम था।

''जी, जी, हाँ वहीं। आज ठंडक ज्यादा थी तो यहाँ ले आया। कहा, जाड़ा नहीं लगेगा वहाँ। हम चले आए।'' लाले की आवाज घबराहट से भरी थी। उसका कलेजा जोर-जोर से धड़क रहा था।

''उधर सीढ़ी पर जाकर बैठ जाओ। तीन-चार घंटे में यह जगह खाली हो जाएगी। फिर सो जाना। अभी तो रात के नौ ही बजे हैं।''

उसने अपनी कलाई घड़ी पर नजर डाली। पता नहीं उसे समय दिखाई भी दिया या नहीं। घड़ी का शीशा धीरे से चमक उठा था।

''हूँ, नहीं, हम चले जाते हैं अपनी झुग्गी में।'' वह अत्यधिक डर गया था। पूरा वातावरण उसे भयानक और रहस्यमय लगने लगा था।

''हा, हा, हा, हा। जम जाएगा बे। देख उधर। कुहरे में कुछ दिखाई पड़ रहा है?'' रात के सन्नाटे में उस डरावने आदमी की हँसी गूँज उठी।

''चल यार, तब तक यहीं बिछा।'' डान ने प्लास्टिक की बोरी उसके हाथ से छीनकर पास की खुरदुरी सीढ़ी पर बिछा दिया और धप्प से बैठ गया। उसे नींद आ रही थी। लाले की आँखों से नींद तो कब की उड़ चुकी थी। वह भी सीढ़ी पर बैठ गया। उसने अपनी पुरानी मोटी चादर को सिर से लपेट लिया और दोनों हथेलियों को कसकर बंद करते हुए अपनी जाँघों के बीच दबा लिया। थोड़ी राहत मिली, लेकिन पीठ पर

ठंड का भभका लगातार उसे हिला रहा था।

''तुमको नींद नहीं आ रही लाले?''

''नहीं।''

''मैं तुम्हारी गोद में अपना सिर रखकर सो जाऊँ?''

जब तक लाले कुछ कहता, तब तक डान उसके पेट में अपना सिर छिपा वहीं सीढ़ी पर लेट गया था। लाले को उसके स्पर्श से थोड़ी और गरमी मिली थी। चलो, कम-से-कम एक से दो भले। इस पूरे देश में कोई साथी तो है, जिससे वह अपने मन की सारी तो नहीं, पर आधी-अधूरी बातें तो कर सकता है।

सामने चिता की लकड़ियाँ सजाई जा रही थीं। दस-पंद्रह आदमी अंतिम संस्कार की तैयारियों में इधर-उधर इंतजाम करने में जुट गए थे। कोई चंदन चूरे का पैकेट हाथ में लिये था तो कोई आग का मोल-भाव कर रहा था। बाँस की टिकठी पर बँधी लाश एक किनारे रखी थी। लाले सिहर उठा। पता नहीं लाश किसकी है—औरत की या आदमी की? मरने के बाद एक ही तरह का कफन तो दोनों को ओढ़ा दिया जाता है।

उसने जाँघों के बीच दबा एक हाथ निकालकर अपने सिर की चादर को घूँघट की तरह बना लिया। हाँ, अब ठंड भी नहीं लगेगी चेहरे पर और सामने रखी लाश भी नहीं दिखाई देगी। पर इन आती आवाजों का क्या करें? सब रामायण पाठ तो करेंगे नहीं। बेचारे किस मुसीबत में होंगे। कौन होगा यह उनके घर का? हो सकता है, मेरे जैसे···।

उसके विचारों को एक ब्रेक सा लगा। गोद में लेटा डान कुनमुनाते हुए बड़बड़ा रहा था—

''ये बड़े लोग मरने के बाद भी ज्यादा जगह घेरते हैं।''

''अरे भाई चुप रहो। तुम्हारी आवाज वहाँ तक पहुँच जाएगी तो बवाल हो जाएगा। ऐसे समय में नहीं बोला जाता कुछ। आत्मा सराप देती है।''

लाले ने डान को समझाते हुए लाश को मन-ही-मन प्रणाम किया। माई ने बताया था बचपन में, कहीं भी लाश देखो तो सिर पर हाथ रख खैर मना लिया करो।

माई याद आई तो कलेजा उमड़ उठा। बाबू भी याद आए और छोटे भाई-बहन भी। चानन गाँव का अपना वह जंगली इलाका भी याद आया। छोटे-छोटे पहाड़, नदी, जंगल और जंगलों को रौंदते पहरा देते पुलिस के जवान। कभी-कभी गोलियों की तड़तड़ाहट से पूरा चानन और आस-पास का इलाका थर्रा उठता। बचपन से ही उसे तो यह सब देखने-सुनने की आदत हो चुकी थी।

अब भी कलेजा धड़कता था, पर रुलाई नहीं फूटती थी। नक्सली आक्रमण और गोलियों की तड़तड़ाहट सुन सभी अपने-अपने घरों के कोनों में दुबक जाते। सुबह होते ही सभी के घरों की तलाशी और दबिश का काम शुरू हो जाता। पुलिस को शक होता कि गाँववाले ही नक्सलियों को पनाह देते हैं। गालियों और लाठियों के बीच कई लोग अपना जुर्म कबूल भी कर लेते, तब दूसरे चैन की साँस लेते। पर एक खौफ सभी घरों में पसर जाता। कहीं नक्सली उनके इस अपराध का बदला न लें।

माई लाले को अपनी चारपाई के बगल में सुलाती और फुसफुसाते हुए समझाती, 'किसी के बहकावे में कभी मत आना। अपने राह-पैंड़े आओ, जाओ। कोई कितना भी कहे कि तुमको यह देंगे, वह देंगे, भूलकर भी हाँ मत कहना। थोड़ा पढ़-लिख जाओ, अपने पैर पर खड़े होने लायक बन जाओ तो चुपचाप शहर चले जाओ। बनारस, दिल्ली, बंबई; कहीं भी। छोटे भाई-बहन को भी वहीं रख लेना, पढ़ाना-लिखाना। हम बूढ़ी-बूढ़ा यहाँ देख लेंगे। हे बन्नी भाई, बाल, बच्चों को तुम्हीं सिरजना।' माई की फुसफुसाहट मनौती में बदल जाती।

'ये सब काहे मार-काट मचाते हैं माई?' उसकी नन्ही खोपड़ी में तब नक्सली आतंक की बातें नहीं घुसती थीं। माई की घृणा बाहर आती—'मार फुकौनन के। दहीजार सब कहते हैं कि ई जंगल, ई पहाड़, ई जमीन सब हमारी है। हम इसके मालिक हैं। दूसरे क्यों यहाँ की लकड़ी, पहाड़, गिट्टी-चूना का व्यापार करते हैं? हम बनेंगे राजा इहाँ के। इसीलिए सरकारी अफसरों अउर पुलिसवालों पर दाँव देख के घात करते हैं सब मट्टीमिला।'

माई बताते हुए उसे खींचकर अपने सीने से चिपका लेती। वह भी अपनी लंबी टाँगें उकड़ूँ-मुकड़ूँ मोड़ माई के पेट में सटा देता। एक ढाढ़स मिलता।

पंद्रह वर्ष में ही उसकी लंबाई देख उसके सहपाठी उसे लकड़बग्घा कहकर चिढ़ाते। एक दिन पड़ोस के चच्चा ने मजाक में माई से कह दिया, 'भउजी, ई तो दिन-रात ऊँट की तरह लंबा हो रहा है। जल्दी से बियाह करो। भोज-भात मिले।' माई भीतर ही भीतर कुनमुना उठी थी। रात में सोने से पहले उसे चप्पल से ओइंछ कर दरवाजे से बाहर फेंक आई थी—'अलाय बलाय सब दूर होय।' माई बुदबुदा रही थी।

'आँख फूटता है सबका देखके।' माई अब भी बड़बड़ा रही थी। वह झिलंगा चारपाई पर लेटा सुन रहा था। दोनों भाई-बहन बगलवाली चारपाई पर सोए थे। बाबू गाँववालों के साथ पहरा पर थे। स्कूल से आने के बाद बाबू-माई उसे घर से निकलने नहीं देते थे। कब नक्सलियों की नजर उस पर पड़ जाए और उसे संगठन में भेजने का फरमान जारी कर दें। इधर बीच में बड़ी तेज अफवाह फैली थी कि नक्सली कमांडर चानन गाँव और आस-पास के इलाकों के हर घर से एक-एक बच्चे को संगठन के लिए दान कर देने का फरमान जारी कर रहे हैं।

''हे भाई, उठो अब। पैर में झुनझुनी चढ़ गई है।'' एकाएक लाले पिछली यादों से वर्तमान में आते हुए डान को झिंझोड़कर जगाने लगा। झुनझुनी से ज्यादा उसे सामने जलती लाश देखकर डर लग रहा था। चिता धधक रही थी। जलती लकड़ियों के बीच से चट्-चट् की आवाज से सन्नाटा भंग हो रहा था। शायद लाश की हड्डियाँ चटक रही हों। सोचकर ही लाले की घिग्घी बँध गई। उसने पुनः डान को झिंझोड़कर जगाया। डान उसकी गोद से अपना सिर हटा जमीन पर रखकर पुनः सो गया।

''अरे यार डान, हमें डर लग रहा है। चलो, पुश्ते पर चलते हैं। और सब भी तो हैं वहाँ।''

''छोड़ो यार! उन सबके पास कथरी-गुदड़ी सब है ओढ़ने के लिए। अपुन के पास तो यही प्लास्टिक की तीन-चार बोरियाँ ही हैं न। बहुत है तो तेरी यह चादर। इतने से जाड़ा कैसे जाएगा? बैठा रह चुपचाप। कम-से-कम गरमी तो आ रही है।''

''तुम सोओ, मैं तो चला।'' लाले ने थोड़ा खिसकते हुए डान को धमकी दी, पर वास्तव में उसकी हिम्मत हार चुकी थी। डर के कारण अकेले पुश्ते तक जाना भी कठिन था उसके लिए। फिर उस पर से हाड़ कँपानेवाली यह ठंड।

उसने एक नजर कुहरे में डूबे पुश्ते पर डाली। यमुना नदी का यह बाँधवाला क्षेत्र था, जो निगमबोध घाट से लगा था। लाशों के जलने से निकलनेवाला धुआँ सीधे दिल्ली के इस उजड़े इलाके में रहनेवाले बेसहारा, बेछत, दिहाड़ी करनेवाले मजदूरों के फेफड़ों में भरता रहता है। इस उपेक्षित इलाके में लगभग चार-पाँच हजार लोग दूर-दराज के गाँवों, शहरों से कमाने के लिए आकर यहीं रात में रहते हैं। दिन भर मेहनत-मजदूरी करने के बाद भी इतनी आमदनी नहीं होती कि वे किराए पर कमरा ले सकें। यदि ले भी लेंगे तो गाँव में छूटे बीबी-बच्चों को भेजने के लिए कुछ बचेगा ही नहीं। इसलिए दिन भर दिल्ली की सड़कों, दुकानों, बिल्डिंगों में दिहाड़ी करने के बाद ये कुछ खाना-पीना खरीद पुश्ते की इस वीरान धरती को आबाद किए रहते हैं। खाने से अधिक पीना जरूरी लगता है उन्हें, ताकि धुएँ और मच्छरों की आपसी टकराहट के बीच वे कुछ घंटे सो सकें। अब पी लेने के बाद घर की याद आती है तो कोई बिरहा की तान भरने लगता है और कोई धोबऊ गीत का टेर ऊँचा उठाने लगता है। औरतों-बच्चों की संख्या तो पुश्ते में न के बराबर है।

डान बता रहा था कि पहले तो इधर कोई झाँकने भी नहीं आता था, पर जब से बँधा पर दिहाड़ीवाले मजदूर लोग रात-बिरात रुकने लगे तो कुछ बिल्डरों की भी आँख इधर नाच रही है। कोई एन.जी.ओ. वाला तो सरकार से मदद लेकर पूरे पुश्ता में शेल्टर हाउस बनाना चाह रहा है।

उस दिन भी हँस रहा था डान। कह रहा था, 'ये सब बड़े लोग, मर-मरकर दिल्ली में एक-एक बिगहा घाट घेर लिए हैं। अब पुश्ता भी एन.जी.ओ. वाले लोग ले लेंगे। धीरे-धीरे शेल्टर से होटल और बिल्डिंग बना-बनाकर बेच डालेंगे सबको। सब शहरी बाबू बनने गाँव से शहरों की ओर तो भागे आते हैं। खरीद लेंगे एक फ्लैट यहीं पर। श्मशान में रह लेंगे। क्या फर्क पड़ता है? गाँव में खेती तो नहीं करनी पड़ेगी न? रोपनी-कटनी से मतलब तो नहीं रहेगा न? स्साले कुक्कुर सब दौड़े चले आते हैं शहर की तरफ।'

डॉन हँस रहा था घृणा से और वह मन-ही-मन लाज से गड़ा जा रहा था। वह भी तो अपने माई-बाबू को गाँव में छोड़कर ही भाग आया था।

बरसात के मौसम में ही तो वह भी अपना गाँव-चानन छोड़कर शहर की ओर भाग आया था, जबकि जंगल और हरे, और घने हो उठे थे। पास बहनेवाली छिछली पहाड़ी नदी में बाढ़ सी आ गई थी। पहाड़ियों के बीच से गुजरते कँकरीले सँकरे रास्ते जंगली झाड़ियों से और अधिक ढक गए थे। ऐसे में वह नक्सलियों द्वारा दिए जा रहे घातक प्रशिक्षण को छोड़कर भाग आया था। दस-दस बच्चों के बाल दस्ते को लाठी, भाला, तलवार, बंदूक चलाने और घिर जाने पर पहाड़ियों के बीच से सरपट दौड़ लगाने का प्रशिक्षण दिया जा रहा था। यहाँ आने पर ही उसे पता चला था कि उसकी तरह अनेक स्कूली लड़के-लड़कियाँ नक्सली प्रशिक्षण शिविरों में ट्रेनिंग ले रहे हैं। उन सबका नाम स्कूलों में लिखा है, परंतु भयवश प्रत्येक परिवार का एक बच्चा यहाँ के बाल दस्ते से जुड़ा हुआ है। अपनी तथा अपने गाँव की सुरक्षा के नाम पर इन बाल दस्तों को तैयार किया जा रहा था। उसे भी अपनी कक्षा आठ की पढ़ाई छोड़नी पड़ी थी। माई बिल्कुल नहीं चाहती थी कि वह बाल दस्ते में शामिल हो, पर बाबू की जिद और मजबूरी को देखते हुए तथा पूरे परिवार की सुरक्षा के कारण माई ने भारी मन से हामी भर दी।

जिस दिन पहली बार उसे बाल दस्ते की ट्रेनिंग में जाना था। उस रात उसे और माई को भी नींद नहीं आई थी। कई तरह की शंकाएँ और डर उसके हृदय की धुक-धुक बढ़ा देते। रात भर उठकर वह पानी पीता रहा था और माई की आँखों से लगातार गिरते खारे पानी को महसूस करता रहा था।

लाले ने अपनी आँखों को हथेली से रगड़ा। इस समय उसकी आँखें भी खारे पानी से नम थीं। पता नहीं ठंड से या पिछली बातें याद करते हुए अनायास ही दुःख से। उसने सिर पर चादर को और जोर से कसते हुए बगल में सीढ़ी पर लेटे डान को देखा। चादर की घूँघट के नीचे से उसने एक नजर सामने जलती चिता पर भी डाली। धधकती चिता में से लाश का एक हाथ धीरे-धीरे पिघलकर ऊपर की ओर उठ रहा था। आस-पास खड़े किसी आदमी ने डंडे से उसे दबा दिया। लपटें फिर से ऊपर की ओर उठने लगी थीं। लाले सिहर उठा। सामने पुश्ता कुहरे में डूबा था, पर यहाँ निगमबोध घाट पर दूर-दूर तक कुहरा न था। बस दो-चार आवारा कुत्ते घूम रहे थे। उनमें से एक उसे सूँघते हुए बगल में सीढ़ी पर टाँग उठा पेशाब कर चला गया था। लाले दुर्र-दुर्र करता रह गया था। उसने पुनः कनखी से सामने जलती चिता को देखा। इस बार कमर की हड्डी पर लाठी से वार किया जा रहा था। कोई कह रहा था, ''तोड़ दो। डरो मत। जल्दी जलेगी, नहीं तो पड़ी रह जाएगी।''

उसके रोंगटे खड़े हो गए। अपनी पंद्रह वर्ष की उम्र में आज तक उसने लाश सामने जलती नहीं देखी थी। उसे याद आया था कमांडर का फरमान—जब दो पुलिसवालों की हत्या करने के बाद उसके बाल दस्ते

के दो सदस्यों को जिम्मेदारी दी गई थी, 'ले जाओ, इस लाश को घसीटते हुए, सड़क के बीचो-बीच डाल आओ, जहाँ आते-जाते लोगों की निगाह पड़े। कमर पर लाठी मार-मारकर हड्डी चकनाचूर कर दो सालों की।'

खून से लथपथ वरदी में जवानों की लाशें देख वह भयभीत हो उठा था। उसके गले से आवाज नहीं फूट रही थी। इन दोनों सिपाहियों को अभी कल शाम ही तो उसने जंगल में गश्त करते देखा था। बेचारों का क्या गुनाह था? वे तो अपने परिवार का पेट भरने के लिए ही यह ड्यूटी कर रहे थे। उनके परिवार पर क्या बीतेगी? हाथ में पकड़े भाले पर उसकी हथेलियाँ थरथराने लगीं। टाँगों का काँपना रुक ही नहीं रहा था।

शाम को घर न लौटकर वह वाराणसी जानेवाली बस में चढ़ गया था। पर जेब में इतने पैसे होते थे कि वह कहीं आ-जा सके। उसने बनारस से दिल्ली वाली ट्रेन पकड़ी थी और चुपचाप दिल्ली की भीड़भाड़ में एक गुमनाम लड़के की तरह शामिल हो गया। अधिकतर समय वह गमछे से अपना मुँह बाँधे रखता, ताकि उसे कोई पहचान न सके। धीरे-धीरे उसे विश्वास हो गया था। दिल्ली उसके लिए सुरक्षित थी। दुकानों और फैक्टरियों में वह माल उतारने-चढ़ाने का काम करके कुछ-न-कुछ कमा लेता। रेलवे प्लेटफार्म के किसी बेंच पर सो जाता। पैसों की कमी होने पर पाव या बिस्कुट से काम चल जाता।

वहीं प्लेटफार्म नंबर चार पर खाली रेलवे लाइन के बीचोबीच गंदगी में फेंकी प्लास्टिक की बोतल उठाते हुए डान को उसने पहली बार देखा था। सुबह का समय था। अलसाया हुआ वह बेंच पर ही लेटे-लेटे कूड़ा बीननेवालों को देख रहा था। प्लेटफार्म पर झाड़ू लगानेवाला बिना किसी यात्री को पूर्व सूचना दिए कूड़े का अंबार शरीर से छुआते हुए निकाल रहा था। ट्रेन के इंतजार में यात्री स्वयं को उस गंदगी से बचाते हुए इधर-उधर खिसक जा रहे थे। इस बीच डान अपनी बोरिया में एक पिचकी सी बोतल भरते हुए उसकी बेंच पर एक ओर आकर बैठ गया। वह थोड़ा खिसक गया। उसे घिन आई थी डान को छूने में। रेल की पटरियों के बीच पसरी गंदगी को अभी भी देख सकता था वह।

'क्यों, घर से भागकर आए हो?' डान ने पान मसाला का पाउच दाँत से काटते हुए उसे अपने मुँह में भुरभुराते हुए पूछा। इस अप्रत्याशित प्रश्न से लाले अचकचा उठा था। कैसे इसे पता चल गया कि वह घर से भागकर आया है। उसने हकलाते हुए उत्तर दिया, 'हाँ···नहीं···हाँ, काम की तलाश में।'

डान ठठाकर हँसा।

'सब काम की तलाश में ही तो इधर भागकर आते हैं साले। अपने गाँव-घर में काम उन्हें दिखाई नहीं देता। खेत-क्यारी, फरसा-कुदाल, हल-बैल, गाय-गोरू और माँ-बाप की सेवा उन्हें काम नहीं लगता। एक चाय की दुकान ही खोलकर बैठ जाते भइया। क्या बुरा था। काम नहीं था वह?'

वह किसी फिल्मी हीरो की तरह अपने बालों को झटकते हुए भारी आवाज बनाकर बोल रहा था। लाले सिटपिटा उठा। लगा, किसी ने उसे रँगे हाथों चोरी करते पकड़ लिया हो।

'पढ़ते थे गाँव में?' डान ही फिर पूछ रहा था।

'हाँ, आठवीं में।' उसने अपने ओठों पर जीभ फिराते हुए कहा।

'मन नहीं लगा होगा या फिर पड़ गए होगे लड़की-सड़की के चक्कर में? आँ ऽऽ है न?'

डान फिर हँसा। अपनी उम्र से बड़ों की तरह का उसका व्यवहार लाले को चुभने लगा। नाटे कद के डान की उम्र लगभग उसकी अपनी उम्र के बराबर ही रही होगी, पर उसकी बड़ी-बड़ी बातों से लाले का जी उकता रहा था। वह कुछ कड़ा जवाब देने के लिए मन-ही-मन सोच रहा था कि तब तक डान पुनः बोल उठा। लाले ने अपनी भावी योजना उसके सामने रख दी थी।

'क्या कोठरी लेने भर का कमा लिया तुमने?'

'हजार पाँच सौ की कोई छोटी सी लूँगा पहले। बाद में कमाई बढ़ेगी तो देखा जाएगा।'

लाले की आँखों में एकाएक सपना मचल उठा। मन-ही-मन वह अपने परिवार को चानन गाँव की घुटन से बाहर निकाल ले आने की तरकीब सोचने लगा था, पर डान के ठहाके से उसके विचार छिन्न-भिन्न हो उठे। डान ठठाकर हँसते हुए कह रहा था—

'पाँच सौ में यहाँ एक मुरगी का दड़बा भी किराए पर न मिले, तुम कोठरी की बात कर रहे हो? सुना है, किराए पर देने से पहले लाखों रुपए तो मालिक पगड़ी का वसूल लेता है।'

डान की आँखें हँसी से पनीली हो उठी थीं।

'पगड़ी क्या?' लाले विवशता में पूछ रहा था। उसकी आशाओं पर क्षण भर में पानी फिर गया था।

'कमरा लेने से पहले सिकोर्टी मनी।'

डान उसकी नादानी पर अब भी मुसकरा रहा था। लाले की उदासी गहरा उठी।

'तुम कहाँ रहते हो?' लाले ने थके स्वर में पूछा।

'मैं तो पुश्ता में रहता हूँ। अपुन की एक आठ बाई आठ की झुग्गी है प्लास्टिक की।'

'उसका भी किराया देते हो?'

'नहीं। अभी तो पुश्ता का कोई मालिक नहीं। सरकारी जमीन है वह।' डान ने दोनों पैर बेंच पर फैलाते हुए जवाब दिया।

लाले की आँखों में चमक जाग उठी।

'क्या मैं··· ?'

'हाँ, मैं वही कहना चाहता था। चाहो तो मेरी झुग्गी में मेरे साथ रह सकते हो। रहना कहाँ होता है। दिन भर दिहाड़ी और रात में कभी-कभार ही उसमें सो पाते हैं। कभी मच्छर, तो कभी बदबू। अपुन तो हाईवे के डिवाइडर पर ही मजे में रहता है। न कुल्ला, पेशाब की दिक्कत और न मच्छर, साँप, गोजर की।'

'क्या वहाँ साँप रहते हैं?' लाले को अपने गाँव का झाड़-झंखाड़

से भरा रास्ता याद आ गया। जहाँ बरसात होते ही विषैले साँप-बिच्छू इधर-उधर रेंगने लगते हैं।

'अरे भाई, उन सबके रहने के लिए भी तो दिल्ली में जगह चाहिए? उनके लिए नहीं न कोई एन.जी.ओ. वाला शेल्टर हाउस बनवाएगा। पुश्ते से अच्छा क्या होगा?'

डान हँसा जोर से।

'ये पुश्ते कहाँ है?' लाले पूछ बैठा।

'अरे, वही जमुना नदी के बाँधवाला इलाका, जो निगमबोध घाट से लगा है। उजाड़ इलाका है दिल्ली का। पर हमारे-तुम्हारे जैसे हजारों लोग वहाँ रहते हैं। चलोगे मेरे साथ?' डान पूछ रहा था।

'क्या लोगे किराया?' लाले सबकुछ साफ-साफ पूछ लेना चाह रहा था। उसे एक ऐसे स्थान की तलाश थी, जहाँ वह दिहाड़ी करने के बाद सस्ते में रह सके और सुरक्षित भी रहे।

'मैं कोई किराया तो देता नहीं वहाँ का कि तुमसे भी लूँ। हाँ, कभी खाना पकाया जाएगा तो खर्च को मिल-बाँट लेंगे। वैसे तो ज्यादातर मैं यहीं प्लेटफार्म से ही पूड़ी-सब्जी या रोटी-वोटी खरीद लेता हूँ। तुम भी यही करना। पैसे-वैसे सँभालकर रखना। वहाँ छोड़कर आने लायक नहीं।'

डान ने बातें साफ-साफ कह दी थीं। उसने डान के साथ रहने का निर्णय ले लिया था। तब से दोनों दिन भर अपने-अपने काम करते और शाम होते ही प्लेटफार्म पर इकट्ठा होते। कुछ खाने-पीने की चीजें खरीदते और कभी पुश्ते में तो कभी रोड डिवाइडर पर सो जाते। रोड डिवाइडर पर लाले को नींद नहीं आती। एक हाथ की दूरी से गुजरती ट्रकें, बसें और गाड़ियाँ उसका कलेजा दहला देतीं। वह लगातार खुली आँखों से दूर से आती गाड़ियों की लाइट को देखता रहता। कहीं ड्राइवर को झपकी तो नहीं आ रही। जरा भी गाड़ी लहराती दिखाई पड़ती तो वह चौकन्ना होकर बैठ जाता। डिवाइडर पर चढ़ते ही वह कूदकर उस पार हो जाएगा। गाड़ी सर्र से आगे निकल जाती तो उसे साँस आती, पर तभी पीछे से कोई दूसरी गाड़ी दिखाई दे जाती। वह कुढ़कर डान की ओर देखता। वह अपनी चादर में मुँह लपेटे आराम से नाक बजा रहा होता।

''क्या यार, तुम्हें नींद नहीं आ रही है?''

इस समय निगम बोध की सीढ़ी पर लेटे डान ने कछुए की तरह अपना सिर चादर से बाहर निकालते हुए पूछा। लाले कब से बैठे-बैठे अपने अतीत के धागे जोड़-तोड़ रहा था।

''ऊँ हूँ।'' उसने घुटनों पर अपना सिर टिकाते हुए छोटा सा उत्तर दिया। सामने चिता जल रही थी। वह भयानक चेहरेवाला आदमी अब चिता के ठीक दूसरी ओर खड़ा था। उसकी लाल आँखें और झूलती लटें और भयानक लग रही थीं। उसने अपना कंबल उतारकर कहीं रख दिया था। मोटी सी बदरंग टी शर्ट के ऊपर आधे बाँह का काला जैकेट और कमर पर बँधी लुंगीनुमा धोती में वह विचित्र लग रहा था। एकटक चिता की ओर देखते हुए वह कुछ बुदबुदा रहा था। आसपास खड़े लोग चिता के जल्दी जल जाने की प्रतीक्षा कर रहे थे। बीच-बीच में लाठियों से लकड़ियों को अंदर की ओर ठेल रहे थे।

अब डान उठकर अपनी जगह बैठ गया था। उसने जम्हाई लेते हुए सामने चिता पर निगाह डाली और बड़बड़ाया—

''क्या यार, इनको रात ही में मरना था? चैन से सो रहे थे हम।''

लाले के बदन में झुरझुरी सी दौड़ रही थी।

''अभी चिता ठंडी हो जाएगी तो इसमें आलू भूनने लायक खूब अच्छी आग होती है। एक किलो ले आना चाहिए था। सुबह उठते ही गरमागरम आलू और नमक का नाश्ता तैयार।''

बोलते हुए डान अपने पैंट की जेब में पुड़िया टटोलने लगा था। इस समय उसे पान मसाला की तलब लगी थी।

''चिता में आलू भूनोगे?'' लाले हैरान था डान के प्रस्ताव पर।

''तो क्या गुरु? वो जो खड़ा है डोमराजा, उसके परिवार का पूरा खाना ही पकता है यहाँ। आटे की गोल-गोल बाटी, आलू-बैंगन भूनकर चोखा और बहुत हुआ तो घर में दाल-चावल बना लिया।''

लाले को उबकाई सी आई थी भीतर से यह सोचकर कि किसी की जली लाश के ऊपर खाना पकाया जाए।

उसके बाद उन दोनों के बीच एक लंबा सन्नाटा खिंच गया था। दोनों ताक रहे थे निर्निमेष।

''चलो बेटा, माँ की चिता ठंडी कर दो। यह घड़े का जल अपने कंधे पर रख पीछे की ओर लुढ़का देना और फिर पीछे मत देखना।''

लाश का अंतिम संस्कार करवा रहे आदमी की आवाज रात के सन्नाटे में लाले के कानों को भी बेध गई थी। उसे अपनी माई याद आई थी और आँखें डबडबा आईं। उसने दोनों हाथ जोड़कर सामने चिता की ओर आत्मा को प्रणाम करते हुए सोचा—सुबह होते ही वह अपनी माई को पत्र लिखेगा। झूठ ही सही, उसके संतोष के लिए लिख देगा कि वह एक फौजी के बँगले पर नौकरी कर रहा है। तनख्वाह अच्छी है। जल्दी ही वह पैसा भी भेजेगा। इससे माई को संतोष होगा कि उसका बेटा कहीं गलत लोगों के हाथ में नहीं पड़ा है। नई दिल्ली में पुश्ता का पता माई को लिख भेजेगा। यह भी लिख देगा कि पुश्ता में मकान नंबर नहीं होता। पत्र उसके नाम से ही मिल जाएगा और यह भी लिखेगा कि पुश्ते में अपने चानन की तरह डर नहीं लगता।

लाले का मन हल्का हो उठा था। वह अब अपलक चिता की ओर देख रहा था।

डान ने पान मसाला की पीक मुँह में लिये-लिये कहा—

''कल चलो यार, मॉल में सिनेमा देखते हैं। रोज-रोज तो यही किच-किच रहेगी।''

लाले उसे बिना सुने अब भी एकटक चिता की ओर देख रहा था।

मधुवन
सा. १४/५९८, सारंगनाथ कॉलोनी,
सारनाथ, वाराणसी-२२१००७
दूरभाष : ०९७९२४११४५१

हिंदी कथा-साहित्य में नारी

● राहुल

हिंदी कथा-साहित्य में नारी की बहुपक्षीय समस्याएँ एवं उसकी परेशानियों, संघर्षों की सूक्ष्म एवं गहरी अभिव्यक्ति हुई है। इस अभिव्यक्ति में तटस्थता एवं संतुलन का दामन कहानीकारों ने पकड़ा है। उन्होंने मूल्य-मर्यादाओं के झूठे भाषाजाल से मुक्त रहकर समस्याओं को सही परिवेश में रखकर अभिव्यक्ति देने की कोशिश की है। कहानी में नारी पात्रों को अब न तो मूल्य-मंडित करने की कोशिश की गई है, न बेवजह मूल्य-मर्यादाओं को उतार फेंकने की। वर्तमान परिवेश में आज की नारी-मन के आंतरिक तनावों, अंतर्द्वंद्वों और उसकी आवश्यकताओं का तटस्थ विश्लेषण कमलेश्वर, राजेंद्र यादव, गिरिराज किशोर, महेंद्र मल्ला, दीप्ति खंडेलवाल, चंद्रकांता आदि ने किया है।

कार्यशीला नारी में आत्म-सम्मान का बोध होता है और वह अपने को आत्मनिर्भर भी महसूस करती है किंतु उसकी सबसे बड़ी समस्या तब उठती है, जब उसे परपुरुष से भरे हुए कामुक माहौल में काम करना पड़ता है। वह कई अकारणों से भी संदेहों के घेरे में देखी जाती है। सवाल यह उठता है कि फिर महिलाएँ काम करें भी तो कैसे? भले ही वे परंपरित सीमाओं में बँधी रहें और नारीत्व की सारी मर्यादाओं का पालन करें, पर पुरुष की कुसोच और कामुकता भरी दृष्टि से वह बच नहीं सकती। क्योंकि वह सहकर्मी पुरुषों से कई कोणों-मोड़ों पर टकराती है। कार्यशीला (नारी) को समाज अपने पारिवारिक आर्थिक उन्नति के लिए तो स्वीकारता है किंतु शील की मर्यादा को तोड़कर पुरुषों की बराबरी में खड़ा होने देना नहीं चाहता। ऐसी कोशिश जहाँ भी होती है, दांपत्य-जीवन चरमरा उठता है। यों भी जहाँ नारी का आर्थिक स्तर पुरुष से ऊँचा हो तो टकराव होना स्वाभाविक है। पति यदि क्लर्क है और पत्नी अधिकारी तो पति व्यक्तित्वहीनता से ग्रस्त दिखता है। गिरिराज किशोर की 'फ्रॉकवाला घोड़ा' और 'निकरवाला रईस' ऐसे ही स्तर-भेद की कहानी हैं।

वस्तुत: दांपत्य दो आयामों का ही पवित्र संगम है और हजारों सालों से केवल दो को ही दांपत्य-जीवन का परम आदर्श माना जाता रहा है। जब दो की अवधारणा विकल होने लगती है तो दांपत्य संकट में पड़ जाता है। किंशू आज वैयक्तिक, मनोवैज्ञानिक, जैविक और सामाजिक यथार्थ कुछ इस तरह का हो गया है कि उसमें आंतरिक रूप में कुंठा, अहं आदि अथवा बाह्य रूप से (पति का मित्र या पत्नी का प्रेमी) तीसरा घुसा आ रहा है। यह दांपत्य-जीवन के लिए बहुत बड़ा संकट है। आज की कहानियों या उपन्यासों में पति-पत्नी के रिश्ते की पवित्रता और गहराई का पर्दाफाश बड़ी बेबाकी से किया जा रहा है।

सदियों से लेकर आज तक नारी शोषण का शिकार होती आ रही है और भविष्य में भी होती रहेगी, यह ध्रुव सत्य है। हम चाहे कितनी स्त्री-पुरुष समानता, अधिकार और शोषण-मुक्ति की बातें करें, संविधान की दुहाई दें, मगर पुरुष प्रधानता को जड़ से निकालना मुश्किल है। यद्यपि आज की नारी पहले जैसी उपेक्षिता और संत्रासिता नहीं है, किंतु आत्मनिर्भर होकर भी वह पुरुषाधीन ही है। किसी मामले में वह स्वतंत्र निर्णय नहीं कर सकती और न ही उसके विचारों को उतना महत्त्व दिया जाता है। पहले वह दासी, अनुचरी थी, अब अर्थ कमानेवाली कामगारी बनकर रह गई है।

प्रसाद ने अपनी रचनाओं में नारियों को सदियों की दासता से मुक्त किया तथा उसे सामाजिक अधिकार प्राप्त कराकर अपना उदार दृष्टिकोण प्रस्तुत किया। उन्होंने नारी भावना का उदात्तीकरण किया है। प्रसाद की तरह पंत का भी उदार दृष्टिकोण इन्होंने अपकार से मुक्त कर अपूर्व शक्ति और जागृति प्रदान की है। निराला ने भी नारियों के प्रति उदार दृष्टिकोण दिखलाया है। इन्होंने नारी को समाज में पुरुष की तरह स्वतंत्र, स्वावलंबी और सक्रिय बनाने का प्रयत्न किया। महादेवी ने नारी के उत्थान की बात की है।

नारी को पुरुष ही नहीं, स्वयं नारी भी प्रताड़ित करती है। संयुक्त परिवार में कई समस्याएँ पैदा होती हैं, सास-बहुओं में परस्पर झगड़ों से

जाने-माने आलोचक-कवि। 'प्रजातंत्र, कहीं अंत नहीं', 'जंगल होता शहर', 'महानायक सुभाष', (कविता-संग्रह), 'युगांत' (प्रबंध काव्य) चर्चित; संपादित कृतियों में 'बीसवीं सदी : हिंदी के मानक निबंध (४ भाग)', 'बीसवीं सदी : हिंदी के मानक निबंध (२ भाग), (आलोचना) 'विपक्ष का कवि : धूमिल', 'गिरिजा कुमार माथुर', काव्य दृष्टि और 'अभियोजना शमशेर और उनकी कविता', दर्जन भर बाल-साहित्य और राजभाषा हिंदी से संबंधित पुस्तकें भी। हिंदी अकादेमी एवं अन्य साहित्यिक-सांस्कृतिक संस्थाओं से सम्मान प्राप्त।

विघटन की स्थिति उत्पन्न होती है। कहीं-कहीं विषम आर्थिक परिस्थितियाँ भी विघटन, क्लेश और झगड़े का कारण बनती हैं। थोड़ी देर के लिए मान लिया जाए कि कार्यशीला स्त्रियाँ इसमें अपनी अहम भूमिका निभा सकती हैं, जबकि पहले से ही उपेक्षा और तिरस्कार का शिकार बनीं बहुतेरी महिलाएँ अवसाद के आँसू पीकर चुप रह जाती हैं। कामकाजी औरतों की दुर्दशा भी है। पुष्पलता की 'तेजाब' कहानी में ऐसी ही नारियों का मार्मिक चित्रण हुआ है। नरेश मेहता के 'यह पथ बंधु था' में विघटनोन्मुख परिवार को अभिव्यक्ति मिली है, 'जब व्यक्ति को शुरू के दिन में ही बहुत कुछ देखना पड़ जाए तो उसकी वाचा न जाने क्यों चली जाती है।···जिज्जी ने मानो हमेशा के लिए शैया पकड़ ली। विभिन्न कड़िया हैं, जो हम सबकी छिन्न-भिन्न हो जाने के लिए आतुरता से अपनी-अपनी दिशा में और लगाकर टूट जाना चाहती हैं।'

रमेश बक्षी की 'बैसाखियों वाली इमारत' की नायिका द्वारा अपने भावों को यों व्यक्त किया गया है, 'मैं आपको झटक नहीं सकती, इसलिए कि मूल्य तथा मेरे तर्क और मेरी दृष्टि आपसे अलग होकर कुछ सोचने को तैयार ही नहीं है। अंतर केवल इतना है कि बिना कुछ सोचे-समझे एक जाम में आप चाहें जो कर गुजरना चाहते हैं और मैं जो कुछ भी करना चाहती हूँ, उसके लिए रास्ता बनाती हूँ। मैंने अब तक यदि आपको अस्वीकार किया है तो, और स्वीकार किया है तो।'

प्रत्येक नए मूल्य एवं धारणाएँ सामाजिक संगठन तथा व्यवस्था को प्रभावित करते हुए सामाजिक परिवर्तन का कारण बनते हैं। सामाजिक परिवर्तनों ने मनुष्य की इसी आधारभूत सामाजिक संस्था को प्रभावित किया है। वैवाहिक संबंधों में भावात्मकता के स्थान पर बौद्धिकता के महत्त्व ने संयुक्त परिवार के साथ-साथ मूल परिवारों के आधार-स्तंभों को भी प्रभावित किया है। लेकिन वही परिवार जब पति-पत्नी के रूप में एक परिवार में परिणत होता है तो आर्थिक दबाव या आगे बढ़ने की भूख का जन्म होता है और फिर पत्नी के पाँव घर की ड्योढ़ी से बाहर निकलते हैं। यह कोई गलत या असामाजिक पहल नहीं है, लेकिन कभी-कभार पुरुषों को अपना बॉस मान बैठने की बेबसी उसके व्यक्तित्व और अस्तित्व के लिए खतरा भी बन जाती है। सरकारी नौकरियों में पदोन्नति 'अति उत्तम' का रिमार्क लिखावाने या अन्य सुविधाओं के तहत स्त्री को अपने अस्तित्व से समझौता करता पड़ता है और फिर शुरू हो जाता है आँख मिचौली, प्रेम, रोमांस का रंगीन खेल। रमेश बक्षी की 'बैसाखियों वाली इमारत' की नायिका द्वारा अपने भावों को यों व्यक्त किया गया है, 'मैं आपको झटक नहीं सकती, इसलिए कि मूल्य तथा मेरे तर्क और मेरी दृष्टि आपसे अलग होकर कुछ सोचने को तैयार ही नहीं है। अंतर केवल इतना है कि बिना कुछ सोचे-समझे एक जाम में आप चाहें जो कर गुजरना चाहते हैं और मैं जो कुछ भी करना चाहती हूँ, उसके लिए रास्ता बनाती हूँ। मैंने अब तक यदि आपको अस्वीकार किया है तो, और स्वीकार किया है तो।'

आज प्राय: औरतें संयुक्त परिवार को अपने व्यक्तित्व और जीवन के विकास में बाधक मानती हैं। उनका मानना है कि सारा समय या तो समस्याओं को बनाने में या समस्याओं को सुलझाने में लग जाता है। लड़ाई, झगड़ा, खींच-तान, बदला, ग्लानि सब मिलकर माहौल ऐसा विषैला या दमघोंटू बना रहता है कि आप साँस नहीं ले सकते। यही नहीं, ऐसी औरतों की स्वतंत्रता या स्वच्छंदता खत्म हो जाती है, क्योंकि उन पर 'संयुक्त' की मर्यादा या दबाव बना रहता है। इसके विपरीत कामकाजी स्त्रियों को दोहरा दायित्व निभाना पड़ता है, दिन भर ऑफिस में कार्य, काम का बोझ, बॉस की डाँट और घर में सास-ससुर की सेवा आदि से आज अनेक स्त्रियाँ अलग रहना पसंद करती हैं। इससे जिम्मेदारियाँ कम रहेंगी और खर्च भी कम होगा। महिला अधिकारी हो या सामान्य कर्मी, नौकरी करने के लिए नगरों, महानगरों में आ बसी हैं। कभी-कभार उसे प्रेमिका की भूमिका भी निभानी पड़ती है। चरित्र वैषम्य समाज की विकृतियों का बिंबांकन करता है। नए शब्दार्थ में प्रेम त्याग-बलिदान जैसे आदर्शों के बजाय जीवन की अनिवार्यता और व्यावहारिकता से जोड़कर देखा जाने लगा है।

आर्थिक-सामाजिक विषमता के कालचक्र में पड़ते हुए दोहरी जिंदगी जीते हुए पात्रों की कुंठाओं का उद्रेक करते हुए स्त्री-पुरुष संबंधों की यथार्थता को परखा जा सकता है, जहाँ पति-पत्नी के बीच तीसरा केंद्र बन जाता है। पत्नी का झुकाव तीसरे केंद्र की ओर बढ़ता है और पति के साथ तनाव पैदा हो जाता है। राजेंद्र यादव की 'पंख की खोज' में पति को परस्त्री गमन में रत देखकर अपने को आत्मग्लानि से प्रेरित पत्नी इसको व्यभिचार मानती है, 'ऐसे व्यक्ति के साथ, जो अपनी नीच प्रवृत्ति की इतनी स्पष्ट अभिव्यक्ति कर चुका है, रहूँ या रहूँ ही नहीं, उसे प्यार करूँ उसके लिए, उसके साथ जब उसका हुक्म हो तो उसकी वासना की तृप्ति के लिए सोऊँ।' इसी प्रकार 'बैसाखियों वाली इमारत' की सुंदर पत्नी अपने पति के अन्य स्त्रियों से संबंध को सहन नहीं कर पाती है, 'शराब तो पीते हो, रोज रात को किसी वेश्या के कोठे पर चले जाइए। आप घर को धर्मशाला समझ सकते हैं, बीवी को वेश्या नहीं समझ सकते।' दीप्ति खंडेलवाल की 'वह तीसरा', शिवानी की 'प्रतिशोध' और 'सौत' शीर्षक कहानियाँ गौरतलब हैं। उषा प्रियंवदा की 'मछलियाँ' भी इसी कोटि की कहानी है।

अधिकांश कहानियों में नारी की इसी ऊहापोह की स्थिति की प्रस्तुति हुई है। कामकाजी नारी का क्षोभ एक प्रकार से व्यापक हो जाता है, अत: उसमें अपने व्यक्तित्व की प्रतिष्ठा की चाहना भी प्रबल हो जाती है। मूल्य संक्रमण की स्थिति में वेश्यावृत्ति आज देश की ही नहीं, अंतरराष्ट्रीय समस्या बन गई है। वेश्याएँ पैदा नहीं होतीं, बल्कि पुरुष

समाज अपनी हवस के लिए औरत को वेश्या बनाता है। कुछ औरतें भी हैं, जो पेट की भूख मिटाने के लिए मजबूरी में वेश्या बनती है; अपने तन का सौदा करती हैं, अपनी लज्जा बेचती हैं, धन के लिए नग्न होती है नारी। वेश्या (सेक्स वर्कर्स) कर्म भी रोजी-रोटी से जुड़ा व्यवसाय है। यह व्यवसाय सामाजिकता, नैतिकता, मानवता की हर सीमा को लाँघकर आगे निकल गया है। एक समय था जब खानदानी वेश्याएँ नृत्य-गायन आदि कलाओं में निपुण थीं, उस जमाने की वारांगनाएँ धन की प्राप्ति के लिए नाचती थीं, गाती थीं, लेकिन वे घृणित-तिरस्कृत नहीं थीं। आज न वे महफिलें हैं, न उसके दर्दी रसिक, न नृत्यगान करनेवाली कलावृत्तियाँ। समय के साथ वेश्या ने अपना रुख बदल दिया है। स्त्रियाँ केवल व्यभिचारिणी बन गई हैं। वेश्या के पास केवल शरीर बच गया है। स्त्री वेश्या से कालगर्ल बन गई है। और न मालूम किन-किन रूपों में आज स्त्रियाँ बिक रही हैं और बेच रही हैं अपना जिस्म। आर्थिक विषमता, विवशता, विपन्नता की दृष्टि से देखों तो इधर की अधिकांश कहानियों में प्रेम को यौनाचार, शारीरिक भूख और जैविक आवश्यकता से जोड़कर ही चित्रित किया गया है।

प्रसंग से जुड़कर कहें कि आज कामकाजी स्त्रियों के भी कई रूप और चरित्र हैं। स्त्रीत्व और पत्नी का निर्वहन करनेवाली स्त्रियों को हम आकलित करते हुए कह सकते हैं कि जब स्त्रियाँ पुलिस, सेना, पायलट, खेल, शिक्षा, राजनीति, लेखन, फिल्म, पत्रकारिता, कला-विज्ञान आदि विभिन्न क्षेत्रों में अपना वर्चस्व बनाकर एक कीर्तिमान स्थापित कर रही हैं तो उनके बीच से प्रेम और संबंधों को अलग करके नहीं देख सकते। स्त्री की चारित्रिक कमजोरी ही उसे स्खलित करती है। वरना क्या मजाल कि पुरुष उसे कुदृष्टि से निहार सके, उसे अपनी हवस का शिकार बना सके। आज कामकाजी स्त्रियों को और मजबूत बनना होगा और कथात्मक चरित्र से बाहर निकलकर एक नए रूप का निखार करना होगा! इस मिथ को भी तोड़ना होगा, जहाँ उसे 'श्रद्धा की मूर्ति', 'आँचल में दूध और आखों में पानी' कहकर संवेदना जताई गई है। उसे एक वीरांगना बनकर अपने अस्तित्व का द्योतन करना होगा और कहना होगा, नारी सिर्फ अबला नहीं सबला है। जैसा कि २६ जनवरी को गणतंत्र दिवस की परेड में तीनों सेनाओं में प्रमुखता का प्रदर्शन कर सिद्ध कर दिया कि 'एक नहीं दो-दो मात्राएँ नर से बढ़कर नारी।' परंतु सामाजिक सोच का सच इससे कुछ और ही है—ईद के बकरे की तरह कुछ कथाकार अपने पात्रों को पालते और ढालते हैं। अपनी कहानियों में वे वैयक्तिक स्पर्श देना चाहते हैं और यौन-प्रसंगों की अश्लीलता को दिखाने में तनिक भी नहीं हिचकते। इसे तिरोहित प्रतिभा की करुण शक्ति कह सकते हैं अथवा मानसिक विकृति की अभिव्यक्ति भी।

यकीनन आज देश में हर क्षेत्र में नारियों का अपूर्व योगदान गौरतलब ही नहीं, प्रशंसनीय है। वह सामान्य दरजिया भोक्ता के रूप में सीमित न रहकर अपनी स्वतंत्र अभिव्यक्ति का साहस दिखाती है। यशपाल के 'मेरी-तेरी उसकी बात' की उषा सामाजिक जाति का सूत्र समाज को तोड़ना न मानकर मोड़ना कहती है। जैनेंद्र के 'अनाम स्वामी' की उदिता विश्वविद्यालय में व्यक्ति स्वातंत्र्य का पाठ पढ़ाती है। अज्ञेय के 'नदी के द्वीप' की रेखा को अपने संस्कार के बल पर भावुकता को जीत लेना और परिस्थिति पर विजय पाना अच्छी तरह आता है।

शिक्षित नारी कामकाज को बड़ी खूबी से शीघ्र करती है। उसमें उसकी समझ और सामर्थ्य की गुणवत्ता रहती है। इसीलिए आज नारी में शिक्षा के प्रति क्रांति आई है। केंद्रीय सरकार ने नारी शिक्षा को विशेष बढ़ावा देने के लिए नई नीतियाँ जारी की हैं और तरह-तरह के प्रोत्साहन दिए जा रहे हैं। नारी शिक्षा निहायत जरूरी है, क्योंकि यदि एक माँ शिक्षित होती है, एक पीढ़ी शिक्षित बनती है। वस्तुत: शिक्षा का उद्देश्य ज्ञान, कर्म और चरित्र निर्माण है।

स्वाधीनता के पश्चात् नारी की समुचित प्रगति के लिए महत्त्वपूर्ण कदम उठाए गए। फिर भी आज की नारी की वास्तविक स्थिति संतोषजनक नहीं कही जा सकती। खंदक और खाई में काम करनेवाली, ईंट-गारा ढोने वाली, भट्ठों पर मेहनत-मजूरी करनेवाली, पत्थर तोड़नेवाली औरतों के साथ कहाँ समानता है। इन्हें पुरुषों की अपेक्षा कम मजदूरी दी जाती है। समानाधिकार की यह विडंबनापूर्ण स्थिति है। प्राय: इन औरतों के साथ बदसलूकी और आर्थिक-शारीरिक शोषण (भी) होता है।

यही नहीं, स्वयं बच्चों को शिक्षित करनेवाली शिक्षामित्रों, संविदा शिक्षिकाओं को न नियमित किया जा रहा है, न संतोषजनक वेतन ही दिया जा रहा है। इसी तरह आँगनबाड़ी में काम करनेवाली तमाम औरतों को मासिक वेतन बहुत कम दिया जा रहा है, जबकि उतना ही समय सरकारी संस्थाओं में काम करनेवाली औरत उनसे दस गुना अधिक वेतन प्राप्त कर रही हैं। इस विषमता के साथ एक विसंगति और मिलों, प्राइवेट फैक्टरियों, प्लेसमेटों और ऐसी ही दूसरी जगहों पर काम करनेवाली महिलाओं की स्थिति भी संतोषजनक नहीं कही जा सकती। जिसे हम रोज देखते हैं, भोगते हैं और जिससे रोज-रोज प्रभावित होते हैं। कामकाज के नाम पर भुक्तभोगी महिलाएँ खींच रही हैं जिंदगी की गाड़ी।

यही नहीं, कार्यशीला नारी विशेषकर मध्यमवर्गीय नारी की बड़ी विडंबनामय जीवन-स्थिति है। बढ़ती हुई महँगाई और महँगी होती जीवन की सामान्य आवश्यकताओं के दबाव के कारण वह नौकरी की ओर बढ़ी, परंतु सद्गृहणी और धर्मपरयण पत्नी न बन पाने के कारण वह मानसिक रूप से ग्रस्त रहती है। कुंठा और कई समस्याओं से घिरी कामकाजी महिलाएँ अपने को कमजोर महसूस करती हैं। हिंदी कथात्मक रचनाओं में इसकी बड़ी बारीक विवेचना हुई है। कहीं-कहीं वह वीभत्स है। क्षोभ, आक्रोश, तनावों और चिड़चिड़ेपन से भरा उसका जीवन असंतुलित सा हो गया है। इसे वह अपनी नियति मान बैठी है। अधिकतर कहानियों में कामकाजी नारी की समस्याओं, अंतर्द्वंद्व, संघर्ष और कुंठा की अभिव्यक्ति अधिक हुई है। अपनी गहरी अनुभव संपन्नता और पैनी दृष्टि से खुद के देखे-भोगे हुए यथार्थ से कथ्यों का चुनाव इन कथाकारों ने किया है। आज के नारी-समाज का एक और कटु यथार्थ है वेश्या।

वेश्या व्यवसाय मानव समाज और संस्कृति का कोढ़ है। इस समस्या पर समाज शास्त्रियों ने अपने संशोधन द्वारा कहा है कि आर्थिक कारण

ही इसकी जड़ है। विद्याधर अग्निहोत्रीजी ने अपने ग्रंथ 'फॉलन विमैन' में वेश्याओं का विश्लेषण किया है—६५.६ प्रतिशत वेश्याएँ आर्थिक कारणों से, २८.८ प्रतिशत सामाजिक कुप्रथाओं से त्रस्त होकर तथा केवल ५.६ प्रतिशत मनोवैज्ञानिक या अन्य कारणों से इस पेशे में आई हैं। आर्थिक अभाव ही वेश्या-व्यवसाय का प्रमुख कारण माना जाता है।

भारतीय समाज-व्यवस्था में विधवा प्रथा, दहेज प्रथा, बहुपत्नीत्व आदि अनेक सामाजिक कुप्रथाओं में पिसती हुई स्त्री के लिए एकमात्र आर्थिक स्वावलंबन का यही उपाय शेष बचा था कि वह वेश्या जीवन स्वीकार कर ले। उचित आर्थिक संरक्षण के अभाव में तथा अनमेल वैवाहिक संबंधों के कारण उत्पन्न मनोवैज्ञानिक असंगतियों ने भी स्त्रियों को वेश्या बनने की प्रेरणा प्रदान की। समाज में नारी का संपत्ति के अधिकारों से वंचित होना भी इसका एक प्रमुख कारण बना, क्योंकि आर्थिक अभाव मे नारी के लिए जीवन-रक्षा का और कोई उपाय नहीं दिखाई देता था।

कुछ युवतियाँ प्यार के इंद्रधनुषी सपनों में प्रेमी की मीठी-मीठी बातों में फँसकर अपना समर्पण कर देती हैं और समय आने पर दुत्कारी जाती हैं। मजबूरी से ही उन्हें वेश्या व्यवसाय अपनाना पड़ता है। देवेश ठाकुर के 'काँचघर' की माया इसका उचित उदाहरण है। प्रेमी द्वारा ठुकराने के बाद उसके गर्भ को लेकर इस व्यवसाय में आने के सिवाय उसके सामने कोई उपाय भी नहीं था, क्योंकि इस समाज में ऐसी सुंदर औरतों का खैरियत से जीना मुश्किल है। वह कहती है, 'हम जैसी जवान, अकेली औरतों के लिए कानूनन वे रास्ते बंद ही रहते हैं।'

वेश्या समस्या और विधवा विवाह उपन्यासों का चिरपरिचित विषय है। उपन्यास सम्राट् मुंशी प्रेमचंद से लेकर अनेक उपन्यासकारों ने इस विषय पर उपन्यास लिखे हैं, परंतु आज तक कोई भी इसका ठोस हल नहीं निकाल सका है। मनुष्य वेश्याओं से घृणा करते हुए भी उसे त्याग नहीं सकता है। वास्तव में वेश्याएँ जन्म से वेश्या नहीं होतीं बल्कि मनुष्य की कुत्सित वृत्तियाँ और परिस्थितियाँ उन्हें वेश्या बनने के लिए मजबूर करती हैं। देवेश ठाकुर के उपन्यासों में अधिक मात्रा में महानगरीय जीवन की प्रस्तुत हुई है। बढ़ती आबादी के कारण महानगरों में अनेकानेक समस्याएँ पैदा होती हैं, जिनका विवेचन और विश्लेषण इनके उपन्यासों में हुआ है। वेश्या-समस्या का विस्तार के साथ विश्लेषण तथा विवेचन 'महानगरीय जीवन की प्रस्तुति' अध्याय में हुआ है। यहाँ स्त्रियों के वेश्या बनने के कारणों को देखना हमारा उद्देश्य है। क्योंकि जन्म से कोई वेश्या नहीं होती है। मनुष्य वेश्याओं से प्यार करता रहता है, उस पर पैसा बहाता है किंतु अपनाने का समय आने पर दाएँ-बाएँ देखता है। 'इसीलिए' उपन्यास की मीनाक्षी की माँ, 'अपना अपना आकाश' के प्रकाश की माँ, 'काँचघर' की माया आदि उदाहरणों द्वारा लेखक ने इस बात को स्पष्ट कर दिया है। ये औरतें अपने प्रेमी द्वारा ठगी जा चुकी हैं। 'इसीलिए' की मीनाक्षी दलाल जैसी सुंदर किंतु बेसहारा लड़की को रिश्ते के चाचा के साथ बिस्तर बाँटना पड़ता है। तब उसे मजबूरी से अपने सुंदर शरीर का मुफ्त में अधिक शोषण न होने देने का निर्णय लेना पड़ता है। मुझ जैसी लड़की कॉल-गर्ल ही हो सकती थी। न होती तो इस समाज के कुत्ते और भेड़िये मुझ अकेली लड़की को अंकल की तरह मुफ्त ही में नोच खाते। आजादी के बाद इस देश में जो संस्कारहीन नवधनिक वर्ग उभरा है, वही मेरा ग्राहक है। कुछ युवतियाँ प्यार के इंद्रधनुषी सपनों में प्रेमी की मीठी-मीठी बातों में फँसकर अपना समर्पण कर देती हैं और समय आने पर दुत्कारी जाती हैं। मजबूरी से ही उन्हें वेश्या व्यवसाय अपनाना पड़ता है। देवेश ठाकुर के 'काँचघर' की माया इसका उचित उदाहरण है। प्रेमी द्वारा ठुकराने के बाद उसके गर्भ को लेकर इस व्यवसाय में आने के सिवाय उसके सामने कोई उपाय भी नहीं था, क्योंकि इस समाज में ऐसी सुंदर औरतों का खैरियत से जीना मुश्किल है। वह कहती है, 'हम जैसी जवान, अकेली औरतों के लिए कानूनन वे रास्ते बंद ही रहते हैं।'

कुछ लड़कियाँ आधुनिक फैशनेबल जिंदगी की आदी बन जाती हैं और हर दिन के खर्चे चलाने के लिए 'काँचघर' की अगाथा जैसी 'फ्रीलांसर' बन जाती हैं अथवा किसी बॉस की पर्सनल सेक्रेटरी बनकर उसके साथ जींस-सिगरेट, मटन आदि खाती-पीती हैं और शॉपिंग के बाद भोगने के लिए अपने फ्लैट पर ले जाती हैं। आधुनिक युग के वेश्या व्यवसाय का यह नया रूप उभरता हुआ दिखाई दे रहा है। उच्च सोसाइटी में कुछ लोग ऐसी लड़कियों के जरिए मॉडलिंग इत्यादि के नाम पर सरेआम कॉलगर्ल का व्यवसाय चलाया जा रहा है। रेखा जैसी कुछ मॉडर्न, फैशनेबल औरतें क्लीबलेस पहनकर, बाल कटवाकर, फर्राटे से अंग्रेजी बोलती हुई सोशल वर्क के नाम पर यह व्यवसाय करती हैं। किसी को फाँसना चाहती हैं और विम्मू जैसी कुछ लड़कियाँ अपनी सामान्य अभिलाशाएँ भी जब पूरी होती दिखाई नहीं देतीं और उम्र बढ़ती है, शादी होने की कोई संभावना शेष नहीं देखतीं तो धंधा शुरू कर देती हैं तथा कुछ लड़कियाँ फिल्मी दुनिया के जाल मे फँस जाने पर वेश्या बन जाती हैं। 'काँचघर' में देवेशजी ने इसका यथार्थ चित्रण किया है। 'जनगाथा' की सलमा जैसी औरतों को अपने भविष्य को ऊँचा बनाने के बहाने महानगरीय गंदी नाली के कीड़े जैसी जिंदगी बितानी पड़ती है। 'काँचघर' के खडबंदा जैसे कुछ पिता अपनी बेटियों को आधुनिक वेश्या व्यवसाय कराने में 'इंट्रोड्यूज' करते हैं।

इस प्रकार वेश्या व्यवसाय ने नए-नए रूप अपनाए हैं। डॉ. रमेश तिवारी वेश्या बनने के बुनियादी कारणों के बारे में लिखते हैं, 'वेश्या समस्या के मूल में मात्र आर्थिक आधारहीनता ही नहीं है बल्कि वहाँ आर्थिक विषमता, सांस्कृतिक गतिरोध, भौतिकवादी संस्कृति का विकृत रूप तथा नैतिक मूल्यों का विघटन आदि नारी को वेश्या जीवन जीने की

प्रेरणा प्रदान करते हैं। इस समस्या को मिटाने की दृष्टि से स्पष्ट रूप से आज तक कोई हल नहीं रखा जा सका है। फिर भी विधवा-विवाह, प्रेम विवाह, अंतरजातीय विवाह आदि को प्रोत्साहन और दहेज प्रथा का विरोध से काफी संख्या में सफलता प्राप्त हो सकती है।

नारी के जीवन में विवाह का महत्त्वपूर्ण स्थान है। हिंदी कथा साहित्य में विवाह समस्या को लेकर कई कहानियाँ/उपन्यास लिखी गई हैं। समकालीन जीवन में प्रौढ़ कुमारियों का जीवन जटिल बनता जा रहा है। यों नारी को शिक्षा की सुविधाएँ प्राप्त हुईं, पुरुषों से कंधा-से-कंधा मिलाकर वे चलने लगी हैं। हर नारी विवाह तो करना चाहती है, मगर मन पसंद साथी न मिलने के कारण विवाह हो नहीं पाते। अत: उम्र के तीस-चालीस साल बीत जाने पर भी उसे अविवाहिता का जीवन व्यतीत करना पड़ता है। अविवाहिता की स्थिति में वह कुंठाग्रस्त, एकाकी और संन्यास में रहती है। ऐसी स्थिति में कई नारियाँ स्वच्छंद बनती हैं। वे पर-पुरुष से संबंध को भी गलत नहीं समझतीं। 'भ्रमभंग' उपन्यास में इस समस्या का बड़ा ही यथार्थ चित्रण हुआ है। सुमन राजकोट के कॉलेज में दर्शनशास्त्र की प्राध्यापिका है। वह एम.सी-सी. की ऑफिसर (भी) है। उसका व्यक्तित्व सुंदर और आकर्षक है। वह अनेक पुरुषों से मित्रता और संबंध रखती है। इसी प्रकार 'जनगाथा' उपन्यास में प्राध्यापिका मानुषी पत्रकार जोशी के साथ मित्रता का नाता रखते हुए उसके पास रहती है।

वर्तमान युग की बदलती हुई परिस्थिति में पत्नी के परंपरागत स्वरूप में परिवर्तन आए हैं। प्राय: पत्नी अब अपने जीवन में स्वच्छंद दृष्टिकोण को अपनाने लगी हैं। वे भोगवादी बनती जा रही हैं। इस दिशा में दो तरह की मानसिकता काम कर रही है—एक वो, जो अपने पति से संतुष्ट नहीं होतीं या जिसके पति दूसरी औरतों के साथ सह-संबंध बनाए हुए हैं और अपनी विवाहिता को घर के शो-केस में की सिर्फ तसवीर समझते हैं और सजाकर देखना पसंद करते हैं। दूसरी वे, जो आर्थिक तंगी से थोड़ा छुटकारा पाने और अपने ढंग से खर्च के लिए धनोपार्जन करती हैं। ये दुहरे चरित्रवालों के अपने-अपने कद-कोठे हैं।

इस प्रसंग में तलाकशुदा नारी जीवन के सच को भी उद्घटित करती रचनाओं का जिक्र भी लाजिमी है। तलाक के बाद की जिंदगी एवं अतीत की स्मृतियाँ—दोनों पक्षों का संबंध 'अंतत:' की वसुधा, पद्मा आदि तलाकशुदा पत्नी के रूप में चित्रित हुई हैं। आर्थिक दृष्टि से स्वावलंबन एवं पुरुषाश्रित समाज व्यवस्था की रूढ़ मान्यताओं को ठुकराकर वे घर की चारदीवारी से बाहर निकल रही हैं। इस प्रक्रिया में कई उतार-चढ़ाव से गुजरना स्वाभाविक है। वह कहीं दृढतापूर्वक आगे बढ़ती दिखती है तो कहीं फिसली हुई—फिर भी आर्थिक स्वावलंबन की उसकी आकांक्षा उत्तरोत्तर बढ़ती पाई जाती है। पारिवारिक विग्रह की भूमिका इसी प्रवृत्ति की परिचायक है। अत: नारी-व्यक्तित्व की स्वतंत्रता-स्वच्छंदता पर कई प्रश्नचिह्न लग रहे हैं। मसलन वह अनेक परिस्थितिजन्य यातनाओं एवं मानसिक संताप के बीच जीवन जीने की विवशता में जीती जा रही है। कहीं-कहीं नारी को गृहस्थी का भार और सिर्फ मनोरंजन के एक उपादान के रूप में देखा जा रहा है। इसलिए वे मूकपशु की भाँति परिवार द्वारा थोपी व्यवस्था को स्वीकार करने के लिए भी विवश हैं। हरिसुमन बिष्ट के 'आछरी-माछरी' उपन्यास में सामाजिक परिवेश के बीच नारी-जीवन के बिंब उभरे हैं। पात्र-चरित्र की मीमांसा अधिक तटस्थ और निरपेक्ष है। उसमें जीवन की एक झाँकी दिखाई देती है। 'आसमान मूक रहा है', 'ममता और होना पहाड़' औपन्यासिक कृतियों के अलावा 'सफेद दाग', 'मछरंगा' कहानी कृतियों में नारी-जीवन के विविध बिंब दिलकश हैं।

अस्तु, कथा-साहित्य में कथ्यों की विविधता और मूस विविधता के कारण उसमें स्वरों की भी विविधता आई है। रवींद्र कालिया की कहानी 'काला रजिस्टर', राम नारायण शुक्ल की 'डाक', 'दृष्टिकोण', ज्ञानरंजन की 'घंटा', महेंद्र भल्ला की 'कुत्तागिरी' और डॉ. माहेश्वर की 'साँप', 'मृत्युदंड', प्रभात मित्तल की 'दुरभिसंधि', ममता कालिया की 'छुटकारा', सुबोध कुमार श्रीवास्तव की 'लकीर', इंद्रमणि की 'बेकारी' आदि कहानियाँ भारतीय परिवेश में बढ़ते हुए संन्यास, कुंठाग्रस्त स्थितियों, अकेलेपन को दरशाती हैं।

आर्थिक दबाव, महँगाई और मुद्रास्फीती के युग में नारी को अर्जिका की स्थिति में खड़ा होना आवश्यक हो गया है। नारी की अर्जन-क्षमता पुरुष वर्ग की श्रेष्ठता को चुनौती देती है। लेकिन अर्जिका नारी को कई तरह की मुश्किलों से भी गुजरना पड़ता है। प्रमोशन या नौकरी की सुरक्षा के लिए भी कभी-कभी मूल्य चुकाने पड़ते हैं और इसके लिए वह अपने 'अस्तित्व' से समझौता करती है। स्त्री-लोलुप अधिकारी भी अपने जाल में ऐसी नारियों को फँसाते हैं और फिर बना लेते हैं अपना हमसफर। इन पंक्तियों के लेखक की 'प्रवंचना' और 'आत्मकथा : एक बगुले की' शीर्षक कहानियाँ श्रेष्ठ दृष्टांत हैं। राजेश जैम, रीता कश्यप 'केंचुल' (चित्रा मुद्गल) सूर्यबाला की कहानी 'सिंड्रेला का स्वप्न' में एक उच्चवर्गीय नारी और विवश लड़की की बड़ी मार्मिक तसवीर चित्रित है। सतीश जमाली की कहानियों में आर्थिक तंगियों से जूझते मजदूरों-महिलाओं के मर्मस्पर्शी चित्र हैं। विनोद कुमार शुक्ल, शशांक, रामदरश मिश्र, काशी नाथ सिंह, दूधनाथ सिंह, राजी सेठ की कहानियों में व्यक्ति मन के पर्त-दर-पर्त दु:ख-सुख, दंश के दर्द उभरे हैं। जीवन का अकेलापन, त्रासदी, प्रेम-विवाह की असफलता, नारी की स्वातंत्र्य-मनोवृत्ति, पति के अहंकार, पत्नी के प्रति अमानवीयता, पति-पत्नी के बीच मानसिक दूरी, परित्यक्ता की पीड़ा और नौकरी-पेशा नारी की स्थिति, नियति और संवेदना के दृश्य-परिदृश्य मूर्त हो उठे हैं। इसी प्रकरण में राकेश वत्स, अरुण भगत, कमल कुमार, नासिरा शर्मा, हिमांशु जोशी, मैत्रेयी पुष्पा, स्वयं प्रकाश, स्वदेश दीपक, बलराम, रंजन जैदी, धीरेंद्र प्रसाद सिंह, रमेशचंद्र शाह, तुलसी देवी तिवारी की कहानियों में नारी-जीवन के कठोर यथार्थ के कथ्य समसामयिकता के दस्तावेज बन गए हैं।

साहित्य कुटीर, साइट-२/४४
विकासपुरी, नई दिल्ली-११००१८
दूरभाष : ९२८९४४०६४२

संस्मरण

श्रीलाल शुक्ल पत्रों में

● रमेशचंद्र शाह

श्रीलाल शुक्ल में लेखकीय प्रतिभा के साथ-साथ एक और प्रतिभा भी थी, संवाद-संलाप की प्रतिभा, जो बहुत कम लेखकों में पाई जाती है। यह प्रतिभा मैंने या तो बालकृष्ण राव में पाई या फिर श्रीलाल शुक्ल में। अकसर मुझे लगता था, मानो राव साहब के तिरोभाव से उत्पन्न शून्य को भरने में समर्थ लेखक होने के कारण ही उनके प्रति मेरा झुकाव-लगाव पनपा और विकसित हुआ। एक सचमुच के 'कन्वर्सेशनिस्ट' व्यक्तित्व का संसर्ग कितना प्रीतिकर होता है, इसे जाननेवाले ही जान सकते हैं। जिनमें स्वयं भी सुरुचिपूर्ण वार्त्तालाप के प्रति स्वाभाविक रुझान हो।

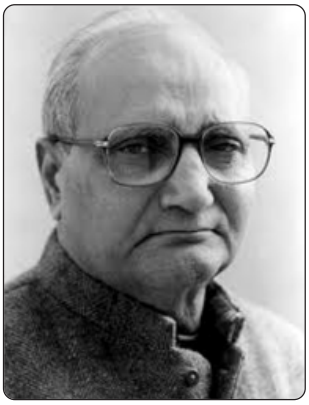

स्व. श्रीलाल शुक्ल

मुझे अच्छी तरह स्मरण है, उनकी जिस पहली-पहली रचना को पढ़कर मेरे मन में उनके प्रति आकर्षण उत्पन्न हुआ था, उसका शीर्षक था—'स्वर्णग्राम में वर्षा'। ठीक-ठीक याद नहीं, वह मैंने कहाँ पढ़ी थी। शायद 'संकेत' में, जो इलाहाबाद से निकला था या फिर 'निकष' में। 'निकष' ही होगा। वह मुझे उत्कृष्ट निबंध-रचना लगी थी। एक नई प्रतिभा के प्राकट्य की पूर्वसूचना। उनका व्यंग्य भी मुझे अन्य लेखकों के व्यंग्य से भिन्न और विलक्षण लगा था। इसलिए कि वह उनके नैबंधिक या कथात्मक गद्य के समग्र रचाव का अंग था, न कि अलग से व्यंग्य को एक स्वतंत्र-स्वायत्त विधा की तरह मानने-मनवाने के आग्रह का फल। व्यंग्य अपने आप में कोई विधा नहीं, वह निबंध या कहानी या उपन्यास की समूची रचना में व्याप्त एक गुण की हैसियत से ही अपनी सार्थकता पाता है। न कि लोकप्रियता के अधूरे संदिग्ध और सच्ची सृजनात्मकता से निरपेक्ष एक स्वयंपर्याप्त और स्वतंत्र वस्तु की तरह प्रचारित होकर। स्वतंत्र और निरपेक्ष विधा आप उसे मानकर बरतें तो फिर इस सच्चाई को स्वीकार करके ही चलना होगा कि वह रचनात्मक साहित्य के सबसे निचले पायदान पर अवस्थित है। और व्यंग्यकार कहलाना व्यंग्कार की हैसियत से चर्चित-प्रतिष्ठित हो जाना उच्च कोटि की सृजन-ऊर्जा या सृजन-सामर्थ्य का प्रमाण नहीं हो सकता। वैसा मानकर चलना आत्मा-प्रवंचना या दुराग्रह ही है। श्रीलाल शुक्ल का गद्य मुझे शुरू से ही ऐसी पहचान या मान्यता का मोहताज कभी नहीं लगा।

श्रीलालजी सहृदय पाठक ही नहीं, किसी रचना की रचनात्मक गुणवत्ता को लेकर बहुत कायदे की सटीक और मूल्यांकनकारी टिप्पणी भी बड़े सहज भाव से कर सकनेवाले लेखक थे। जैसे कि स्वयं लेखक-बिरादरी में भी बहुत कम देखने में आते हैं। यह क्षमता उनकी सामान्य वार्त्तालाप के माध्यम से भी प्रगट होती थी और पत्रों में भी। मैंने कहा कि वे उन विरल लेखकों में थे, जो प्रभावशाली संवादी यानी 'कन्वर्सेशनिरट' भी होते हैं। पर उनकी इस खूबी को 'संरक्षण' के माध्यम से संप्रेषित नहीं किया जा सकता। उसके लिए तो साक्षात् संभाषण के सिवा और कोई विकल्प नहीं। ही, इतना जरूर है कि ऐसे 'कन्वर्सेशजिस्ट' लेखक की चिट्ठी-पत्री में भी वह वृत्ति या विशेषता झलकेगी ही। इस दृष्टि से मुझे लगता है, श्रीलालजी के पत्रों से कुछ उद्धरणों का समावेश इस संस्करण में करना उचित और सार्थक होगा। हमारे बीच संवाद का एक अनिवार्य सेतु यह चिट्ठी-पत्री भी थी, आखिर हम अलग-अलग नगरों के वासी थे—साक्षात् भेंट-वार्त्ता के मौके तो विरल ही होते थे। वे भोपाल में किसी गोष्ठी के प्रसंग से या मैं लखनऊ जाऊँ किसी काम से, तभी साक्षात् संवाद की गुंजाइश निकल सकती थी। एकाध ऐसे मौके भी जब गरमियों की छुट्टी में वे भी मेरी तरह पहाड़ की सैर पर निकले और नैनीताल या अल्मोड़ा में उनसे मुलाकात हो गई। कुछ नहीं तो बीसेक पत्र उनके हाथ के लिखे मेरे पास होंगे। यहाँ तीन-चार पत्र ही पूर्णत: या अंशत: उद्धृत करना काफी होगा। तो यह लीजिए पहला नमूना श्रीलालजी की बतकहिया शैली और सहृदय गुणग्गहिता का—

बी-२२५१, इंदिरानगर, लखनऊ
८.७.९६

प्रिय बंधु,

१ जुलाई का पत्र मिला। सबसे ज्यादा संतोष की बात यह कि रीझकर हो या खीझकर, 'गोबरगणेश' का अनुवाद आपने पूरा कर लिया। अब उसके प्रकाशक मिल ही जाएँगे।

'शैतान के बहाने' दिल्ली से लौटने के बाद पढ़ लिया था। और उसी के साथ 'आड़ू का पेड़' भी, जो पहले पलटा भर था।

अब मेरा इकबालिया जुर्म सुनें। आपके निबंधों को मैंने न पढ़ने या ज्ञानवधान भाव से पढ़ने की मूढ़ता करके आपके साथ जो ज्यादती की, उससे कहीं बड़ी ज्यादती खुद अपने साथ की। इन निबंधों की कोटि ही

अनूठी है। हिंदी में इनका genre ही बिल्कुल अलग है। बख्शीजी के प्रति उनके अत्यंत युक्तिसंगत अनुराग के बावजूद इनकी कोटि उनके लेखन से बहुत भिन्न है और पं. विद्यानिवास मिश्र, कुबेरनाथ राय, कृष्णबिहारी मिश्र प्रभृति लेखकों की निबंधावली को अपने स्वभाव-वैपरीत्य की छटा द्वारा सांस्कृतिक हाय-हाय-वाद मात्र बनाकर एक किनारे छोड़ देती है। वास्तव में आपका 'निबंध की तलाश में' व्यक्तिगत 'मैनिफेस्टो' होते हुए भी स्वयं उत्तम निबंध का साहित्यालोचन की लीक से बड़ी होशियारी से कतराकर निकलते हुए लाजवाब नमूना है। मुझे पता नहीं कि इस निबंध पर साहित्यिक बहसें हुईं या नहीं; पर शायद नहीं हुईं और अगर हमारी साहित्यिक म्रियमाणता का कोई और सुबूत जरूरी हो, तो यह बहस-विहीनता अपने आप में उस म्रियप्राणता का सुबूत है।

प्रसंगत: अपने-अपने निबंधों में जहाँ कहीं और कई जगह गीता का संदर्भ दिया है, वहाँ मेरे लिए दिलचस्पी की बात यह रही कि कई अर्थों में वहाँ आपने गीता की भावभूमि की निजी व्याख्या की है। उसकी ताजगी इन निबंधों के पाठ का एक आनुषंगिक लाभ है।

अब यह कहना कि 'बहुत खूब, लिखते रहिए', तो गुरूकंटालों को ही शोभा देगा, पर इतना जरूर है कि जो एक बार आपके निबंध-रस का आस्वाद ले चुका है, वह (अर्थात् मैं) निश्चय ही कुछ और, कुछ और की पुकार लगाएगा।

बच्चे यहाँ आए और हम उनसे मिल नहीं सके, इसकी खिन्नता है। दैवी कृपा से यहाँ अब पारिवारिक वातावरण सहज है और वे यहाँ रुकते तो हमारे लिए आनंद का विषय होता। बहरहाल विदेश-यात्रा पर हम दोनों साथ हों तो क्या कहने! जिस जोश में हम दोनों एक जाड़े की रात किसी वीरान प्लेटफॉर्म को देवरिया समझकर उतरे-चढ़े थे, उसे याद करके कोई शक नहीं रह जाता कि हमीं को नहीं, हमारे साथ-साथ वहाँ पहुँचने पर संबंधित देश को भी एक ऐतिहासिक क्षण का अनुभव प्राप्त हो जाएगा।

आशा है, हिमालय से मध्य प्रदेश में आकर आप अब तक अपने ढर्रे में व्यवस्थित हो चुके होंगे। जहाँ तक मेरी बात है, मैं घर की देहरी से इतना बँध चुका हूँ कि तेली के बैल की गति भी प्राप्त हो जाए तो उसे ही चरम प्रगति मान बैठूँगा।

ज्योत्स्नाजी को नमस्कार। पत्रोत्तर अवश्य दें, इसी सबसे अपने बारे में आश्वस्ति-बोध कुछ और मजबूत होता है।

सप्रेम

श्रीलाल शुक्ल

अब दूसरा पत्र देखिए

लखनऊ, दिनांक २३.२.९६

प्रिय भाई,

आपका १६-२ का पत्र मिला। शरद जोशी सम्मान की शायद अभी औपचारिक घोषणा नहीं हुई है।...आपको असुविधा न हो तो मैं वहीं रुकना भी चाहूँगा। इस हालत में मेरा प्रवास एक दिन-रात से ज्यादा न हो पाएगा। आपके बधाई-संदेश के लिए कृतज्ञ हूँ।

हिंदी के सुविख्यात कवि-कथाकार तथा चिंतक। सन् १९३७ में अल्मोड़ा, उत्तरांचल में जन्म। शाहजी की प्रमुख कृतियाँ हैं—'जंगल में आग', 'मुहल्ले का रावण' *(कहानी-संग्रह)*; 'शैतान के बहाने', 'आड़ू का पेड़', 'पढ़ते-पढ़ते' *(निबंध-संग्रह)*; 'छायावाद की प्रासंगिकता', 'आलोचना का पक्ष' तथा 'भूलने का विरुद' *(आलोचना)*। इसके अलावा बाल कविता-संग्रह, बाल नाटक तथा 'मारा जाई खुसरो' नाटक प्रकाशित।

भारत सरकार द्वारा 'पद्मश्री'। प्रतिष्ठित 'व्यास सम्मान', म.प्र. संस्कृति विभाग के 'शिखर सम्मान' तथा म.प्र. हिंदी संस्थान के 'महावीर प्रसाद द्विवेदी पुरस्कार' समेत कई विशिष्ट पुरस्कारों से सम्मानित।

वैसे पिछले महीनों में भोपाल से मुझे कई निमंत्रण मिले। पर लखनऊ से बाहर निकलना अब मेरे लिए दुर्लभ जैसा हो रहा है। कारण वही—गिरिजा का गिरता हुआ स्वास्थ्य, जो अब चौबीसों घंटे उनकी देखरेख की माँग करता है।

× × ×

एन.बी.टी. आपके उपन्यास 'किस्सा गुलाम' को संभवत: 'आदान-प्रदान' कार्यक्रम में ला रही है। ऐसा तो बहुत ही उत्तम है। आजकल वे उम्दा ढंग से छापते हैं और ५० प्रतिशत रॉयल्टी का एडवांस पुस्तक छपते ही दे देते हैं।...

'उन्मीलन' का अंक मिला। गोविंदचंद्र पांडे की पुस्तक पर आपकी समीक्षा अभी पढ़ी नहीं, पर बड़ी खुशी हुई और होती रही है आपके सर्जनात्मक व्यक्तित्व के साथ इस विचारात्मक पक्ष का भी प्रतिफलन देखकर। ऐसे संपूर्ण साहित्यकार किसी भी साहित्य में दुर्लभ होते हैं।

आशा है, आप सानंद हैं। ज्योत्स्नाजी को हमारा नमस्कार कहें और भले ही मुझसे पत्राचार में प्रमाद होता रहे, इस पत्र का उत्तर यह सोचकर न टालें कि मार्च-अप्रैल में तो हमें मिलना ही है।

सप्रेम आपका

श्रीलाल शुक्ल

श्रीलालजी स्वयं अत्यंत विषम परिस्थिति से जूझ रहे होने के बावजूद अपने मित्रों के सुख-दु:ख में मनसा पूरी तरह शरीक होते थे। उन्हें व्यावहारिक सलाह भी देते थे। एक लेखक के लिए परिस्थितिवश अरसे तक न लिख पाने की वेदना दुस्सह होती है। ऐसे कठित दौरों से गुजरते हुए श्रीलालजी का धैर्य और स्वयं के प्रति साक्षी भाव अपनाना मुझे बहुत स्पृहणीय लगता था। यही उन्हें कैसे भी दुर्निवार्य आत्मावसाद की स्थितियों से उबरने की शक्ति देता रहा होगा, यही अपने ही कष्ट-भोग को साक्षी-भाव से देख सकने का सामर्थ्य। उदाहरण के लिए देखिए उनका यह पत्र २२.२.२००१ का लिखा हुआ—

लखनऊ, दिनांक २२.२.२००१

प्रिय भाई,

आपके दो पत्र निरंतर मेरी मेज पर मेरे सामने रहे हैं, एक १४/११ का, दूसरा ७/१ का। और मेरा हाल देखिए कि 'हरपीस' मुक्त, पूर्णत: स्वस्थ होते हुए भी लगभग चार महीने मैंने 'मसि-कागद छूयो नहीं' वाली में गुजार दिए। एक अजीब सी मानसिक व्याधि, जिसे न अवसाद कह सकते हैं, न पूर्ण उदासीनता ही; पर चरम निष्क्रियता और उससे उपजा अपराध-बोध! मुझे आप पर पूरा भरोसा है क्षमाशीलता का। केवल यही कह सकता है कि यह अर्ध-आत्मघाती दौर अब समाप्तप्राय है और यही आशा कर सकता हूँ कि मेरी निष्क्रियता की सजा अपनी ओर से ऐसी ही चुप्पी दिखाकर न देंगे।

सबसे पहले तो अपने मकान में पहुँचने के लिए बधाई और जिस सड़क पर निवास कर रहे हैं, वह 'भदभदा रोड' समाप्त होना चाहिए। नगर निगम में इतनी संवेदना तो होनी ही चाहिए कि इस भद्दे नाम की जगह कोई वाजिब नाम सोचे।

'एक लंबी छाँह' बहुत पहले नवंबर में ही पढ़ गया था, कइयों को पढ़ाया भी। अंशत: पत्र-पत्रिकाओं में इसे देख चुकने के बाद एक साथ पूरी पुस्तक को पढ़ने का 'इंपैक्ट' बिल्कुल ही दूसरा था। साहित्य को देशगत सीमाबद्धता से बाहर निकालकर विश्व साहित्य की एमाग्र भावना के साथ वेल्स, आयरिश और इंग्लिश लेखकों-कवियों के प्रति ऐसा निजत्व और ऐसे खुलेपन का भाव, जैसा इस कृति में दिखा, अन्यत्र दुर्लभ है। यही नहीं, इस सहज 'नैरेटिव' जैसे दिखनेवाले लेखन के और भी कई आयाम हैं, एक ओर प्रकृति और मानवीय रचना के नए परिवेशों की संवेदनशील पकड़, दूसरी ओर अकादमीय वाद-संवाद में वैचारिक टकराहटें, सचमुच ही यह अपने ढंग की अनूठी कृति है। मेरे एक सुपठित डॉक्टर मित्र, डॉ. पांडे, जो इंग्लैंड में २७-२८ साल रहे हैं, पूरी किताब एक बैठक में पढ़ गए और वेल्स तथा अमायरलैंड के विवरणों से विशेष अभिभूत हुए।

'साहित्य अमृत' में आपका साक्षात्कार पढ़ा था और 'जनसत्ता' में आपका पाक्षिक शतंभ भी देख रहा हूँ। स्तंभ आपके बौद्धिक स्तर के अनुरूप है और एक दैनिक के पाठक की हैसियत से मुझे यही शिकायत हो सकती है। थोड़ा और हलकापन-पाठक शायद यही चाहेगा।

इसी सप्ताह उच्च अध्ययन संस्थान, शिमला से अप्रैल में प्रस्तावित अज्ञेय विषयक संगोष्ठी के लिए बुलावा आया है। आप उसकी परामर्श समिति में हैं। शायद यह निमंत्रण इसी का नतीजा है। मैं निश्चय ही जाऊँगा, विशेषत: इस लालच में कि आपके साथ कुछ वक्त बीतेगा।

विलंब के लिए एक बार फिर माफी माँगना चाहता हूँ। ज्योत्सनाजी को नमस्कार।

सप्रेम

श्रीलाल शुक्ल

और अंत में श्रीलालजी का यह एक और पत्र, जो उनकी साहित्यिक सुरुचि और आलोचनात्मक दृष्टि का परिचायक भी है—

प्रिय भाई,

'आप कहीं नहीं रहते विभूति बाबू' कल पढ़कर आनंदित हुआ। शुरू के कुछ पन्नों में लड़खड़ाहट महसूस हुई, पर 'विभूतियोग' तक आते-आते सबकुछ सध गया। और मुझसे मौलिक प्रतिक्रिया की उम्मीद की जाए तो वह व्यर्थ, होगी क्योंकि मैं जो इसके विषय में सोचता, वह कुछ दूसरी भाषा में, अत्यंत सुशिक्षित प्रकाशकीय ब्लर्ब में पहले ही दिया जा चुका है। उसमें कुछ जोड़ना मुश्किल है।

आपके परिचितों और मित्रों को इस आत्मकथा-विमर्श की जटिलताओं से उबरकर झीने जलावरण में आपका ही चेहरा झलकता हुआ नजर आए तो आपको आश्चर्य नहीं होगा। पर एक बात, जो मुझे पूरे उपन्यास में सबसे अधिक आकर्षक लगी, वह है क्रमबद्ध कथा या कथा की ही उपाख्याओं में सूत्रबद्ध ढंग से विस्तार का अभाव। केवल क्षणिक दीप्तियों के समुच्चय से विभूति बाबू उनके पिता, या विभूति बाबू हाथ हिलाते हुए; शिखर के मोड़ पर अदृश्य होती लड़की···जैसे प्रसंग जिस प्रकार झिलमिलाते हैं, पर आपकी विशिष्ट उपलब्धि है।

'शेखर : एक जीवनी' का उल्लेख उमपने किया है। पर उससे सर्वथा भिन्न और जोरदार तंत्र अपने विभूति बाबू के लिए आविष्कृत किया है। पूरी कृति पढ़कर एक साथ उत्तम काव्य, काव्य की व्याख्या, जीवन की एक साथ व्यावहारिक और तात्त्विक दृष्टि···और पहाड़ से मैदान तक प्रवहमान एक ललित, साथ ही विचलन भरी कथा-यात्रा का सम्मिश्रित सान्निध्य मिलता है।

शिकायत जो हो सकती है, उसका जिक्र ही बेकार है, क्योंकि एक जटिल, चिंतनात्मक रचना में जब आप जान-बूझकर एक अतीत-वर्तमान के विक्षेपों को आविष्कृत करके और संदर्भों की बहुलता के साथ, पाठक की बौद्धिक तैयारी को नजरंदाज करके पूरे मन से इसे लिखते हैं तो निश्चय ही आप इसके लिए तैयार हैं कि यह कृति हिंदी पट्टी के सामान्य (पता नहीं वे कौन, कहाँ हैं) पाठक के लिए न होकर एक विशेष प्रबुद्ध पाठक-समुदाय के लिए होगी। पर मैं जानता हूँ कि यह समस्या इस कृति की ही नहीं, उन सभी कृतियों की है, जहाँ लेखक उापने संपूर्ण भाव-बोध और बौद्धिक व्यक्तित्व को अपनी कृति में प्रतिबिंबित करता है। एक अदर्श पाठक की झीनी सी छवि मन में भले रहती हो, पर वह पाठक वर्तमान में नहीं मिलता। निरवधि काल का सहारा ही हमें लिखने को प्रेरित करता है। हार्दिक बधाई और शुभकामनाएँ।

सप्रेम

श्रीलाल शुक्ल

एम-४, निरालानगर
भदभदा रोड, दृष्टांत मार्ग
भापाल-४६२००३

विचार कुंभ से दुनिया को संदेश

● सिद्धार्थ शंकर गौतम

सनातन संस्कृति के महापर्व 'सिंहस्थ' के आयोजन के दौरान पहली बार विश्व की ज्वलंत समस्याओं को लेकर उज्जैन के निनोरा गाँव में 'अंतरराष्ट्रीय विचार महाकुंभ' का आयोजन किया गया। इसमें बड़ी संख्या में पधारे विद्वज्जनों ने अपने विचार दुनिया के समक्ष रखे। इस विचार महाकुंभ में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरसंघचालक श्री मोहन भागवत, आचार्य महामंडलेश्वर स्वामी अवधेशानंद गिरीजी महाराज, योगगुरु बाबा रामदेव, संघ के सरकार्यवाह श्री भैयाजी जोशी, सद्गुरु जग्गी वासुदेवजी, प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी, श्रीलंका के राष्ट्रपति मैत्रिपाल सिरिसेना, गायत्री परिवार के प्रमुख और देव संस्कृति विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ. प्रणव पंड्या सहित अनेक विद्वान् देशी-विदेशी मेहमानों, अति विशिष्ट अतिथियों की बड़ी संख्या में उपस्थिति रही। विचार महाकुंभ में 'स्वच्छता सरिता कुंभ', 'शक्ति कुंभ' जैसे विशेष सत्र भी संपन्न हुए।

सुपरिचित पत्रकार। स्वतंत्र लेखन।

उद्घाटन सत्र

सिंहस्थ महाकुंभ के बीच उज्जैन के पास निनोरा में विचार महाकुंभ का भव्य शुभारंभ हुआ। मंच पर सरसंघचालक थी मोहन भागवत, मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान, जूना पीठाधीश्वर श्री अवधेशानंदगिरीजी महाराज, राज्यसभा सांसद श्री अनिल माधव दवे ने दीप प्रज्वलित कर इसका शुभारंभ किया। संघ प्रमुख ने विचार कुंभ को संबोधित करते हुए कहा कि यहाँ भाषाओं की विविधता है, हम सब सृष्टि के उत्पाद हैं। शुरुआत में उन्होंने अमृत कलश और गरुड़ की पौराणिक कथा सुनाते हुए भारतमाता के सम्मान का जिक्र किया। उन्होंने समझाया कि हमारी दो माताएँ हैं—एक जन्म देनेवाली और दूसरी भारत माता। कुंभ का प्रयोजन माता को दासता से मुक्ति दिलाना है। कुंभ की वैचारिक परंपरा को जीवित करने के लिए इस तरह के आयोजन महत्त्वपूर्ण हैं। विचार कुंभ के लिए उन्होंने म.प्र. के मुख्यमंत्री शिवराज सिंह की प्रशंसा करते हुए कहा कि समस्याओं के समाधान भी ढूँढ़ने होंगे। कुंभ में आते ही भक्ति का अनुभव होता है। नास्तिक व्यक्ति भी यहाँ प्रभावित हुए बिना नहीं रहता। आध्यात्मिक मूल्यों के आधार पर चिंतन और आचरण करना होगा। इसके लिए नीतियाँ आचरण में आनी चाहिए।

बड़ी कंपनियों से पर्यावरण को खतरा

विकास और पर्यावरण पर चर्चा करते हुए उन्होंने समझाया कि बड़ी कंपनियों से बेशक पर्यावरण को खतरा होता है। दुनिया को इस समस्या का समाधान अब तक नहीं मिला है। इसका समाधान मध्यम मार्ग से ही निकलेगा। ठीक नीतियाँ बनें और प्रामाणिकता से उनका पालन हो। वैचारिक आधार पर व्यावहारिक आचरण होना चाहिए।

देश की विविधता दोष नहीं

अपने आधा घंटे के उद्बोधन में श्री भागवत ने अपनी बात को स्पष्ट करने के लिए शेक्सपीयर और विवेकानंद के दर्शन का सहारा लिया। सनातन परंपरा आंतरिक शक्तियों को पहले ही पहचान चुकी है। सनातन मूल्यों के प्रकाश में विश्व की नई रचना कैसी होगी, उसका मॉडल अपने देश के जीवन से देना होगा। विज्ञान और तत्त्वज्ञान दोनों के आधार पर यह बात स्पष्ट होती है, विज्ञान की जानकारी अभी मर्यादित है। विचार ऐसा हो जो व्यवहार में आए। देश की विविधता को दोष देने के बजाय इसे वरदान की तरह देखना चाहिए।

आनेवाली सदी भारत की : अवधेशानंद गिरी

स्वामी अवधेशानंद ने अपने संबोधन में कहा कि भारतीय समाज में बढ़ रहा उपभोक्तावाद और अंगप्रदर्शन चिंता का विषय है। हमें समाज को सकारात्मक दिशा देनी होगी। नदी और पर्यावरण संरक्षण के लिए कार्य करने की जरूरत है। हमारे पास पाँच लाख साधु-संत हैं। नदी बचाने और पौधे लगाने के लिए ये सब सक्रिय भूमिका निभाने के लिए तत्पर हैं। अब अगला युग भारत का है। पश्चिम जहाँ संसार को बाजार मानता है, वहीं भारत की दृष्टि में पूरा विश्व एक परिवार है। उन्होंने शिप्रा नदी को बचाने के लिए किनारों पर वृक्ष लगाने की अपील भी की।

जीना सिखाएगा विचार महाकुंभ : शिवराज चौहान

कार्यक्रम की शुरुआत पर मुख्यमंत्री श्री शिवराज ने कहा कि विचार महाकुंभ में आए सभी विद्वानों का स्वागत करके हम धन्य हुए हैं, मध्य प्रदेश भारत का हृदय प्रदेश है। शिप्रा के तट पर अमृत मेला लगा है, लाखों श्रद्धालुओं और संत वहाँ भी विचार कर रहे हैं। मध्य प्रदेश

सरकार के मन में यह भाव आया कि लोक कल्याण और दुनिया की विभिन्न समस्याओं के निराकरण के लिए कुंभ में 'विचार कुंभ' होना चाहिए। जीवन जीने की सबसे बड़ी समस्या क्या है? इसका समाधान यह विचार महाकुंभ पूरे विश्व को देगा।

स्वच्छता सरिता कुंभ सत्र

मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान ने विचार महाकुंभ के 'स्वच्छता सरिता कुंभ' सत्र में ऐलान किया कि प्रदेश में अब वे लोग नगरीय निकाय चुनाव नहीं लड़ पाएँगे, जिनके घर में शौचालय नहीं है। सरकार अगले सत्र में इसे लागू करने की तैयारी कर रही है। हरियाणा के बाद मध्य प्रदेश दूसरा ऐसा राज्य होगा, जहाँ स्वच्छता के लिए इस तरह के कड़े प्रावधान लागू किए जा रहे हैं। मुख्यमंत्री ने कहा कि स्वच्छता और नदियों-जलस्रोतों को जिंदा किए बिना जीवन जीना बेहद मुश्किल है। हमें मानसिकता में बदलाव लाने की जरूरत है। सरकार स्कूली शिक्षा के पाठ्यक्रम में स्वच्छता और नदियों को पुनर्जीवित करने के पाठ जोड़ेगी। छोटी नदियों को जीवित करने के लिए जरूरी है कि हम बड़ी संख्या में वृक्षारोपण करें। सरकार इस मानसून के दौरान १० करोड़ पौधे रोपेगी।

आर.एस.एस. में नहीं चलती नोटशीट : दवे

कार्यक्रम का संचालन करते हुए आयोजन समिति के अध्यक्ष व सांसद श्री अनिल माधव दवे ने आर.एस.एस. की खूबियाँ गिनाईं और कहा, संघ दुनिया का एकमात्र ऐसा संगठन है, जो पेपरलेस है। यहाँ ऑर्डर जारी नहीं होते और न ही नोटशीट चलती है। पेड़ और पहाड़ों को उन्होंने नदियों का बैंक बताते हुए शिप्रा संरक्षण की बात भी रखी।

कृषि कुंभ सत्र

विचार महाकुंभ में योगगुरु बाबा रामदेव और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरकार्यवाह श्री भैयाजी जोशी भी उपस्थित हुए। अपने उद्‌बोधन में बाबा रामदेव ने कहा कि हम अगले वर्ष तक म.प्र. में फूड पार्क शुरू करेंगे और म.प्र. में ५०० करोड़ रुपए की लागत से गौ अनुसंधान केंद्र बनाएँगे। बाबा रामदेव ने लोगों से स्वदेशी वस्तुओं को अपनाने का आग्रह करते हुए कहा कि देश के सामने आज सबसे बड़ा संकट वैचारिक दरिद्रता का है। योगगुरु ने स्वदेसी का खूब प्रचार-प्रसार किया, साथ ही ऐलान किया कि आज से ही वे हाथ का बना हुआ कपड़ा पहनेंगे। देश के करोड़ों हाथों को काम दिलाने के लिए उन्होंने कुटीर उद्योगों की वकालत की और संकल्प दिलाया कि वे सूती और देश में निर्मित वस्तुओं का ही उपयोग करें। उन्होंने दिलचस्प अंदाज में खड़ाऊ दिखाते हुए कहा कि तीन से पाँच साल में विदेशी कंपनियाँ शीर्षासन करती नजर आएँगी। उन्हें देश निकाला मिल जाएगा। इससे हिंसक-विकास पर अंकुश लगेगा।

भैयाजी जोशी ने अपने उद्‌बोधन में कहा कि हरित कृषि की शक्ति का रिव्यू होना चाहिए। ५० वर्षों में हरित क्रांति से क्या मिला, इस पर विचार किया जाना चाहिए।

सी.एम. शिवराज सिंह चौहान ने कहा कि ११ वर्ष पहले हम खेती में पीछे थे। आज हम उन्नत हैं, हमने ४६०० करोड़ किसानों को राहत राशि बाँटी है। हम किसानों को आत्महत्या नहीं करने देंगे। उन्होंने कहा कि मैं विद्वान् नहीं हूँ, मैं अपने मार्गदर्शकों से सलाह लेता हूँ। हम प्रदेश में आदर्श खेती करेंगे। इसके साथ ही श्री वंदन शिवा ने कहा कि हम अपनी धरती माँ को मार रहे हैं, हमें जोड़नेवाली खेती की ओर बढ़ना होगा।

नारी देह प्रदर्शन वाले विज्ञापन बंद कराएँगे

विचार महाकुंभ के शक्ति कुंभ सत्र में मुख्यमंत्री ने कुछ अहम घोषणाएँ कीं—

• मध्य प्रदेश में ऐसे विज्ञापनों पर प्रतिबंध लगाए जाएँगे, जिनमें नारी देह का प्रदर्शन किया जाता है। इसके लिए कानून लाया जाएगा।

• सरकार महिलाओं को पुरुषों के बराबर मजदूरी देगी।

• स्कूली पाठ्यक्रमों में ऐसे पाठ पढ़ाए जाएँगे, जो समानता के व्यवहार का संदेश देंगे।

• पुरुषों में नशे की आदत के कारण माताओं-बहनों को काफी तकलीफ होती है। केवल शराबबंदी इसका हल नहीं है। इसके लिए समाज की मानसिकता बदलनी होगी, तब शराबबंदी की ओर बढ़ना होगा।

शक्ति कुंभ में गोवा की राज्यपाल श्रीमती मृदुला सिन्हा, साध्वी ऋतंभरा देवी आदि ने भी अपने विचार व्यक्त किए।

शक्ति कुंभ सत्र

महिलाओं पर अत्याचार रोकने में कानून सक्षम नहीं

मध्य प्रदेश सरकार ने 'लाडली लक्ष्मी योजना' शुरू करके उसकी सुरक्षा की चिंता की है। बलात्कार, भ्रूण हत्या और महिलाओं पर अत्याचार क्यों होते हैं? जबकि इस सत्र में महिला को शक्ति-स्वरूपा कहा जा रहा है। देखने में आता है कि रक्षक ही भक्षक बन गए हैं। महिलाओं के अत्याचार की जब भी बात उठती है तब कहा जाता है कि कानून बनाए जाएँ। लेकिन क्या कानून बनाने से घटनाएँ रुक जाती हैं। महिलाओं की स्थिति सुधारने के लिए हमें समाज की ऐसी रचना करनी होगी कि इस तरह की घटनाएँ घटित ही न हों। ये विचार 'शक्ति कुंभ' में ऑल इंडिया महिला समन्वय प्रमुख, मुंबई की सुश्री गीता गुंदे ने व्यक्त किए। सुश्री गुंदे ने कहा कि महिलाओं की दशा सुधारने के लिए शिक्षा की जरूरत है। शिक्षा से आत्मविश्वास आता है। शास्त्रों में भी कहा गया है कि महिलाओं को सम्मान दिया जाए। महिला को पहला गुरु भी कहा गया है, क्योंकि वह जननी है। इसलिए उसका सम्मान करना सिखाना होगा। इसकी शुरुआत घर से करनी होगी। सोशल मीडिया पर बार-बार महिलाओं के प्रति हिंसक घटनाएँ दिखाने से हिंसा बढ़ रही है। प्रचार-प्रसार के माध्यमों ने महिला अत्याचार को बढ़ाने में अहम भूमिका निभाई है। नशा या शराबखोरी (व्यसन) से महिलाओं पर अत्याचार बढ़ रहे हैं। समाज को इन नशों से मुक्ति दिलाने की जरूरत है, तभी महिलाओं पर अत्याचार कम होंगे। कई संस्थाएँ इसके लिए निरंतर काम कर रही हैं और इसके सकारात्मक परिणाम भी सामने आने लगे हैं।

भाग्य से मिलता है भारत में जन्म : साध्वी भगवती

बीस साल पहले जब २५ साल की उम्र में मैं भारत आई थी तो गंगा किनारे हिमालय की गोद में ऋषिकेश में रहने का मौका मिला। इसने मेरे जीवन को बदलकर रख दिया। भारत के लोग तो भाग्यशाली हैं, जो यहीं पर पैदा हुए हैं। यह बात 'शक्ति कुंभ' के दूसरे वक्ता के रूप में साध्वी भगवती ने कही। परमार्थ निकेतन ऋषिकेश से आईं साध्वी भगवती ने कहा कि जीने का सही तरीका बहुत अच्छा विषय है। इसे विचार महाकुंभ में रखा गया है। महिला सशक्तीकरण पर भगवती का कहना था कि भारत ही एकमात्र देश है, जहाँ महिलाओं की पूजा होती है। वह देवी है, भारत माता है, धरती माता है और गौ माता है। यहाँ देवताओं के नाम से पहले शक्ति का नाम लिखने की परंपरा है—गौरीशंकर, लक्ष्मीनारायण और राधाकृष्ण। उन्होंने कहा कि भारत में आकर यह समझ बनी कि बड़ा होना महत्त्वपूर्ण नहीं बल्कि बढ़िया होना जरूरी है। यही भारतीय संस्कृति है। रामायण में शबरी के पास न मेकअप है, न अच्छे कपड़े हैं; लेकिन अंदरूनी भक्ति, त्याग ही है, जो भगवान् राम शबरी के पास खुद चले आते हैं। यह उसकी साधना और त्याग की शक्ति है, जो राम को खींच लाती है। अब ऐसा वक्त आ गया है, जहाँ हमें हमारी नदियों, जंगल, जिन्हें हम पवित्र मानते हैं, उनके लिए कोशिश करें। उन्होंने सभागार में उपस्थित लोगों को संकल्प दिलवाया कि माँ, बहन, बेटियों के प्रति अपने कर्तव्य का पालन करने में कोई कमी नहीं रखेंगे।

महिलाएँ निभाएँ अपनी जिम्मेदारी : मृदुला सिन्हा

ईश्वर ने महिलाओं को जो जिम्मेदारी दी है, उसे उन्हें निभाना चाहिए। आज देखने में आ रहा है कि महिलाएँ विवाह नहीं कर रही हैं। विवाह अनिवार्य नहीं है, लेकिन यह आवश्यक है। महिलाओं की समस्याओं का समाधान ढूँढ़ा जाना चाहिए, लेकिन इसके लिए पुरुषों का साथ होना आवश्यक है। ये विचार 'शक्ति कुंभ' में गोवा की राज्यपाल श्रीमती मृदुला सिन्हा ने व्यक्त किए। उन्होंने कहा कि माँ की मानसिकता बदलने की आवश्यकता है। आजकल माताएँ अपनी बेटी को बेटा बताती हैं। यह विचार ठीक नहीं है। बेटी बेटी ही होती है। बेटियों को विशेष दर्जा मिलना चाहिए। उनके प्रति घर में भी सम्मान का भाव बढ़ना चाहिए। इसके साथ ही पाठ्यक्रमों में महिला सम्मान का पाठ शामिल किए जाने की जरूरत है। साहित्यकार विद्यानिवास मिश्र का जिक्र करते हुए उन्होंने कहा कि नदी, नारी और संस्कृति, सब एक समान हैं। बच्चों को शपथ दिलानी चाहिए कि वे अपने बुजुर्गों को वृद्धाश्रम में नहीं भेजेंगे।

शक्ति प्रदेश बनेगा मध्य प्रदेश : मुख्यमंत्री

मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान ने कहा कि हमारा संकल्प है कि मध्य प्रदेश को शक्ति प्रदेश बनाएँगे। प्रदेश सरकार ने पुलिस में भी महिलाओं के लिए ३३ प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था कर दी है। नगरीय निकायों में ५० प्रतिशत सीट महिलाओं के लिए आरक्षित रहती हैं। समान काम के लिए महिलाओं और पुरुषों को समान वेतन देने की व्यवस्था भी होनी चाहिए। मुख्यमंत्री ने कहा कि हम प्रदेश की धरती पर अब शराब की नई दुकानें नहीं खुलने देंगे। नशा-मुक्ति का अभियान चलाएँगे।

खुद समाधान खोज लेती हैं नारी : साध्वी ऋतंभरा

शक्ति कुंभ में अपने विचार व्यक्त करते हुए साध्वी ऋतंभरा ने कहा कि नारी खुद शक्ति है और भारत की नारी तो हर समस्या का हल खुद ही निकाल लेती है। नारी को रोटी कमाने लायक बनाने की बात करते हुए भारत की भूमि ही कर्तव्य की भूमि है। यहाँ नारी को पूजा जाता है, शक्ति की आराधना की जाती है। उन्होंने कहा कि नारी शक्ति है, जब किसी पुरुष को शरीर में कमजोरी लगती है तो वह यह नहीं कहता कि भगवान् कृष्ण चले गए या भोलेनाथ चले गए, वह कहता है शक्ति चली गई है। समाज के लिए स्त्री-पुरुष सबको साथ लेकर अपना दायित्व निभाना चाहिए। उन्होंने पुरुषों से नशा को छोड़ने और नशामुक्ति पर बल दिया।

नारी में निर्माण और संहार की शक्ति : निवेदिता भिड़े

विवेकानंद केंद्र कन्याकुमारी की उपाध्यक्ष सुश्री निवेदिता भिड़े ने कहा कि 'लीविंग द राइट वे' तभी संभव है, जब महिला और पुरुष साथ-साथ समाज के लिए योगदान दें। समाज के योगदान के लिए दोनों का साथ होना जरूरी है। समाज में कार्य करने के लिए महिला को स्वतंत्रता भी मिलनी चाहिए। जीवन में संयम और त्याग हो, तभी हम पूरी मानवता की रक्षा कर सकते हैं। नारी में निर्माण की शक्ति है, लेकिन वह संहार भी कर सकती है। स्त्री सचेतन शक्ति है। नारी का जन्म शुभ कार्य के लिए हुआ है। यह बात हमें समझनी चाहिए। नारी का जिसने अनादर किया, वह नष्ट हो गया। वहीं जिसने नारी का सम्मान किया है, उसके घर वैभव आया है। आजकल विज्ञापन में जिस तरह महिलाओं को प्रोडक्ट की तरह प्रस्तुत किया जा रहा है, यह सब रुकना चाहिए।

विचार-मंथन की प्रक्रिया सतत चले

सिंहस्थ कुंभ में तीन दिवसीय अंतरराष्ट्रीय विचार महाकुंभ के समापन सत्र को संबोधित करते हुए प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने ग्लोबल वार्मिंग और आतंकवाद को दुनिया की सबसे बड़ी चिंता बताते हुए कहा कि नैतिक श्रेष्ठता की सोच को न छोड़ना ही इन मुद्दों का समाधान है। दुनिया दो तरह के संकट से गुजर रही है। पहला, ग्लोबल वार्मिंग और दूसरा आतंकवाद। लेकिन समाधान क्या है? इसकी जड़ में क्या है, सिर्फ नैतिक श्रेष्ठता की यह सोच कि मेरा रास्ता आपसे ज्यादा सही है। विस्तारवाद का जोरदार विरोध करते हुए मोदी ने कहा कि यह कोई समाधान नहीं है। विस्तारवाद भी एक अन्य तरह के संघर्ष की ओर जाता है। लेकिन अब समय बदल चुका है। विस्तारवाद समस्या का समाधान नहीं है। हमें अपने भीतर झाँकना होगा और देखना होगा कि किस तरह हम खुद को विकसित कर सकते हैं। हमें दुनिया के सामने कुंभ की ब्रांडिंग करनी चाहिए। कुंभ की पहचान केवल नागा साधु और उनके फोटो से ही नहीं है। इसका मूल मानव जीवन की समस्याएँ और उनके निदान से संबंधित विचार में है। परंपरा की खातिर बदलाव को न रोकें। उन्होंने सुझाव दिया कि संत समाज हर साल एक सप्ताह अपनी परंपरा, नदी, पेड़, नारी गौरव और शिक्षा जैसे विषयों पर भी विचार कुंभ आयोजित करे।

प्रधानमंत्री ने देश के सामाजिक अंतर्विरोधों व टकराव का जिक्र करते हुए कहा कि हमारा कॉन्फ्लिक्ट मैनेजमेंट (परस्पर विरोधी व्यवस्था) अनूठा है। हमें दुनिया को बताना होगा कि हम किस तरह के कॉन्फ्लिक्ट का सामना करने वाले लोग हैं। यहाँ अंतर्विरोधों का चरम है। इनके साथ रहना हमारी परंपरा का हिस्सा है। यह इसी से स्पष्ट है कि हम हठवादिता से नहीं बँधे, बल्कि दर्शन की परंपरा से आज भी प्रेरणा लेते हैं। परंपराओं में बदलाव के हिमायती भी हैं। पहले समाज यह मानता था कि समंदर पार नहीं जाना, लेकिन अब विदेश जाना बुराई नहीं मानी जाती। समय बदल गया है। समाज-हित में यह बदलाव हमारे लिए जरूरी है। हमें नई ऊँचाइयों को छूना है।

कुंभ से तय होती थी देश की दिशा

प्रधानमंत्री श्री मोदी ने कहा कि संत समाज अपने भक्तों के बीच बेटी की पढ़ाई, पर्यावरण संरक्षण और समाज से जुड़ी अन्य समस्याओं पर हर साल एक सप्ताह चिंतन करे। उसके बाद हर तीन साल में कुंभ और बारह साल बाद महाकुंभ में विचार-मंथन की प्रक्रिया चले। देश में सदियों से उज्जैन, प्रयाग, नासिक और हरिद्वार में कुंभ की परंपरा चली आ रही है। पहले कुंभ के जरिए संत और समाज-सुधारक भविष्य के लिए नई विधाओं का अन्वेषण करते थे।

बारह साल की दिशा और योजना तय होती थी। हर तीन साल में समीक्षा करते थे। ज्ञान का पूरब-पश्चिम नहीं होता बल्कि यह अजर-अमर होता है। विश्व में जो भी श्रेष्ठ है, उसे हम सदियों से अपनाते आए हैं। विविधताओं वाले हमारे देश में हम जहाँ पिता की आज्ञा माननेवाले भगवान् राम को पूजते हैं तो दूसरी तरफ पिता की अवज्ञा करनेवाले प्रह्लाद भी हमारे पूज्य हैं।

प्रधानमंत्री ने कहा कि कुंभ की परंपरा हजारों साल पुरानी है। हम आत्मा के अमरत्व से जुड़े हुए हैं। कुंभ विशाल भारत को समेटने का माध्यम है। अत: परंपराएँ कभी रुकावट नहीं बननी चाहिए।

कुंभ मेले की परंपरा कैसे प्रारंभ हुई इसके पीछे कई प्राचीन किस्से प्रचलित हैं। वैसे कुंभ का मेला बारह साल में एक बार होता है। इसमें विशाल भारत को अपने में समेटने का प्रयास होता है। कुंभ का मतलब केवल नागा साधु ही नहीं होता है। उज्जैन के कुंभ में इस आयोजन के जरिए नया प्रयोग हुआ है। देश दुनिया के विद्वानों ने मंथन कर ५१ अमृत बिंदु निकाले हैं। इनसे समाज की दिशा तय होगी।

ये ५१ अमृत बिंदु जनमानस और वैश्विक समूह को भारत की सोच को बताने में सार्थक सिद्ध होंगे। ये कुंभ प्रबंधन के लिए सबसे अच्छी केस स्टडी हैं। देश और दुनिया के विद्वानों ने तीन दिन यहाँ रहकर देश और दुनिया को संदेश देने का कार्य किया।

विचार-कुंभ के सार रूप ५१ अमृत बिंदु

विचार महाकुंभ परिपूर्ण मानव जीवन के लिए प्रासंगिक मार्गदर्शी ५१ सिद्धांतों को सिंहस्थ २०१६ के सार्वभौम अमृत संदेश के रूप में घोषित करता है—

१. मनुष्य का अस्तित्व मात्र भौतिक नहीं है। उसके चैतन्य और संवेदन के आयाम अनंत हैं। यह चेतना समस्त चराचर में व्याप्त है। यह सत्य जीवन में मूल्यों का आधारभूत प्रेरक है।

२. संपूर्ण मानव जाति एक परिवार है। अत: सहयोग और अंतर्निर्भरता के विभिन्न रूपों को अधिकतम प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

३. विकास का लक्ष्य सभी के सुख, स्वास्थ्य और कल्याण को सुनिश्चित करना है। जीवन में मूल्य के साथ जीवन के मूल्य का उतना ही सम्मान करना जरूरी है।

४. शिक्षा में मूल्यों के शिक्षण, व्यवहार एवं विकास का नियमित पाठ्यक्रम शामिल किया जाए, ताकि कम उम्र से ही बच्चों में उनका प्रस्फुटन हो सके। इस पाठ्यक्रम को अन्य विषयों की तरह समान महत्त्व दिया जाना चाहिए। यह पाठ्यक्रम ऐसे आरंभिक प्लेटफार्म की तरह हो, जिसके आस-पास शिक्षा का संपूर्ण पाठ्यक्रम विकसित किया जा सके।

५. अस्वस्थ प्रतिस्पर्धात्मकता के स्थान पर सामाजिकता, अंतर्निर्भरता, करुणा, मैत्री, दया, विनम्रता, आदर, धैर्य, विश्वास, कृतज्ञता, पारदर्शिता, सहानुभूति और सहयोग जैसे मूल्यों को बढ़ाने के लिए शिक्षा की पद्धतियों में यथोचित परिवर्तन किया जाए।

६. मूल्यान्वेषण सिर्फ निजी विकास के लिए नहीं बल्कि समाज को एक व्यवस्था देने, संबंधों को संतुलित करने और जीवन प्रतिमानों का निर्माण करने के लिए जरूरी है।

७. शुचिता, पारदर्शिता और जवाबदेही सार्वजनिक जीवन की कसौटी होना चाहिए।

८. सत्य तक पहुँचने के अनेक मार्ग हैं, किंतु सत्य एक ही है। विविधता में एकता स्थापित करने के लिए यह समझ अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

९. सर्वधर्म समादर की भावना विकसित करने के लिए शिक्षा में उपयुक्त पाठ्यक्रम सम्मिलित किए जाएँ।

१०. सृष्टि एक ही चेतना का विस्तार है और मानव उसी का अंश है। अत: समस्त जीवों के प्रति दया, प्रेम व करुणा आधारित व्यवस्थाएँ निर्मित की जानी चाहिए। धर्म मनुष्य की आत्मोन्नति का मार्ग तथा मानव कल्याण का साधन है। धर्म जहाँ हमें प्रेम, सहयोग, सामंजस्य के पाठ के माध्यम से एक सूत्र में बाँधता है, वहीं विस्तारवादी उद्देश्यों के लिए किए गए उसके दुरुपयोग से विश्वबंधुता का हनन होता है।

११. धर्म यह सीख देता है कि जो स्वयं को अच्छा न लगे, वह दूसरों के लिए भी नहीं करना चाहिए। जियो और जीने दो का विचार हमारे सामाजिक व्यवहार का मार्गदर्शी सिद्धांत होना चाहिए।

१२. धर्म जोड़नेवाली शक्ति है। अत: धर्म के नाम पर की जा रही सभी प्रकार की हिंसा का विरोध विश्व भर के समस्त धर्मों, पंथों, संप्रदायों और विश्वास-पद्धतियों के प्रमुखों द्वारा किया जाना चाहिए।

१३. पृथ्वी पर पर्यावरणीय संकट का समाधान सिर्फ प्रकृति के साथ आत्मीयता से प्राप्त होगा।

१४. देशज ज्ञान के विविध क्षेत्रों, जैसे कृषि, वानिकी, पारंपरिक चिकित्सा, जैव विविधता संरक्षण, संसाधन प्रबंधन और प्राकृतिक आपदा में महत्त्वपूर्ण सूचना स्रोत के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए।

१५. पारिस्थितिकी की रक्षा के लिए अत्यधिक उपभोक्तावाद पर अंकुश लगाने की आवश्यकता है। प्राकृतिक संसाधनों के अविवेकपूर्ण शोषण ने अनेक प्राकृतिक विपदाओं को जन्म दिया है। इसका संज्ञान लेते हुए ऐसी जीवन शैली एवं अर्थव्यवस्थाओं को विकसित करें, जिनसे प्रकृति का पोषण हो।

१६. विश्व में व्याप्त भीषण जलसंकट से जीवन संकट में है। जल संवर्धन की तकनीकों और प्रणालियों को प्रोत्साहित करने और पृथ्वी की जल-संभरता को क्षति पहुँचानेवाली प्रक्रियाओं को रोकने के कदम तत्काल उठाए जाएँ।

१७. प्राचीन सभ्यता और संस्कृति वाले सामाजिक समूहों ने प्रकृति से नैसर्गिक संबंध स्थापित करने के रीति-रिवाज एवं कलाओं का विकास किया है। ऐसे मानवीय व्यवहार एवं जीवन शैली का वैज्ञानिक आधार समझकर आधुनिक जीवन में उनका अनुसरण आवश्यकतानुसार करना चाहिए।

१८. भावी पीढ़ियों के प्रति अपने दायित्वों के जवाबदेह निर्वहन के लिए यह आवश्यक है कि नीतियाँ प्राकृतिक संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग के भाव से प्रेरित हों। पृथ्वी पर हरित आवरण में आ रही कमी गंभीर चिंता एवं चिंतन का विषय है। अत: पौधरोपण एवं धरती के भीतर के रूट स्टॉक के पुनर्जीवन के लिए वृहद रूप से काम किया जाना चाहिए।

१९. विज्ञान और अध्यात्म एक-दूसरे के पूरक हैं। प्रकृति के मौलिक रहस्यों को जानने के लिए विज्ञान और आंतरिक रहस्यों को समझने के लिए अध्यात्म की आवश्यकता है। विज्ञान और अध्यात्म के संबंधों का संस्थागत रूप से अध्ययन आवश्यक है।

२०. मनुष्य के अनुभव मौलिक के साथ-साथ आध्यात्मिक स्तर पर भी होते हैं। भौतिक आवश्यकताओं की पूति के लिए समृद्धि अनिवार्य है, परंतु ऐसी समृद्धि आध्यात्मिक अनुभव के बिना संतुलित जीवन का आधार नहीं बन सकती।

२१. विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी में जो संबंध है, वही संबंध आध्यात्मिक उन्नति का योग एवं ध्यान के साथ है। उत्कृष्ट समाज की रचना मानव जीवन में उस व्यापक दृष्टिकोण को लेने से संभव है, जो योग के माध्यम से प्राप्त होता है।

२२. अध्यात्म को विषय-वस्तु को पाठ्यक्रमों में सरल स्वरूप में सम्मिलित करना चाहिए। विषयों के मौलिक ज्ञान के अतिरिक्त उनमें निहित प्राकृतिक नियमों एवं नैसर्गिकता की जानकारी विद्यार्थियों की मानसिक परिपक्वता का साधन बनेगी।

२३. प्रकृति के नियमों के विरुद्ध जीवनयापन करने की वर्तमान जीवन शैली से शारीरिक एवं मानसिक व्याधियों में तीव्र गति से वृद्धि हुई है। इन्हें दूर करने के लिए योग एवं आयुर्वेद की प्रणालियों तथा प्रभावों के विषय को आधुनिक चिकित्सा विज्ञान से जोड़ने संबंधी शोध को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है। इससे आनंदपूर्ण जीवन के मूलभूत सिद्धांत आसानी से समझ में आ सकेंगे।

२४. स्वच्छता की किसी भी रणनीति में विभिन्न विश्वास प्रणालियों में मौजूद आंतरिक पवित्रता और बाह्य शुद्धता के प्रासंगिक सिद्धांतों का लाभ लिया जाना चाहिए। स्वच्छता को प्रशासित गतिविधि की जगह सामाजिक मूल्य के रूप में पुनर्स्थापित किया जाना चाहिए।

२५. स्वच्छता की रणनीति को मात्र व्यक्ति की आर्थिक स्थिति से जोड़कर विकसित नहीं किया जाना चाहिए।

२६. 'वेस्ट' को संसाधन की दृष्टि से देखने से भी स्वच्छता बढ़ाई जा सकती है। फसल-उर्वरीकरण में वेस्ट की भूमिका टिकाऊ कृषि की पारंपरिक प्रथाओं में शामिल रही है।

२७. नदियों का संकट सिर्फ प्रदूषण तक सीमित नहीं बल्कि अस्तित्व

से जुड़ा है। नदियों का लुप्त होना इस ग्रह की पारिस्थितिकी की स्थिरता के लिए चुनौती है। नदियों के पुनर्जीवन के प्रयासों को सघन और उनके अंतरराष्ट्रीय अनभवों को साझा किया जाए।

२८. अनियोजित शहरीकरण ने नदियों को ड्रेनेज के रूप में इस्तेमाल किया है। नागरिकों में सरिता-संवेदनशीलता को बढ़ाने के अलावा शहरी नियोजन में उनके संरक्षण के प्रभावी प्रावधान किए जाने चाहिए।

२९. नारी के द्वारा किए जा रहे गृहकार्य का मूल्य घर के बाहर किए जानेवाले व्यावसायिक कार्य के तुल्य है। उसके गृह कार्य को सकल घरेलू उत्पाद में शामिल करने की प्रविधियाँ विकसित की जाएँ।

३०. स्त्री को विज्ञापनों में वस्तु की तरह प्रस्तुत करना कानूनन निषिद्ध किया जाए।

३१. प्रत्येक स्तर पर नारी-समकक्षता-सूचकांक विकसित कर उसके आधार पर समीक्षा के मानक तय किए जाए।

३२. समान कार्य के लिए समान वेतन का सिद्धांत स्त्री रोजगार के सिलसिले में अपनाया जाए। इसके लिए नियोक्ता को जवाबदेही सुनिश्चित करने के लिए उनसे विमर्श का एक अभियान शुरू किया जाए।

३३. सभी परामर्शदात्री, नियामक, निगरानी तथा अन्य निकायों में स्त्रियों को समान रूप से प्रतिनिधित्व दिया जाए। समानता निष्पक्षता से प्राप्त नहीं की जा सकती, यह सकारात्मक हस्तक्षेप के बिना संभव नहीं है।

३४. नारी की मानवीय प्रतिष्ठा और गरिमा सार्वभौम रूप से स्वीकार्य होनी चाहिए तथा यह शासकीय नीतियों तथा योजनाओं में परिलक्षित होनी चाहिए।

३५. विज्ञान एवं टेक्नॉलोजी को नारी के विरुद्ध इस्तेमाल करने के सभी संभावित तरीकों पर प्रभावी रोक लगनी चाहिए।

३६. महिलाओं की समस्याओं का समाधान करते समय उनके संपूर्ण जीवन-चक्र को दृष्टि में रखना आवश्यक है। संतान के सृजन और पालन के दायित्व को ध्यान में रखकर उनके पोषण, आहार, प्रजनन और स्वास्थ्य संबंधी आवश्यकताओं पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

३७. महिलाओं के प्रतिनिधित्व और आरक्षण संबंधी प्रावधानों का लाभ लोकतंत्र के सभी स्तरों पर संवैधानिक रूप से मिलना चाहिए।

३८. घरेलू महिलाओं के दैनंदिन जीवन-क्रम को सुविधायुक्त बनाने के लिए सुसंगत अधोसंरचना में निवेश आवश्यक है, ताकि वह अन्य उत्पादक कार्यों में अधिक भागीदारी कर सके।

३९. २०वीं शताब्दी से विकसित की जा रही कृषि प्रौद्योगिकियों से प्राथमिक क्षेत्र में अत्यधिक ग्रीन हाऊस गैस का उत्सर्जन होना चिंताजनक है। इस समस्या का समाधान आवश्यक है।

४०. भू-जल स्तर का गिरना, मिट्टी का क्षरण और उसकी सहज उर्वरा शक्ति का नाश, रासायनिक प्रदूषण होना कृषि में अमृत-दृष्टि के अभाव का प्रतीक है। कृषि के प्रति ऐसी दृष्टि विकसित करने की आवश्यकता है, जो उसकी पुनरुत्पादकता को पोषित कर सके।

४१. किसानों की बीज-स्वायत्तता उनका मौलिक और अनुलंघनीय अधिकार है। इस अधिकार की सुरक्षा जैव-विविधता की भी रक्षा है।

४२. देशज गौवंश के संरक्षण को उसके पर्यावरण पर होनेवाले सकारात्मक प्रभाव की दृष्टि से देखा जाना चाहिए।

४३. संवहनीय कृषि के लिए आधुनिक नीतियों के पुनरीक्षण की आवश्यकता है। कृषि की सुस्थिरता के लिए व्यापक वृक्षायुर्वेद, अग्निहोत्र कृषि, वैदिक खेती, सहज कृषि, प्राकृतिक खेती, जैविक खेती जैसे विकल्पों पर प्राथमिकता से शोध किया जाना आवश्यक है।

४४. सभी हितधारकों को संयुक्त रूप से कृषि की बाजार-निर्भरता और ऋणोन्मुख प्रकृति के विकल्प ढूँढ़ने की पहल करनी होगी। प्राकृतिक हरित खादों का अधिक प्रयोग कृषि को सुस्थिर बनाता है। पंचगव्य, जीवामृत, मटकाखाद जैसी अतिरिक्त सहज तकनीकों से बेहतर परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं। अजैविक आदानों की तुलना में जैविक आदानों को राजकोषीय सहायता, ऋण एवं बाजार-समर्थन में प्राथमिकता मिलनी चाहिए।

४५. ऐसी पद्धतियों और कृषि आदान को हतोत्साहित करना चाहिए, जो मिट्टी के स्वास्थ्य, पशुओं और वनस्पति के स्वास्थ्य, जल संतुलन और पर्या-प्रणाली पर प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं।

४६. शून्य बजट खेती की अवधारणा को लोकप्रिय करने की जरूरत है, ताकि न्यूनतम लागत से अधिकतम लाभ अर्जित किया जा सके।

४७. पूँजी का अधिकतम लोगों में अधिकतम प्रसार ही आर्थिक प्रजातंत्र है। कुटीर उद्योगों को आर्थिक एवं सामाजिक प्रजातंत्र के महत्त्वपूर्ण अंश की तरह देखा जाना चाहिए।

४८. ऐसी औद्योगिकता को प्रोत्साहित किया जाए, जिसमें कुटीर उद्योगों के वैविध्य का सम्मान हो और वे किसी असमान प्रातिस्पर्धा में खड़े न हों। अंतरराष्ट्रीय व्यापार संगठनों से उनके संरक्षण तथा संवर्द्धन की सचेत कोशिशों का आग्रह किया जाना चाहिए।

४९. कुटीर उद्योग मास प्रोडक्शन के स्थान पर प्रोडक्शन बाइ मासेस के सिद्धांत को क्रियान्वित करने का प्रबल साधन है। इसके माध्यम से समावेशित विकास के लक्ष्य को प्राप्त किया जाना संभव है।

५०. कुटीर उद्योगों के छोटे उद्यमियों को प्रोत्साहित करने के लिए इ-तकनीक पर आधारित मार्केटिंग नेटवर्क विकसित किए जाएँ, ताकि उनका उत्पाद विश्व भर के उपभोक्ताओं की उपलब्ध हो सके।

५१. शिल्पी दिहाड़ी मजदूर के रूप में परिवर्तित होते जा रहे हैं। वे मात्र उद्यमी नहीं, बल्कि सृजनधर्मी कलाकार हैं। देशज संस्कृति के संवर्धन में उनके योगदान को समाज में आदर मिलना चाहिए।

इस विचार महाकुंभ का विनम्र आग्रह है कि पृथ्वी पर सम्यक् और संतुलित जीवन के लिए इस संदेश में निहित मूल्यों और सिद्धातों को हर समुदाय अपने परिवेश और प्रासंगिकता के अनुरूप क्रियान्वित करने का उपक्रम करे।

गंगा-निवास, १०, रघुवंशी कॉलोनी,
मरीमाता चौराहा, इंदौर-४५२००६ (म.प्र.)
दूरभाष : ०९४२४०३८८०१

चौपाल

मंजु मधुकर

अंजली के पति ने नोएडा में नई-नई कोठी बनवाई थी, साफ-सुथरा, हरा-भरा सेक्टर सभी सुविधाओं से परिपूर्ण था। आसपास प्लॉट खाली थे, कुछ पर मकान बन रहे थे। कुछ में रिहायश भी हो गई थी। उसके पड़ोस में एक कोठी लगभग तैयार हो गई थी तथा उसमें टू-लेट का बोर्ड भी लग गया था। कुछ दिनों में ट्रक भी आकर खड़ा हो गया, सामान उतरने लगा, चहल-पहल भी हो गई। पड़ोस की कोठी बड़ी थी, उसमें पीछे लॉन भी था तथा सर्वेंट क्वार्टर भी। मालूम हुआ, पशुपालन विभाग के उप-महानिदेशक उसमें रहने आ रहे हैं, लखनऊ से ट्रांसफर होकर आए हैं। एक दिन ट्रक से दो गाएँ और दो कुत्ते भी उतरे, एक छोटी सी स्यामी बिल्ली भी थी।

अंजली अपनी बालकनी से सब गतिविधियाँ देखती—गाएँ, कुत्ते, बिल्ली देखकर भड़भड़ा उठी, ''अब यहाँ गायों के गोबर की गंदगी भी फैलेगी। सारे दिन ये कुत्ते भौंकते रहेंगे।''

''अरे भाई, तुम्हें क्या है ? वह अपने घर में कुछ भी करें। पशुपालन विभाग में हैं, नौकर-चाकर, चारा-वारा फ्री है तो नौकरी के ठाठ-बाट हैं। हम लोग तो भाई अभी-अभी रिटायर हुए हैं। सब राजपाट हमने भी तो सरकारी नौकरी में बिताए हैं न!'' कहकर अंजली के पति ने उसे चुप करा दिया।

एक दिन दोपहर को अंजली गेट के पास खड़ी हो सब्जीवाले से सब्जी का मोल-भाव कर रही थी कि एक नीले रंग की होंडा सिटी कार आकर रुकी, उसमें से दो जवान युवक-युवती एक पुरुष एवं एक प्रौढ़ा स्त्री उतरी। शेष लोग अंदर चले गए, वह स्त्री सब्जी की ठेली के पास आ गई। अंजली ने परिचय करने की गरज से आँख उठाकर उसकी ओर देखा। ''इस कोठी में...'' वह प्रश्न पूछते-पूछते ठिठक गई। वह महिला उसकी ओर एकटक देख रही थी। दोनों के नेत्रों में पहचान के डोरे उभरे।

''शहला ?'' वह फुसफुसाई।

''अंजली!''

और दोनों एक-दूसरे से चिपट गईं। गेट खोलकर भीतर जाते युवक-युवती ठिठक गए।

''अरे हिना, ईमान, इधर आओ। अपनी आंटी से मिलो। मेरे बचपन की सहेली।'' उत्साह और प्रसन्नता उसके चेहरे से टपक रही थी।

बच्चों ने उसके पास आकर उसे अभिवादन किया।

जानी-मानी रचनाकार। अब तक तीन कहानी-संग्रह तथा अनेक प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में कहानियाँ प्रकाशित। आकाशवाणी जयपुर से कहानी एवं वार्त्ताएँ प्रसारित। बहरीन में हिंदी अध्यापन। मॉरीशस ब्रॉडकास्टिंग कॉरपोरेशन में 'घर-गृहस्थी', 'आपकी चिट्ठी मिली' तथा अन्य सामाजिक कार्यक्रम प्रस्तुत।
बहरीन में 'फाइन आर्ट सोसाइटी' द्वारा सम्मानित व पुरस्कृत।

''हम कितने दिनों बाद मिल रहे हैं न, शहला।''

''हाँ अंजली, पूरे बीस बरस हो गए।''

''हाँ, आखिरी बार मैं जब पापा की मृत्यु हो गई थी तब तू भी वहाँ आई थी, तभी मिले। फिर तो वहाँ का घर बेच-बाच भाई लोग दिल्ली आ गए। सबके अपने फ्लैट बन गए। मम्मी अभी हैं, बड़े भैया के पास हैं, अलीगढ़ जाने को छटपटाती रहती हैं। जब मेरे पास आएँगी तो तुझे मिलाऊँगी। बहुत खुश होंगी।''

''मैं तो अलीगढ़ जाती रहती हूँ। अम्मी-अब्बू तो रहे नहीं, दोनों भाईजान हैं, उनके बच्चों के शादी-ब्याह होते रहते हैं। अलीगढ़ अब बहुत बदल गया है, जहाँ मैरिस रोड पर हम लोगों की कोठियाँ थीं, वहाँ मल्टीस्टोरी फ्लैट बन गए हैं।

''अच्छा चल, बातें बाद में होंगी, मैं जल्दी ही तुम लोगों के लिए चाय भेज रही हूँ और रात्रि भोज हमारे घर है तुम सबका।''

अंजली उत्साहित सी घर में घुसी। पतिदेव अखबार पढ़ रहे थे। जल्दी-जल्दी पड़ोसियों के विषय में बताया। चाय-पकौड़ियाँ, नमकीन मिठाई से ट्रे भरकर पड़ोस में भेजी और रात के खाने की तैयारी में जुट गई। शहला को शुरू से ही उनके घर का पूरी-कचौड़ी, कद्दू, आलू, खीर हलवे का खाना पसंद था। और अंजली को शहला के घर की सेवइयाँ व कबाब आदि पसंद थे।

रात्रि में शहला अपने पति अहसान साहब व बच्चों के साथ आई। खुशगवार माहौल में आपस में परिचय हुआ। जैसे शहला और अंजली अलीगढ़ की थीं, वैसे ही दोनों के पति भी लखनऊ के थे। स्कूल व कॉलेज भी एक ही थे। अत: बातचीत का जो दौर चला तो रात बारह बजे ही समाप्त हुआ।

अंजली की बेटी का विवाह हो गया था, बेटा बंबई में पढ़ रहा था।

उसके पति अभी-अभी रिटायर्ड होकर एक प्राइवेट संस्थान में सलाहकार के पद पर सुशोभित थे। शहला के पति को अभी रिटायर होने में तीन वर्ष थे। दोनों बच्चे अच्छी नौकरी पर थे तथा दोनों की मँगनी भी हो गई थी। अंजली के घर में नौकरों की काफी बड़ी फौज थी। उधर शहला के यहाँ भी सरकारी नौकर-चाकर थे। आपस में भृत्यगण भी एक-दूसरे के दोस्त बन गए।

शहला अपनी गायों का दूध अंजली को भेजती और कहती, ''अंजली, मेरे ससुरजी कहते हैं यह दूध नहीं अमृत है। वे जब भी आते हैं, गायों की सेवा अपने हाथ से करते हैं।''

अंजली ने शहला को अपनी किटी पार्टी, महिला क्लब में सदस्या बना लिया। शहला स्वभाव की बहुत ही मिलनसार महिला थी। अलीगढ़ में दोनों के घर पास-पास थे। शहला की माँ एवं अंजली की माँ में बहुत बहनापा था। होली की गुझियाँ दोनों मिलकर बनाती थीं, बड़े रस भीने रिश्ते थे। सभी त्योहार मिल-जुलकर होते थे। दोनों के पिता भी यूनिवर्सिटी में प्रोफेसर थे। शहला और अंजली गर्ल्स कॉलेज में पढ़ती थीं। फिर दोनों ने ही अंग्रेजी साहित्य में यूनिवर्सिटी से एम.ए. किया और पहले अंजली का विवाह हुआ तथा दो बरस बाद शहला का विवाह हुआ। अंजली शहला को अपनी माँ से भी मिला लाई। अंजली की माँ शहला को देर तक चिपटाकर उसकी माँ और पुराने सुनहरे दिन याद कर बहुत देर तक रोती रहीं। सच में क्या दिन थे। दंगे-फसाद भी राजनैतिक कारणों से होते रहते थे, फिर भी सब एक हो जाते थे। कर्फ्यू में भी अंजली के घर यूनिवर्सिटी के चपरासी आते और काम-काज करते। तब कोई नहीं जानता था 'असहिष्णुता' के नाम को या 'इनटॉलरेंस' को। यह तो एक नवीन नामकरण हुआ है बुद्धिजीवियों के मस्तिष्क से।

जहाँ बिहार के चुनाव की सरगर्मियाँ हुईं, वहीं अनेक मुद्दे उठ खड़े हुए। शहला एवं अंजली परेशान कि यह हमारे देश में हो क्या रहा है। साहित्यकार सम्मान लौटा रहे हैं। अभिनेता भी बढ़-चढ़कर बोल रहे हैं, जिस देश की जनता से करोड़ों रुपए कमाते हैं, उसी के विषय में ऐसे-ऐसे बयान!

शहला कहती, मेरे ससुर लखनऊ में हिंदुओं के मोहल्ले में अकेले सुख-शांति से रहते हैं, वहाँ तो कभी इनटॉलरेंस नहीं हुई। हमारी कोठियों के पीछे की मसजिद के लाउडस्पीकर से सुबह चार बजे अजान होती है। कितनों की नींद खराब होती, सारा हिंदुओं का मोहल्ला है, पर कहीं कोई प्रतिवाद नहीं करता। एक दिन दोनों ड्राइंगरूम में बैठी इनटॉलरेंस पर बात कर रही थीं कि झाड़ू-पोंछा करनेवाली रमिया कमर पर हाथ रखे काम छोड़ खड़ी हो गई, ''मेम साहब, आप लोग अखबार में पढ़कर, टी.वी. देखकर क्या कहती रहती हो, तोल-ताल?''

''अरे नहीं, यह अंग्रेजी का शब्द है। तू नहीं समझेगी, किसी ने गलत कार्य किया और उसे रोक दिया या मना कर दिया तो समझो इनटॉलरेंस हो गई।''

''मतलब हमने झाड़ू ठीक से नहीं लगाई तो तुमने हमें रोक दिया तो 'इनटॉलरेंस' अंग्रेजी का यह शब्द हो गया।''

''हाँ महारानी, अब तू नखरे न दिखाइयो।''

अंदर तो शहला और अंजली की यह गपशप चलती। बाहर अंजली के घर में गाँव की चौपाल सा दृश्य था। बचपन में अंजली अपने बाबाजी, दादाजी के गाँव जाती थी, वहाँ के बड़े जमींदार थे—बाबाजी। वहीं उसने देखा था रोज शाम को चौपाल जुड़ती थी। सुख-दुःख की बातें होती थीं। समस्याएँ सुलझाई जाती थीं, कुछ बहस-विवाद होते थे। यह रोज का क्रम था।

अंजली के घर के बाहर लॉन और बरामदे थे। प्रातः दस बजे नाश्ते के बाद भी चौपाल जुड़ती। उसका कश्मीरी पंडित ड्राइवर, क्षत्रिय-राजपूत गार्ड, कपड़े धोनेवाला धोबी, जमादार शहला के भी ड्राइवर चौकीदार सब एकत्र हो जाते। अंजली की मेड सर्वेंट सबको चाय-नाश्ता देती। सब चाय पीते और अपने दुःख-सुख बाँटते। सफाईकर्मी झाड़ूवाली रमिया की माँ भी वहाँ बैठ जाती। वह चौका-बरतन करती थी। रमिया सबको चाय पिलाती।

हिंदी का अखबार भी तब तक बाहर पहुँच जाता। ड्राइवर साहब अखबार पढ़कर सबको सुनाते, सब पर चर्चा भी होती। प्रधानमंत्री जन-धन योजना पर बात होती। कुछ मोदीजी के भक्त थे, कुछ कांग्रेस के चमचे थे, परंतु मोदी के समर्थक बहसबाजी में भारी पड़ते थे।

एक दिन रमिया बाहर चाय देने आई तो गर्व से बोली, ''हम सब जान गई हैं। यह अंग्रेजी का 'इनटॉलरेंस' देखो। किसी ने गलत काम किया उसे टोक दिया, बस वह भड़क गया। हमारे मवेशी चुरा लिये गए, चोरी करनेवाले की पिटाई कर दी तो खबर बन गई। कागज रँगने को कुछ खबर चाहिए, सो छाप दी।''

''लेकिन रमिया पिटाई-विटाई में किसी की जान भी तो जा सकती थी।''

एक स्वर उभरा।

''मर जाते हैं? और वो जो रोज कारगिल बॉर्डर पर मरकर शहीद हो रहे हैं, हमारे दो भाई शहीद हो गए, तब तो न निकला अंग्रेजी का यह शब्द—न लौटाए किसी ने पुरस्कार, न बोला कोई फिल्मी हीरो। अब काहे का इतना शोर?'' राजपूत गार्ड रोष में बोला।

''हाँ भाई, जब कश्मीर से लाखों हिंदुओं को खदेड़कर भगा दिया तो सब क्यों चुप रहे। हमारा वहाँ घर था, सेब का बगीचा था। सब रातोरात छोड़कर अपनी बहू-बेटियों की इज्जत बचाते हुए भागकर आए। अब यहाँ की गरमियों में ड्राइवरी कर रहे हैं।'' कश्मीरी पंडित ड्राइवर दुःख से बोला।

''दलित की राजनीति भी फैला रखी है। अब मेरा भतीजा बारहवीं

में जैसे-तैसे पास हुआ और सरकारी इंजीनियरिंग कॉलेज में पढ़ने चला गया। कुछ समझ में पढ़ाई-वढ़ाई आती नहीं है। फेल होने के डर से एक रात नींद की गोलियाँ खा लीं। वह तो कहो, बच गया वरना इस पर भी राजनीति छिड़ जाती और सभी पार्टियाँ अपनी-अपनी रोटी सेंकती।'' जमादार भी बोल पड़ा, जो स्वयं दलित था।

उस दिन इनटॉलरेंस पर ही बहस हो रही थी। अंजली ड्राइंगरूम में बैठी सब सुन रही थी। अखबार इन्हीं खबरों से रँगे होते हैं। अंग्रेजी के अखबार तो पढ़ने का भी मन नहीं करता। बस स्थानीय हिंदी अखबार में ही कुछ सामयिक खबरें निकलती हैं। अंजली वही पढ़ती, उसी का संपादकीय कॉलम पढ़ती और आश्वस्त होती।

इधर कुछ दिनों से शहला के घर भी उथल-पुथल मची हुई थी। उसकी बेटी की जहाँ मँगनी हुई थी, वहाँ शादी करने से इनकार कर दिया। उसका कहना था कि हालाँकि वह पढ़ा-लिखा, अच्छी नौकरी पर अवश्य है, बंबई में रहता है और फिर भी दकियानूसी बातें करता है, जबकि हिना आजाद खयाल की लड़की थी। और एक दिन उसने ऐलान कर दिया कि वह अपने साथ काम करनेवाले एक हिंदू पंजाबी युवक से शादी करना चाहती है। लड़के के घरवाले आजाद तबीयत के थे। पूर्ण रूप से तैयार हैं।

अंजली के समक्ष शहला ने यह समस्या रखी। अंजली ने अपनी सकारात्मक राय रखी।

''लेकिन अंजली, अहमद मेरे मामूजाद का भाई का बेटा है। खानदान में बदनामी हो जाएगी। फिर ईमान के ससुरालवाले भी क्या कहेंगे।''

''कुछ नहीं होगा भाईजान, और ईमान क्या कहते हैं?''

''वे लोग तैयार हैं।''

''ठीक है, तो बिना सोचे-समझे कर दो।''

और एक दिन हिना की कोर्ट मैरिज हुई और फिर धूमधाम से पाँच सितारा होटल में रिसेप्शन भी हो गया। हिना लाल लहँगे में लाल बिंदी, सिंदूर लगाए बहुत प्यारी लग रही थी। उसकी सास-ननदें खुशी से न्योछावर हो रही थीं।

अंजली सोच रही थी कि कहाँ तो देश में यह माहौल और कहाँ हिना की शादी की रौनक व खुशगवार माहौल! अंजली की चौपाल में कई दिनों तक यही चर्चा चली। सबने खूब मिठाई खाई। इनाम-इकरार मिला, सभी इस नवीन संबंध से खुश थे।

एक दिन उनकी चौपाल में फिर सरगर्मी बढ़ गई। ड्राइवर साहब अखबार बाँच रहे थे और बता रहे थे कि कुछ विद्यार्थियों ने देश को तोड़ने की बात की है। वे लोग देश के टुकड़े करना चाहते हैं, खराब-खराब नारे लगाए हैं।

सब श्रोतागण चौंक उठे, ''अच्छा, किसने किया यह सब?'' सब एक साथ बोले।

''है यार, एक बहुत बड़ा कॉलेज, वहाँ से बड़े-बड़े दिमागवाले लोग निकले हैं।''

''दिमागवाले? क्या इंजीनियर, डॉक्टर हैं? क्या एटम बम, हवाई जहाज बनाए हैं। कौन हैं ये लोग?'' गार्ड ने पूछा।

''अरे नहीं! यह सबकुछ नहीं किया। वह तो लंबे-लंबे भाषण देते हैं। मीटिंग करते हैं। कहते हैं, हमें बोलने की आजादी चाहिए।''

''बोलने की आजादी तो हम सभी को है। बोल तो रहे हैं सब। देश के टुकड़े क्यों चाहते हैं ये?''

शहला का ड्राइवर पंजाब का था। वह भी वहीं बैठा था, बोला, ''सुना है, बड़े-बड़े लोग उनकी हिमायत कर रहे हैं। इस देश के टुकड़े करने हैं। एक बार का बँटवारा तो अभी तक उस पीढ़ी के लोग भूले नहीं हैं। मेरी नब्बे बरस की दादी लाहौर को याद करती रहती हैं। आज हम लोगों के पास सब है, पर उनके वे दिन तो वापस नहीं ला सकते, दादाजी को तो नहीं ला सकते, जो दंगों में मारे गए।'' बोलते-बोलते उसका गला भर्रा आया।

''यह सब अखबारवालों की बदमाशी है। अच्छी खबर तो कभी छापेंगे नहीं। बस सरकार को परेशान करना। कितने अच्छे काम हो रहे हैं, कभी देते हैं खबर? क्योंकि वह चटपटी नहीं होती न। मैं पिछले हफ्ते जयपुर गया। नई दिल्ली का स्टेशन कितना साफ-सुथरा है। गाड़ी भी इतनी अच्छी, सारी सुविधाएँ।''

''हाँ-हाँ, हमने भी सुनी, गाड़ी में छोटी बच्ची को दूध भी मिला।'' रमिया की माँ बोली।

तभी धोबी बोला, ''अरे, हमारे भाई की सरकारी नौकरी का प्रोविडेंट फंड भी फटाफट मिल गया।''

''अच्छा, लेकिन यह टुकड़ों का क्या चक्कर है?'' सभी एक साथ बोले।

''गाँव-गाँव, शहर-शहर सब देश बन जाएँगे। अपनी सरकार होगी, अपना प्रधानमंत्री, अपनी समस्याएँ अपने आप सुलझाएँगे।''

''और दूसरी जगह जाएँगे तो कैसे जाएँगे?''

''वीजा लगेगा, पासपोर्ट बनेगा।''

''हैं यार, बिटिया बिहार में ब्याही है तो वहाँ कैसे जाएँगे। हमारे गाँव में तो बस धान होता है, गेहूँ का क्या करेंगे? कहाँ से मँगवाएँगे?''

''और पानी जो बॉम्बे में आता है, वह तो दूसरे गाँव से आता है, क्या होगा?''

सभी चिंतित स्वर में बोले।

''हाँ यार, कश्मीर जैसी बाढ़ आ गई तो कौन सी सेना जाएगी और कौन सी सरकार मदद करेगी?''

''न भैया न, हमें न चाहिए देश के टुकड़े। हमारा भारत देश ही हमारा सबकुछ है।''

सब समवेत स्वर में चिल्लाए, ''जय भारत, वंदे मातरम्।''

शहला का खानसामा भी चिल्लाया—''हिंदोस्तान जिंदाबाद!''

ई.-११५, सेक्टर-५२
नोएडा-२०१३०१
दूरभाष : ९९९९३९८०१०

हिंदी क्रियाओं का ढाँचा कालों या लकारों पर नहीं, रूप-रचना पर आधारित है

● बदरीनाथ कपूर

हिंदी क्रियाओं का रूप-रचना पर आधारित प्रस्तावित ढाँचा मानक हिंदी के प्राय: सभी संभाव्य क्रियारूपों को समेटे है, क्रमबद्ध है और नियमबद्ध भी। गुरु-युग में चूक यह हुई कि अंग्रेजी व्याकरण द्वारा जनित क्रियाओं के काल-आधारित ढाँचे को हम अपना आदर्श मान बैठे, परंतु उसी के अनुरूप अपना ढाँचा खड़ा न कर सके और आज दिन तक उसी लँगड़े-लूले ढाँचे को थोड़े-बहुत परिवर्तनों के साथ घसीटे चल रहे हैं।

चूक का वास्तविक कारण संभवत: यह रहा कि हमने अनुकरण का शॉर्टकट रास्ता अपनाया और हिंदी भाषा की प्रकृति के अनुसंधान के जिस रास्ते पर आगे बढ़ना चाहिए था, उस ओर उन्मुख न हुए। यही चूक वाजपेयी-युग में पुन: दुहराई गई। वहाँ भी हम व्याकरण के मुख्य पारिभाषिक शब्दों की परिभाषाएँ अनुसंधान पर आधारित करने के बजाय संस्कृत व्याकरण की उँगली पकड़े रहने का दम भर भरते रहे। हमें अपनी भाषा की प्रकृति का निरंतर अनुसंधान करते रहना चाहिए, तभी हमारा सामूहिक प्रयास एक दिन रंग लाएगा। महान् वैयाकरणद्वय पं. कामताप्रसाद गुरु तथा आचार्य किशोरीदास वाजपेयी की अनेक उपलब्धियाँ अप्रतिम और श्लाघ्य हैं, जिनके लिए वे प्रणम्य हैं। न चाहते हुए भी उनकी एक-एक ऐसी चूक का उल्लेख करना मैंने आवश्यक समझा, जिन्हें ढक-तोपकर रखने से हमारा पथ प्रशस्त नहीं हो सकता। मुझे अपराध-बोध है। क्षमा-प्रार्थी हूँ।

कुछ वर्षों से मुझे ऐसी प्रतीति होने लगी थी कि 'कर्ता-कर्म-क्रिया' की त्रयी का 'क्रिया' ऐसा विशिष्ट और महत्त्वपूर्ण घटक है, जिसके बल पर वाक्य का ढाँचा खड़ा किया जा सकता है। इस दृष्टि से निरंतर क्रियाओं के अध्ययन, विश्लेषण तथा वर्गीकरण का कार्य आगे बढ़ा रहा था। दूसरे यह कि मेरे कुछ विदेशी मित्रों की पुरानी आपत्ति थी कि हिंदी की क्रियाओं के अगणित रूप होते हैं, विभिन्न क्रियाओं के साथ उनके अगणित संयुक्त रूप बनते हैं और इन सबके भी अगणित विकारी रूप होते हैं कि स्थिति स्पष्ट न होने से विद्यार्थी घबरा जाते हैं। अत: इन विदेशी मित्रों की घबराहट दूर करने के लिए स्वस्थ उपायों की ढूँढ़-खोज भी आवश्यक थी। हर भाषा का अपना विशिष्ट स्वरूप तथा अपनी विशिष्ट सुनियोजित अंतर्व्यवस्था होती है, जिसका उद्‌घाटन तथा क्रमिक निरूपण करना वैयाकरण का दायित्व माना जाता है।

जाने-माने कोशकार। बेसिक हिंदी, हिंदी पर्यायों का भाषागत अध्ययन, वैज्ञानिक परिभाषा कोश, आजकल की हिंदी, अंग्रेज़ी-हिंदी पर्यायवाची कोश, शब्द-परिवार कोश, परिष्कृत हिंदी व्याकरण, सहज हिंदी व्याकरण, मीनाक्षी हिंदी-अंग्रेज़ी कोश, मीनाक्षी अंग्रेज़ी-हिंदी कोश, नूतन पर्यायवाची कोश, लिपि वर्तनी और भाषा, हिंदी व्याकरण की सरल पद्धति, आधुनिक हिंदी प्रयोग कोश, बृहत् अंग्रेज़ी-हिंदी कोश, व्यावहारिक अंग्रेज़ी-हिंदी कोश, मुहावरा तथा लोकोक्ति कोश, व्याकरण-मंजूषा, हिंदी प्रयोग कोश आदि। डॉ. कपूर की अनेक पुस्तकें उत्तर प्रदेश शासन द्वारा पुरस्कृत हैं। 'श्री अन्नपूर्णानंद वर्मा अलंकरण', 'सौहार्द सम्मान', 'काशी रत्न', 'विद्या भूषण सम्मान' एवं अन्य सम्मान।

क्रियाओं का ढाँचा खड़ा करने के मार्ग में दो मुख्य बाधाएँ थीं। पहली यह कि क्रियाओं के जो या जो-जो वर्गीकरण हों, उनका आधार क्या हो। और दूसरी यह कि त्रयी के अन्य दो घटकों 'कर्ता और कर्म' का क्रियापद से नाता किस परिभाषा के आधार पर जोड़ा जाए, क्योंकि क्रियाओं का सारा खेल हमारी इसी त्रयी के पारस्परिक संबंधों से प्रभावित होता है। कर्ता और कर्म संबंधी पुरानी और नई परिभाषाओं में आकाश-पाताल का अंतर है। फिर किसी अनिश्चित या ढुलमुल परिभाषा के सहारे किसी अंतिम निष्कर्ष पर पहुँचा भी तो नहीं जा सकता था।

पहली बाधा को दूर करने में सहायक बना प्रसिद्ध विद्वान् वयोवृद्ध पं. काशीराम शर्मा का मार्गदर्शन। अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'हिंदी व्याकरण मीमांसा' में उन्होंने हिंदी के वैयाकरणों का मार्गदर्शन निम्नलिखित शब्दावली में किया है, ''व्याकरणों में भाषा के रूप-रचनात्मक ढाँचे का ही अध्ययन किया जाए, अर्थमूलक वर्गीकरण को स्थान न दिया जाए।''

पं. काशीराम शर्मा ने उक्त पुस्तक में इस तथ्य को भी उजागर किया है कि हिंदी के सभी व्याकरण अर्थमूलक वर्गीकरणों से ओत-प्रोत हैं। उन्होंने इन व्याकरणों को 'ग्रामर' पद्धति का अनुसरण करने के कारण 'ग्रामर' की संज्ञा भी दी है। 'व्याकरण' माना ही नहीं। और दो टूक शब्दों में यह भी कहा है, ''भाषा की शिक्षा में इन ग्रामरों की

उपयोगिता नगण्य है।''

सच्चाई सामने आई। आँखें खुलीं। हिंदी के आरंभिक व्याकरण यूरोपीय विद्वानों ने लिखे थे। इन व्याकरणों को लिखने में उन्होंने वही पद्धति अपनाई, जिसमें उनके अपने व्याकरण लिखे गए थे। लैटिन पद्धति के उन व्याकरणों में पदों का वर्गीकरण अर्थमूलक आधार पर ही हुआ था। बाद में जब हिंदी भाषाभाषी विद्वानों ने व्याकरण लिखे तो उन्होंने भी जाने-अनजाने पूर्वलिखित व्याकरणों को आधार बनाया। भारतीय प्राचीन पद्धति पदों का विवेचन तथा वर्गीकरण उनकी रूप-रचना के आधार पर ही करती थी। विश्वविख्यात 'अष्टाध्यायी' इसका ज्वलंत प्रमाण है।

आचार्य पं. काशीराम शर्मा के मत को सिर-माथे रखा। प्रस्तुत पुस्तक में क्रियापदों के सभी वर्गीकरण उनकी रूप-रचना पर ही आधारित हैं। एकपदीय और द्विपदीय क्रियापद, विकारी और अविकारी क्रियापद, कर्तृ-अनुगामी और कर्मादि-अनुगामी क्रियापद, कर्तृवाच्य और कर्मादिवाच्य क्रियापद आदि सभी वर्गीकरणों का आधार पूर्णत: उनकी रूप-रचना ही है। इस प्रकार एक समस्या का समाधान भी मिला, साथ ही इसके फलस्वरूप वर्णन-विवेचन में जिस तारतम्य तथा बोधगम्यता के दर्शन हुए, वे और भी महत्त्वपूर्ण हैं। इसके पूर्ण श्रेय के अधिकारी परम आदरणीय पं. काशीरामजी शर्मा ही हैं। उनके प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ। हिंदी के व्याकरण को पटरी पर लाने में उनका यह सुझाव अत्यंत महत्त्वपूर्ण समझा जाएगा। 'संरचना' के लिए 'रूप-रचना' पद भी उन्हीं की सूझ-बूझ है।

दूसरी बाधा थी पारिभाषिक शब्दों की परिभाषा की। 'कर्ता' और 'कर्म' की नई और पुरानी दो प्रकार की परिभाषाएँ उपलब्ध हैं। पुरानी का प्रतिनिधित्व 'हिंदी शब्दानुशासन' करता है और नई का 'नवशती हिंदी व्याकरण'। 'हिंदी शब्दानुशासन' में कर्ता की परिभाषा इस प्रकार दी गई है—

'क्रिया के करने न करने में जो स्वतंत्र हो। (स्वतंत्र कर्ता)

'कर्म' की परिभाषा तो 'हिंदी शब्दानुशासन' में नहीं दी गई, परंतु विवेचित विवरण से निम्नलिखित अंश उद्धृत कर सकते हैं—

'कर्ता के अनंतर कर्म ही महत्त्वपूर्ण कारक है, जिसका क्रिया से निकटतम संबंध है। क्रिया का फल भी उन दो कारकों पर ही पड़ता है, कभी कर्ता पर कभी कर्म पर।...अन्य किसी भी कारक पर कभी भी क्रिया का फल या परिणाम नहीं पड़ता।'

अब 'हिंदी शब्दानुशासन' में ही संकलित निम्नलिखित वाक्य को उद्धृत करते हैं—

रोटी बनती है।

'हिंदी शब्दानुशासन' की 'कर्ता' की परिभाषा के अनुसार 'रोटी' कर्ता नहीं हो सकती, क्योंकि वह बनने या न बनने में स्वतंत्र नहीं है। 'कर्म' भी नहीं हो सकती, क्योंकि 'बनना' क्रिया अकर्मक है। 'हिंदी शब्दानुशासन' का स्पष्ट अभिमत भी है, 'सकर्मक क्रियाओं में कर्म मिलेगा, अकर्मक क्रियाओं में कर्म होता ही नहीं।'

उक्त परिभाषाओं के अनुसार 'रोटी' न कर्ता ठहरी न कर्म। इसे कुछ तो बताना था। क्योंकि 'बनाना' क्रिया का कर्म है (राम रोटी बनाता है), इसलिए 'रोटी' को कर्म के रूप में कर्ता बताया। मँगनी की परिभाषा अपनाने पर एक तो दलील देनी पड़ी और दूसरे द्रविड़ प्राणायाम भी करना पड़ा।

अब 'नवशती हिंदी व्याकरण' में दी हुई परिभाषाओं का अवलोकन करें—

कर्ता : क्रियापद की मुख्य क्रिया से बना कर्तृवाचक कृदंत जिस पद को सूचित करे। 'कर्तृवाचक' का अर्थ ही है—कर्ता का वाचक।

[कर्तृवाचक कृदंत=मुख्य क्रिया की क्रियार्थक संज्ञा का तिर्यक् रूप+वाला (प्रत्यय); आनेवाला, जानेवाला, बननेवाला, बनानेवाला]

कर्म : क्रियापद की मुख्य क्रिया से बना कर्मवाचक कृदंत जिसे सूचित करे।

[कर्मवाचक कृदंत=सकर्मक मुख्य क्रिया के भूतकृदंत (आकृदंत) क्रियारूप+'जाना' क्रिया का कर्तृवाचक कृदंत+जानेवाला=खाया जानेवाला, पिया जानेवाला, बनाया जानेवाला]

'रोटी बनती है' में मुख्य क्रिया बनना (अकर्मक) है। 'बनना' क्रिया से कर्तृवाचक कृदंत बनेगा—बननेवाला। 'बननेवाला' या 'बननेवाली' किसे सूचित करता है, 'रोटी' को। 'रोटी' कर्ताकारक हुई। यदि वाक्य हो 'राम रोटी बनाता है' तो मुख्य क्रिया होगी 'बनाना' और इससे कर्तृवाचक कृदंत बनेगा 'बनानेवाला'। 'बनानेवाला' सूचित करता है 'राम' को। इस प्रकार 'राम' कर्ता हुआ। ध्यान रहे कि 'बनना' और 'बनाना' दो भिन्न क्रियाएँ हैं, जिनका अलग-अलग अस्तित्व है।

अब 'पढ़ना' सकर्मक क्रिया के कुछ उदाहरण लें—

राम पुस्तक पढ़ता है।

राम ने पुस्तक पढ़ी।

राम को पुस्तक पढ़नी है।

राम से पुस्तक पढ़ी जाती है।

'नवशती हिंदी व्याकरण' के अनुसार उक्त चारों वाक्यों में कर्तृवाचक कृदंत 'पढ़नेवाला' 'राम' को ही कर्ता के रूप में इंगित करता है, भले ही वह परसर्ग से रहित हो या पसर्ग से युक्त। 'कर्ता' तो कर्ता ही है, भले ही परसर्ग से युक्त रहे या न रहे। कर्मवाचक कृदंत 'पढ़ा जानेवाला' सभी वाक्यों में 'पुस्तक' कर्म को ही इंगित करता है। इसके विपरीत 'हिंदी शब्दानुशासन' में 'राम' को कर्ता (पहले तीन वाक्यों में) माना गया है, परंतु पुस्तक को कर्म मानने की जुगत नहीं बताई गई। 'हिंदी शब्दानुशासन' का अभिमत है 'पढ़ना सकर्मक क्रिया का फल कर्म (पुस्तक) पर नहीं पड़ता'।

उक्त चारों वाक्यों की मुख्य क्रिया है—पढ़ना (सकर्मक)। इससे कर्तृवाचक कृदंत बनेगा—पढ़नेवाला; और कर्मवाचक कृदंत बनेगा—पढ़ा जानेवाला। 'नवशती हिंदी व्याकरण' के अनुसार उक्त चारों वाक्यों में कर्तृवाचक कृदंत 'पढ़नेवाला' 'राम' को ही कर्ता के रूप में इंगित करता है, भले ही वह परसर्ग से रहित हो या पसर्ग से युक्त। 'कर्ता' तो कर्ता ही है, भले ही परसर्ग से युक्त रहे या न रहे। कर्मवाचक कृदंत 'पढ़ा जानेवाला' सभी वाक्यों में 'पुस्तक' कर्म को ही इंगित करता है। इसके विपरीत 'हिंदी शब्दानुशासन' में 'राम' को कर्ता (पहले तीन वाक्यों में) माना गया है, परंतु पुस्तक को कर्म मानने की जुगत नहीं बताई गई। 'हिंदी शब्दानुशासन' का अभिमत है 'पढ़ना सकर्मक क्रिया का फल कर्म (पुस्तक) पर नहीं पड़ता'। प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि जब कर्म पर क्रिया का फल ही नहीं पड़ता तो पुस्तक को किस आधार पर कर्म माना जाए। 'हिंदी शब्दानुशासन' इस संबंध में कुछ संतोषजनक उत्तर नहीं देता।

'हिंदी शब्दानुशासन' में निम्नलिखित दो वाक्यों पर विचार करते समय 'जाना' क्रिया को सकर्मक और 'काशी' तथा 'वृंदावन' संज्ञाओं को कर्म बतलाया गया है—

राम काशी गया।

लड़की वृंदावन गई।

उक्त दोनों वाक्यों में 'जाना' मुख्य क्रिया है। यह तो निश्चित है कि 'जाना' क्रिया का फल काशी या वृंदावन पर नहीं पड़ता, कर्ता 'राम' या 'लड़की' पर ही पड़ता है। तो इस प्रकार 'काशी' तथा 'वृंदावन' को 'हिंदी शब्दानुशासन' के अभिमत से कर्म मानने में भी कठिनाई है। परंतु 'हिंदी शब्दानुशासन' यह कहकर बच निकलता है कि आवश्यक नहीं कि कर्म पर क्रिया का प्रभाव पड़ेगा ही। फिर किस आधार पर वृंदावन या काशी को कर्म माना जाए, इस संबंध में 'हिंदी शब्दानुशासन' प्रभावी तर्क नहीं देता। 'नवशती हिंदी व्याकरण' के अनुसार कब, कहाँ, कैसे क्रियाविशेषणों द्वारा क्रिया से जो उत्तर मिलता है, उसे क्रियाविशेषण माना जाता है। अब यदि 'जाना' को थोड़ी देर के लिए सकर्मक मान भी लिया जाए तो उससे बननेवाला कर्मवाचक कृदंत 'गया जानेवाला' अथवा 'जाया जानेवाला' ऊटपटाँग बनेगा और वह न कर्म के रूप में 'काशी' को सूचित करेगा न 'वृंदावन' को ही। वास्तविकता तो यह है कि अकर्मक क्रिया से कर्मवाचक कृदंत बनने-बनाने का प्रश्न ही नहीं उठता। कर्मवाचक कृदंत जब भी बनेगा, सकर्मक क्रिया से ही बनेगा। इस प्रकार 'नवशती हिंदी व्याकरण' की दृष्टि में 'जाना' अकर्मक क्रिया है तथा 'काशी' और 'वृंदावन' कर्म नहीं हैं, बल्कि क्रियाविशेषण के रूप में प्रयुक्त संज्ञाएँ हैं।

'वाच्य' की परिभाषा को लेकर भी 'हिंदी शब्दानुशासन' और 'नवशती हिंदी व्याकरण' में गहरा मतभेद है। 'वाच्य' मूलत: संस्कृत व्याकरण का शब्द है और इसका शब्दार्थ है, 'जिसके संबंध में कुछ कहना हो या कहा जाए।' संस्कृत व्याकरण में 'वाच्य' को कथन-प्रकार से ही जोड़ा जाता है और इसके तीन भेद भी किए जाते हैं—कर्तृवाच्य, कर्मवाच्य और भाववाच्य। इनके संबंध में 'हिंदी शब्दानुशासन' अपना अभिमत इस प्रकार प्रकट करता है—

'जब कर्ता के अनुसार क्रिया रूप ग्रहण करती है तो कर्तृवाच्य कहलाती है, जब कर्म का अनुगमन करती है तो कर्मवाच्य। कभी-कभी क्रिया न कर्ता के अनुसार चलती है न कर्म के। स्वतंत्र पद्धति ग्रहण करती है तो उसे भाववाच्य कहते हैं।'

'किसी के संबंध में कहना' और 'किसी का अनुगमन करना' दो भिन्न-भिन्न संकल्पनाएँ हैं। 'हिंदी शब्दानुशासन' की परिभाषा यथार्थ पर आधारित ही नहीं। 'नवशती हिंदी व्याकरण' अवश्य मूल संकल्पना का ही पक्षधर है, क्योंकि यही यथार्थ और तर्कसंगत भी है। जब क्रिया कर्ता के संबंध में कहती है तो क्रिया के कथन का केंद्रबिंदु कर्ता होता है; जैसे राम जाता है, राम पुस्तक पढ़ता है, राम ने पुस्तक खरीदी, राम को पुस्तक खरीदनी थी आदि। आपको कर्ता (राम) का उल्लेख करना ही पड़ेगा तथा उसे ही आगे रखकर कुछ कहना होगा। एक बात यह भी देखने में आती है कि बिना कर्ता के कर्तृवाच्य के वाक्य अधूरे रहते हैं। जब सकर्मक क्रिया कर्ता का उल्लेख न करके मात्र कर्म के बारे में कहती है तो वह अपने को कर्म तक सीमित भी रखती है। अर्थात् वह या तो कर्ता की उपेक्षा करती है या फिर कर्ता को पदानवत अवस्था में करणकारक में 'के द्वारा' या 'से' परसर्ग के साथ रखती है; जैसे—आम खाया गया, पुस्तक खरीदी जाती, सड़कें बनाई जाएँगी, अपराधी को बुलाया गया, आतंकवादी को छोड़ दिया जाएगा, राम के द्वारा पुस्तक खरीदी गई, आदि। जब अकर्मक क्रिया भाव (क्रियार्थ) के बारे में कहती है तो वह भी या तो बिना कर्ता के वाक्य को पूर्णता प्रदान करती है अथवा कर्ता को पदानवत अवस्था में करणकारक में 'के द्वारा' या 'से' परसर्ग के साथ रखती है; जैसे—अब सोया जाए, यहीं बैठा जाए, राम से नहीं चला जाता।

यहाँ एक सावधानी अपेक्षित है। यदि 'से' परसर्ग से युक्त करणकारक में कोई नामपद पहले से कर्तृवाच्य वाक्यरचना में अवस्थित है तो कर्मवाच्य में भी वह करणकारक ही रहेगा। जैसा कि निम्नलिखित वाक्य में 'दर्जी से' करणकारक में है—

कर्तृवाच्य	**कर्मवाच्य**
राम ने दर्जी से कोट सिलाया।	कोट सिलाया गया। राम के द्वारा कोट सिलाया गया। राम के द्वारा दर्जी से कोट सिलाया गया।

वाच्य-संबंधी एक रोचक तथ्य भी है। 'हिंदी शब्दानुशासन' क्रिया के कर्म-अनुगामी होने के कारण निम्नलिखित क्रियापदों को कर्मवाच्य मानता है—

राम ने पुस्तक पढ़ी।

राम को पुस्तक खरीदनी होगी।

राम को पुस्तक खरीदनी चाहिए थी।

परंतु 'नवशती हिंदी व्याकरण' के मत से उक्त तीनों वाक्यों के

क्रियापद कर्तृवाच्य हैं, क्योंकि वे कर्ता 'राम' के विषय में कहते हैं। इन्हें कर्तृवाच्य मानने का एक प्रभावी कारण यह भी है कि जिस प्रकार कर्तृवाच्य के अन्य क्रियापदों को कर्मवाच्य में ढाला जाता है, वैसे ही इन्हें भी कर्मवाच्य में ढाला जाता है; जैसे—

कर्तृवाच्य	**कर्मवाच्य**
राम ने पुस्तक पढ़ी।	(राम से) पुस्तक पढ़ी गई।
राम को पुस्तक खरीदनी होगी।	(राम से) पुस्तक खरीदी जानी होगी।
राम को पुस्तक खरीदनी चाहिए थी।	(राम से) पुस्तक खरीदी जानी चाहिए थी।

वाच्य-संबंधी 'हिंदी शब्दानुशासन' की परिभाषा का निष्कर्ष हम इस प्रकार प्रस्तुत कर सकते हैं—यदि कर्ता बिना परसर्ग के हो तो क्रियापद कर्तृवाच्य, कर्ता यदि परसर्ग से युक्त हो और कर्म बिना परसर्ग के हो तो कर्मवाच्य और यदि कर्ता में परसर्ग हो तथा कर्म में भी परसर्ग हो अथवा कर्म न हो तो क्रिया भाववाच्य होगी। ध्यान से देखने पर प्रतीत होगा कि उक्त विवरण का वाच्य या कथन-प्रकार से दूर का भी संबंध नहीं। केवल परसर्गों का खेल यहाँ दिखाई देता है। 'नवशती हिंदी व्याकरण' के अनुसार यदि क्रिया कर्ता के संबंध में कहती है तो कर्तृवाच्य। फिर भले ही कर्ता में परसर्ग हो या न हो, उससे अंतर नहीं आता। 'राम पुस्तक पढ़ता है, राम ने पुस्तक पढ़ी, राम को पुस्तक पढ़नी चाहिए थी।' इन सभी वाक्यों में मुख्य क्रिया 'पढ़ना' है। कर्तृवाच्य कृदंत 'पढ़नेवाला' के अनुसार क्रिया उक्त वाक्यों में 'राम' के बारे में कहती है। इसलिए उक्त वाक्य कर्तृवाच्य हैं। यदि क्रिया कर्म के बारे में कहती है तो कर्मवाच्य। फिर भले ही कर्म परसर्ग से युक्त हो या न हो, उससे अंतर नहीं आता। पुस्तक पढ़ी जाती है, पुस्तक को पढ़ा जाता है, पुस्तक पढ़ी गई, पुस्तक को पढ़ा गया, पुस्तक पढ़ी जानी चाहिए थी, पुस्तक को पढ़ा जाना चाहिए था। इन चारों वाक्यों पर ध्यान दें। उक्त वाक्यों में कर्म में परसर्ग हो या न हो क्रिया कर्म को ही कहता है। सभी वाक्य कर्मवाच्य हैं। कर्मवाच्य कृदंत 'पढ़ा जानेवाला, कर्म पुस्तक' के संबंध में कहता है। बिना कर्ता के उक्त वाक्य अपने में पूर्ण है। भाववाच्य में अकर्मक क्रिया बिना कर्ता की सहायता लिये अपनी सामर्थ्य से वाक्य को पूर्णता प्रदान करती है या फिर उसे पदानवत अवस्था में करणकारक में रखती है।

अंतत: कर्ता, कर्म आदि की परिभाषाओं के लिए 'नवशती हिंदी व्याकरण' का सहारा लेना पड़ा। कारण स्पष्ट है कि 'नवशती हिंदी व्याकरण' की परिभाषाएँ पूर्णत: स्पष्ट तो हैं ही, अपवादहीन भी हैं।

अंतत: जो ढाँचा प्रस्तावित है, उसकी रूप-रेखा इस प्रकार है—प्रथम प्रकरण में क्रियापदों में प्रयुक्त होनेवाले संभवप्राय सभी क्रियारूपों की सूची तैयार की गई है, उनकी रचनाविधि का सिलसिलेवार ब्योरा दिया गया है, उनके एकपदीय और द्विपदीय विभेद किए गए हैं, उनमें होनेवाली विशिष्टताओं का उल्लेख किया गया है और उन्हें विशिष्ट क्रम से रखा गया है। इन्हीं को आधार बनाकर आधारभूत क्रियापदों की संख्या २८ भी निर्धारित की गई है। अगले प्रकरणों में जितने भी वर्गीकरण आपको देखने को मिलेंगे, उनका आधार यही आधारभूत क्रियापद बने हैं। दूसरे प्रकरण में इन आधारभूत क्रियापदों के विकारी और अविकारी भेद किए गए हैं तथा विकारी आधारभूत क्रियापदों के लिंग-वचन के आधार पर चार कोटियाँ बनाई गई हैं, जिनका तालमेल वाक्य के किसी विशिष्ट नामपद 'कर्ता या कर्म' से बैठाने की आवश्यकता होती है। क्रियापद वाक्य के जिस नामपद के लिंग-वचन का अनुगमन करता है, उसी का वह अनुगामी माना जाता है। अनुगमन करनेवाले को ही अनुगामी कहा जाता है। इसके अतिरिक्त ऐसी भी स्थिति या अवसर होता है, जब क्रियापद किसी नामपद के लिंग-वचन का अनुगमन नहीं करता। इन सब विषयों की पूरी जानकारी भी आपको मिलेगी।

दूसरे प्रकरण में इन आधारभूत क्रियापदों के विकारी और अविकारी भेद किए गए हैं तथा विकारी आधारभूत क्रियापदों के लिंग-वचन के आधार पर चार कोटियाँ बनाई गई हैं, जिनका तालमेल वाक्य के किसी विशिष्ट नामपद 'कर्ता या कर्म' से बैठाने की आवश्यकता होती है। क्रियापद वाक्य के जिस नामपद के लिंग-वचन का अनुगमन करता है, उसी का वह अनुगामी माना जाता है। अनुगमन करनेवाले को ही अनुगामी कहा जाता है।

तृतीय प्रकरण में संयुक्त क्रियाओं के क्रियापदों के विकारी और अविकारी क्रियारूपों की रूप-रचना विस्तार से वर्णित है। विभिन्न संयोज्य क्रियाओं से बनी संयुक्त क्रियाओं में होनेवाले विविध विकारों को तालिकाओं के द्वारा दरशाया गया है। संयुक्त क्रियापदों के कर्तृ-अनुगामी और कर्मादि-अनुगामी क्रियापदों का विभेद भी किया गया है। चतुर्थ अध्याय में बृहत् संयुक्त क्रियाओं की रूप-रचना तथा क्रियापदों के कर्तृ-अनुगामी और कर्मादि-अनुगामी विभेदों पर विचार-मंथन हुआ है। संयुक्त क्रियापदों और बृहत् संयुक्त क्रियापदों-संबंधी विकारों की विभिन्नता को भी लक्षित किया गया है। अंतिम प्रकरण में आधारभूत क्रियापदों और उनके विकारी क्रियापदों को कर्मवाच्य और भाववाच्य में ढालने की प्रक्रिया तथा नियमों का उल्लेख है और उनके कर्तृ-अनुगामी तथा कर्मादि-अनुगामी विभेदों का परिचय एवं विशिष्टताओं का भी उल्लेख है।

इस प्रकार क्रियापदों में क्रिया के जितने विकारी रूप मानक हिंदी में प्रयुक्त होते हैं, उन सबकी उपस्थिति से परिचित हुआ जा सकता है।

शब्दलोक, ४७ लाजपत नगर, वाराणसी-२
दूरभाष : ९३०५२८८३२१

राम झरोखे बैठ के

भ्रष्टाचार का सच और सदाचार की संभावना

● गोपाल चतुर्वेदी

जब शरदजी ने 'हम भ्रष्टन के भ्रष्ट हमारे' जैसी सारगर्भित भविष्यवाणी की थी तो अधिकांश ने उसे कमतर आँका। व्यंग्यकार की क्या बिसात कि वर्तमान से आगे बढ़कर भविष्य में झाँक सके? अब समय के साथ सिद्ध हो चुका है कि वे एक नए धर्म के विश्वव्यापी प्रादुर्भाव की ओर इंगित कर रहे थे। इसीलिए कोई सामान्य व्यक्ति भी गौर करे तो आसानी से समझ ले कि उनका संदर्भ ही धार्मिक है।

भ्रष्टाचार धर्म के भगवान् भी ऊपरवाले के समान अदृश्य हैं। भक्त जानते हैं कि वह है, पर उन्होंने उनके साक्षात् दर्शन नहीं किए हैं। वह उनके छुटभइए ही हैं, जो देवी-देवता के रूप में इधर-उधर मँडराते रहते हैं, भगवान् के खास होने के दावे के साथ। कभी-कभार उनकी धर-पकड़ भी हो जाती है। देवता ऐसी-वैसी हस्ती तो हैं नहीं। वे खास हैं, सिक्कों के स्वामी हैं। सच को झूठ और झूठ को सच बनानेवाले सब कानूनी सौदागर उनके साथ हैं। ज्यादातर कोर्ट-कचहरी से ऐसे उन्हें बरी करवाने में समर्थ हैं। नहीं तो कोर्ट-दर-कोर्ट अपील करने का विकल्प तो हमेशा उपलब्ध है।

हमारी न्यायिक प्रक्रिया की कई विशेषताएँ हैं। वह गुनहगार धन-कुबेरों का अंतिम शरण स्थल है। गरीबों की क्या मजाल कि उसके दरवाजे के अंदर झाँक भी सके। कभी भाषा उनके आड़े आती है, कभी पैसा। यह ऐसी लचीली है कि पीढ़ी-दर-पीढ़ी कोई इसे खींचता रहे तो यह खिंचने को प्रस्तुत है। शर्त सिर्फ इतनी है कि खींचनेवाला कोई नामी-गिरामी कानूनी हथकंडिया हो। हर देवता ने ऐसे उपयोगी कारीगर पाल रखे हैं। इनकी निष्ठा पैसे पर निर्भर है। यह कभी किसी देवता के साथ हैं, कभी उसके विरोधी के। भ्रष्टाचार के भगवान् का उसूलों में यकीन नहीं है। उनके भक्तों का कैसे हो?

सिद्धांत सिर्फ दिखावे की ऐसी सुविधा है, जो धनोपार्जन या सत्ता पाने में काम आती है। 'पर उपदेश कुशल बहुतेरे' की तर्ज पर सिद्धांत आपसी चर्चा, सार्वजनिक भाषण, निजी छवि का निर्माण आदि के साधन हैं, जीवन में अनुपालन के नहीं। जो इन पर अमल करते हैं, उन्हें सनकी या मूर्ख की पदवी से विभूषित किया जाता है। यह भी लुप्त होती प्रजाति है। कुछ दिनों बाद इनका किसी नवनिर्मित 'जू' की शोभा बनना तै है। लोग एक-दूसरे को ईमानदार की गाली देंगे। बच्चे आकर कभी इन्हें अचंभे से ताकेंगे, कभी इनकी ओर पिज्जा-बर्गर उछालेंगे, कभी पत्थर। यह भी किसी शेर के समान कभी सिद्धांत दहाड़ेंगे, कभी संत्रास में अपने बाल नोचेंगे। भ्रष्टाचार का असली प्रजातंत्र पधार चुका है। बहुसंख्यक भ्रष्टाचारियों के सामने चंद ईमानदारों का न संख्या बल है, न सुनाई देनेवाल स्वर है। यह एक सर्वविदित तथ्य है कि प्रजातंत्र गुणवत्ता से नहीं, गिनती से चलता है।

इक्कीसवीं सदी के इस नव अवतरित भ्रष्ट भगवान् की पुरातनपंथी प्रभु से समानता के साथ विरोधात्मक भी है। सच है कि दोनों पर आरोपित गुणों में से कितने हैं, कितने नहीं, यह कोई नहीं जानता है। कभी-कभी लगता है कि ऊपरवाले की न्यायप्रियता या भक्तप्रेम कहीं छलावा तो नहीं है? जब मानवीय अजायबघर में जाने योग्य कोई सुपात्र अपनी ईमानदारी के गुण गाता बताता है कि वह ऊपरवाले का आभारी है कि उसे रात में चैन से नींद आती है तो हमें शंका होती है। ऊपरवाला इसके साथ कैसा क्रूर मजाक कर रहा है? दुनिया-जहान इसकी मूर्खता पर मुसकराता है और यह उसी पर इतरा रहा है? यह अनभिज्ञ है कि जाँच एजेंसियों से लेकर वर्दीवाले तक इसे भ्रष्टाचार के आरोप में फँसाने पर आमादा हैं। तब यह अपने प्रभु के गुण गाता यों ही जेल सिधारेगा और इसे बचाने कोई नहीं आएगा। आज की दुनिया में दोस्त सफलता के होते हैं, नैतिकता के नहीं। भ्रष्ट को नींद नहीं आती है तो वह नींद की गोली खाकर खर्राटे भरता है। ईमानदार फँसा तो अकेला पड़कर अवसाद में डूबना ही उसकी नियति है।

भ्रष्टाचार आज का युगधर्म है। रक्षा-सौदों से लेकर सरकारी दफ्तर के हर छोटे-मोटे काम में लेनदेन है। जो इसमें जितना ज्यादा माहिर है, वह उतना ही बड़ा पूजापाठी। उसे धर्म का ऐसा रोग है कि मंदिर जाए बिना उसका दिन अधूरा है। उसका विश्वास है कि भ्रष्ट भगवान् के साथ वह पारंपरिक प्रभु को भी पटाकर रखने में सक्षम है। यों धार्मिक आस्था की छवि बनाने में हर्ज ही क्या है? लोग उसे पोंगा पंडित कहें तो कहें। असलियत के जानकारों को पता है कि उसकी आस्था केवल अपनी जेब भरने में है। यदि साकार होकर भगवान् भी उसके दफ्तर में प्रगट हों तो वह उनसे भी अपना निजी शुल्क वसूल ले। फिर उसी के छोटे हिस्से का प्रसाद चढ़ाकर पुण्य कमाए। हमें हार्दिक पीड़ा होती है, जब ऐसे नायाब नमूनों पर भ्रष्टाचार के शक की सुई आकर ठहरती है।

हर संभव प्रयास के पश्चात् भी इनकी नेकी और नीयत शंका के घेरे में है। जाँच एजेंसियों के मित्र भी अब उसके सगे नहीं हैं। उन्हें भी अपनी जान बचानी है। इससे जितना वसूलना था, वसूल लिया, अब इसे बलि का बकरा बनाना ही उचित है। उनके लिए शिकारों की क्या कमी है? यदि एक चढ़ा तो दस आएँगे। रेट भी बढ़ेगी। कहने को होगा कि इधर सरकार के तेवर कुछ तीखे हैं, किसी को बख्शना कठिन है। अपने पर आँच आने का खतरा है।

स्वाभाविक है कि ऐसी वारदातों से एक ओर पारंपरिक प्रभु पर संशय हो और दूसरी ओर भ्रष्टों के भगवान् पर। क्या दोनों अपने भक्तों की मदद को आने में असमर्थ हैं? या उन्हें ऐसे मामलों में पड़ने की फुरसत नहीं है? कहीं ऐसा तो नहीं है कि धरती के विधान के समान एक बार किसी ने सत्ता का सर्वोच्च पद पा लिया तो वह अपने समर्थकों को घास तक नहीं डालता है, क्या ऊपरवालों का भी यही नजरिया तो नहीं है? यदि उसने फँसने की बेवकूफी की तो भ्रष्टों के भगवान् क्यों उसके बचाव में अपना कीमती वक्त जाया करें? ऐसी भी छोटे-मोटे टुच्चे लोगों में उसने अपनी ऊर्जा लगाई तो उसके बड़े भक्तों का क्या होगा? वह अरबपतियों की सहायता करे कि ऐसे पकड़े जानेवाले लखपतियों की? इन कंबख्तों को तो इतनी अक्ल भी नहीं है कि न पकड़े जाने का पुख्ता इंतजाम रखें। सिर्फ मंदिर में जाने का ढोंग करना ही तो काफी नहीं है। कम-से-कम हर कुरसी के चढ़ावे का हक तो अंदर करते रहें। उसमें चूक होगी तो ऐसे दुष्परिणाम आने ही आने हैं।

फिर भी हमारी देसी एजेंसियों की बनावट में लिहाज और हमदर्दी है। जाँच न पूरी होने के ढेरों बहाने हैं। कभी विदेश जाना पड़ता है साक्ष्यों की पड़ताल करने, कभी वहाँ से पत्रोत्तर की प्रतीक्षा रहती है। कभी-कभार तो अपराधी से सहानुभूति और मुद्रा की ऐसी लाभदाई और मिली-जुली साँठ-गाँठ है कि पूर्व सूचना पाकर अपराधी विदेश तड़ी हो लेता है और सरकार टापती रह जाती है। प्रजातंत्र में एक और खतरा है। जनता के मूड का कोई भरोसा नहीं है। कोई नहीं कह सकता है कि जनमत का ऊँट किस करवट बैठे? कब कौन गिरहकट गृहमंत्री बन जाए। यदि किसी घोटाले में राजनेताओं की संलिप्तता की जरा सी भी गुंजाइश है तो जाँच में और समय लगने की संभावना बढ़ जाती है। बोफोर्स की जाँच इसका एक आदर्श उदाहरण है। इससे यह भी स्पष्ट है कि नेता एक-दूसरे के बारे में जनता को कितना भी बरगलाएँ, उनमें कहीं-न-कहीं पारस्परिक सौहार्द का अंश शेष है। कुरसी कब्जाना सबका इकलौता और समान उसूल है। इसके बाद एक-दूसरे के काम आने के तत्त्व अब भी बरकरार हैं।

हमारे पते पर इधर एक मुफ्त पुस्तक कोई छोड़ गया है। आचार्य रामपूजन भ्रष्टाचारी इसके लेखक हैं। पहले तो हमें लगा कि यह किसी राष्ट्रीय दल की चुनावी हरकत है। फिर हमें ध्यान आया कि स्वघोषित ईमानदारी के ठेकेदार 'आप' ने तो ऐसा नहीं किया है? व्यवहार में वह कैसे भी हों, पर ईमानदारी के जुबानी जमाखर्च में उनका जवाब नहीं है। कुछ पन्ने पलटकर हमें आभास हुआ कि आचार्यजी ने भ्रष्ट दर्शन का गहन प्रतिपादन किया है अपनी पुस्तक में। साथ ही इसमें वह सूत्र भी बताए गए हैं कि कैसे काले धन का प्रयोग किया जाए कि आयकर विभाग को उल्लू बनाया जा सके।

एक अन्य समानता भ्रष्टाचार के भगवान् की आराधना है। सर्वोच्च नेता वही है, जिसमें चुटकी बजाने पर पूँजीपति अरबों जुटाने को उपलब्ध हों। इतना बड़ा देश, चार-पाँच जिलों का संसदीय क्षेत्र, इस में चुनाव लड़ने का सोचना भी कोई हँसी-ठट्ठा है क्या? फिर नेता तो पूरे देश का चुनाव लड़वाता है। पार्टी फंड के नाम पर हर किस्म की उगाही क्षम्य है। समय के साथ इस पर भी सवाल उठने लगे हैं। धीरे-धीरे जनतंत्र परिपक्व हो रहा है। इन परिस्थितियों में जो करोड़ों फूँककर चुनाव जीतते हैं, उनके लिए उसका आठ-दस गुना कमाना एक स्वाभाविक महत्त्वाकांक्षा है। जनसेवा दिखावे के हाथी दाँत हैं, असली कमाने-खाने के हैं। हमें नहीं लगता कि घरबार बेचकर कोई गरीब यह रिस्क लेने को कभी भी तैयार होगा। कोई पागल ही खतरा उठाएगा कि जनसेवा की उत्कृष्ट आकांक्षा से प्रेरित होकर धनाभाव से चुनाव हारे और फिर दाने दाने को तरसे। इस में भी जरूर कुछ अपवाद होंगे और शायद उन्हीं के लिए शायर ने कहा है कि 'न खुदा ही मिला न विसाले सनम'!

हमारी सियासी हस्तियों में एक अन्य उल्लेखनीय गुण है। वह धन के विषय में रंगभेद नहीं करते हैं। गोरे रंग की राष्ट्रीय कमजोरी से उन्होंने स्वयं को बचाया है। उनका विश्वास परंपरा के साथ परिवर्तन में है। वह तो शादी-ब्याह में भी रंगभेद के कायल नहीं हैं। पर बेटे की जिद्द के आगे उन्हें घुटने टेकने पड़े हैं। घर में गोरी बहू लाने के हठ में उनकी साँवली पत्नी भी शामिल है। पैसे वसूलना उनका कतई निजी और व्यक्तिगत धंधा है। इसमें किसी और का हस्तक्षेप उन्हें बरदाश्त नहीं है। इसीलिए धन के विषय में वह कतई रंग-निरपेक्ष हैं, ठीक वैसे ही जैसे भारत विदेश नीति में रहा है। उसकी मान्यता है कि कालुओं के देश में वह काले रंग का पक्षधर है। इसी कारण उसे काले धन से कतई परहेज नहीं है, उल्टे वह निजी तौर पर इस का स्वागत करता है। दीगर है कि सार्वजनिक भाषणों में उसने हमेशा काले धन के विरुद्ध आवाज उठाई है। अपने सांसद साथियों से चर्चा में वह स्वीकार करता है कि काले धन की अर्थव्यवस्था और कर-चोरी में चुनावों का महती योगदान है। इसे रोकने का एक ही तरीका है कि सरकार प्रत्याशियों का चुनावी व्यय वहन करे। जाने भविष्य की कौन सरकार इतनी बुद्धिमान होगी?

हमारे पते पर इधर एक मुफ्त पुस्तक कोई छोड़ गया है। आचार्य रामपूजन भ्रष्टाचारी इसके लेखक हैं। पहले तो हमें लगा कि यह किसी राष्ट्रीय दल की चुनावी हरकत है। फिर हमें ध्यान आया कि स्वघोषित ईमानदारी के ठेकेदार 'आप' ने तो ऐसा नहीं किया है? व्यवहार में वह कैसे भी हों, पर ईमानदारी के जुबानी जमाखर्च में उनका जवाब नहीं है।

कुछ पन्ने पलटकर हमें आभास हुआ कि आचार्यजी ने भ्रष्ट दर्शन का गहन प्रतिपादन किया है अपनी पुस्तक में। साथ ही इसमें वह सूत्र भी बताए गए हैं कि कैसे काले धन का प्रयोग किया जाए कि आयकर विभाग को उल्लू बनाया जा सके। उनके अनुसार रेस्तराँ में कैश का भुगतान, फ्लैटों या जमीन के प्लॉट की खरीद-फरोख्त, खेती योग्य जमीन पर नुकसान दिखाना इसके सरल और लोकप्रिय साधन हैं। ऐसा नहीं है कि आयकर विभाग इन जुगतों से अनजान है, पर यह उसके नियमित चढ़ावे के प्रभावी साधन हैं। हमें संदेह होने लगा है कि इस पुस्तक का मुफ्त वितरण जरूर किसी ईमानदार व्यक्ति या दल का प्रयास है, भ्रष्टाचार मिटाने की दिशा में। कौन कहे, उन्होंने या उसने जहर से जहर मारने की उक्ति को गंभीरता से लेकर देश-हित में यह कदम उठाया हो?

'भ्रष्टाचार संहिता' में एक अन्य रोचक तथ्य भी है। आचार्य महोदय ने देश की वर्तमान एकता और अखंडता का श्रेय धर्म या संस्कृति को न देकर करप्शन को दिया है। पंचायत से लेकर पार्लियामेंट तक हर इलैक्शन में भ्रष्टाचार की भूमिका है। भारत का कोई सरकारी दफ्तर या कॉरपोरेशन इससे अछूता नहीं है। स्कूल से लेकर कॉलेज-यूनिवर्सिटी तक के इम्तहानों पर इसका सुखद प्रभाव है। हर जाँच एजेंसी या वर्दीधारी भ्रष्टाचार के सूरज की रोशनी में दमकते हैं। अभी तक करप्शन हर रक्षा सौदे या बड़ी खरीद का अभिन्न अंग रहा है।

हमें पूरी उम्मीद है कि यदि कोर्ट का सहयोग, जाँच एजेंसियों की सख्ती और सियासी इच्छाशक्ति की दृढता रही तो एक-न-एक दिन हालात बदलेंगे। यों हम पर लोग अति आशावादी होने की तोहमत लगाते हैं। हो सकता है कि सच भी हो। यह भी सच है कि 'दर्द का हद से गुजरना है दवा जाना।' अब पानी सिर से ऊपर जा चुका है। क्या पता, भ्रष्टाचारियों को सद्बुद्धि आ ही जाए और वे अपनी करतूतों से बाज आएँ। नहीं तो देश की जनता के सब्र का बाँध टूटेगा और वह उन्हें पाठ पढ़ाने को मजबूर हो जाएगी।

भ्रष्टाचार संहिता में वर्तमान कानून में बदलाव का भी उल्लेख है। भ्रष्टश्रेष्ठ का मत है कि मूल दोषी घूस देने की पहल करनेवाला दुष्ट इनसान है। क्या सबूत है कि लेनेवाले ने उसकी माँग की या टैंडर प्रक्रिया का खुद ही उल्लंघन किया है? क्या विदेशी फर्म को डराया-धमकाया गया है? वह तो उनकी प्रसन्न भाव से कमीशन देने की आदत है तो उन्होंने दे दिया और इन्होंने सहज भाव से ले लिया। भारत में तो परंपरा है। मेहमान आता है तो कुछ लेकर आता है। यह भी तो मेहमान है, मना कर इनका अपमान हमारी सांस्कृतिक विरासत के विरुद्ध है, कोई प्रबुद्ध राष्ट्र और परंपरा प्रेमी ऐसा क्यों करेगा?

किसी भले मानुस को लालच देकर फँसाना एक घिनौनी साजिश है, वह भी हमारे देवता तुल्य सियासी कर्णधारों को। होना तो यह चाहिए कि कानून में बदलाव हो, घूस देनेवाले को सजा दी जाए, लेनेवाले को नहीं, क्यों कि उस गरीब को लालच देकर इस गलत काम के लिए प्रेरित किया गया है, वरना वह तो एक जाना-माना खानदानी ईमानदार है!

९/५, राणा प्रताप मार्ग
लखनऊ-२२६००१

सुधी पाठकों से निवेदन

- जिन पाठकों की वार्षिक सदस्यता समाप्त हो रही है, कृपया वे सदस्यता का नवीनीकरण समय से करवा लें। साथ ही अपने मित्रों, संबंधियों को भी सदस्यता ग्रहण करने के लिए प्रेरित करने की कृपा करें।
- सदस्यता के नवीनीकरण अथवा पत्राचार के समय कृपया अपने सदस्यता क्रमांक का उल्लेख अवश्य करें।
- सदस्यता शुल्क यदि मनीऑर्डर द्वारा भेजें तो कृपया इसकी सूचना अलग से पत्र द्वारा अपनी सदस्यता संख्या का उल्लेख करते हुए दें।
- चैक अथवा बैंक-ड्राफ्ट साहित्य अमृत के नाम से भेजे जा सकते हैं।
- ऑन लाइन बैंकिंग के माध्यम से सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया के एकाउंट नं. १११०७३४३९३ अथवा CBIN ०२८०२९७ में साहित्य अमृत के नाम से शुल्क जमा कर फोन अथवा पत्र द्वारा सूचित अवश्य करें।
- पत्रिका न मिलने पर १५ से २० तारीख तक सूचित कर दें, ताकि वह अंक नए अंक के साथ भेजा जा सके।
- आपको अगर साहित्य अमृत का अंक प्राप्त न हो रहा हो तो कृपया अपने पोस्ट ऑफिस में पोस्टमैन या पोस्टमास्टर से लिखित निवेदन करें। ऐसा करने पर कई पाठकों को पत्रिका समय पर प्राप्त होने लगी है।
- सदस्यता संबंधी किसी भी शिकायत के लिए कृपया कार्यालय दिवस में २ से ५ बजे तक फोन नं. ०११-२३२५७५५५, २३२७६३१६ अथवा sahityaamrit@gmail.com पर इ-मेल करें।

पागल

मूल : **रघुनंदन**

अनुवाद : **लक्ष्मीनिवास झुनझुनवाला**

एक अज्ञात ग्राम का परित्यक्त मंदिर। मंदिर की प्राचीन पत्थर की दीवारों से वट वृक्ष की जड़ें निकलकर दीवारों में दरार उत्पन्न कर रही थीं। चिड़ियों व चमगादड़ों की विष्ठा की सड़न से लगता था कि वर्षों से मंदिर में पूजा आदि नहीं होती थी। शायद मंदिर के भगवान् उपासकों की समस्याओं का समाधान करने में असफल साबित हो गए थे। या मंदिर के स्वामी की देखभाल में कोई रुचि नहीं थी। या मंदिर की जायदाद लोगों ने हड़प ली थी, या ग्राम में किसी व्याधि के प्रकोप से लोगों ने ग्राम छोड़ दिया था तथा सदियों बाद ग्राम पुनः आबाद हुआ था। कुछ भी कारण हो, मंदिर धार्मिक प्रवृत्तियों के अनुकूल नहीं रह गया था।

औद्योगिक जगत् में रहकर भी सांस्कृतिक कार्यों में सक्रिय योगदान, अनेक सांस्कृतिक संस्थानों से जुड़े हुए हैं।

ग्रामवासियों ने अनेक नए मंदिर बना लिये थे, जहाँ श्रद्धावान उपासकों की भीड़ लगी रहती थी। वे अपने स्वनिर्मित भगवान् से कभी प्रार्थना, कभी शिकायत करते तथा कभी-कभी तो लड़ाई भी कर लेते, पर प्राचीन मंदिर को एकदम भूल गए थे। फिर भी इस परित्यक्त प्राचीन मंदिर में एक व्यक्ति रहता था तथा मंदिर की ही तरह वह भी गंदा, उलझे हुए बाल, बढ़ी हुई दाढ़ी, मानो कभी स्नान नहीं किया हो, फटे हुए चीथड़े पहने रहता था।

ग्राम का नवयुवक विनोद कहता कि मंदिर में घोंसला बनाकर रहनेवाली चिड़ियाँ तथा चमगादड़ कैसे इस गंदे आदमी को सहन करते थे। पर इस सबके बावजूद ग्रामवासियों की उसके साथ सहानुभूति अवश्य थी, क्योंकि रोज ही उसको खाने के लिए कुछ दे देते थे। कभी-कभी तो वह खा भी लेता था, पर अधिक बार वह भोजन छूता भी नहीं था। वह स्वयं से ही बात करता रहता तथा लोग उसे पागल समझते थे।

पर हममें से अधिकांश व शायद सभी यही तो हर समय करते रहते हैं। यदि हम शांत होकर अपना निरीक्षण करें तो पाएँगे कि हमारा मन भी इसी प्रकार चारों ओर घूमता रहता है। यहाँ मानो एक पूर्वाभ्यास (रिहर्सल) कक्ष है, जहाँ हम अपने मित्रों व शत्रुओं के साथ वार्त्तालाप का अभिनय करते रहते हैं। एक रूपरेखा व योजना कक्ष है। एक सपनों व कल्पनाओं का कक्ष है। वह अपने रूप-कपड़ों तथा अपनी नग्नता से भी अनभिज्ञ था।

कभी-कभी यह पागल रात्रि के तृतीय प्रहर में गाँव की सड़क पर घूमने निकल जाता तथा अपने गँवारू, पर मधुर स्वरों में विचित्र गीत गाता। स्त्रियाँ डरकर मकान के फाटक बंद कर लेतीं तथा माताएँ बच्चों को पागल की आवाज से डराकर दूध पिलाने का या कुछ खिलाने का या सुलाने का प्रयास करतीं।

यदि कभी वह दिन में गाँव में आ जाता तो लड़के तथा बालक निर्भय होकर उस पर पत्थर फेंकते। शायद इस कारण कि उसके विचारों और भावनाओं के खुलेपन, बालकवत् व्यवहार व सत्यता को हम सहन नहीं कर पाते। यदि कोई हमें हमारी सीमाओं की सत्यता बताता है तो हमारा क्रोध उग्रतर हो उठता है। शायद यह पागल हमें सहनशीलता की शिक्षा स्वयं के व्यवहार व कार्यों से देता है।

अत्यधिक आश्चर्य तो इस बात का था कि कोई नहीं समझता कि वह क्या बोल रहा है, क्या गा रहा है, क्यों इधर-उधर घूम रहा है, पर जो उसे गहराई से देखता तो उसके चेहरे पर एक अलौकिक प्रसन्नता, जो साधारणतया: देखने में नहीं आती, प्रकट होती थी। उस पर फेंकी जाती हुई ईंटें मानो उसे फूल लगते थे। पर समाज भावनाओं की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता नहीं देना चाहता कि जनता सारी सीमाएँ तोड़ देगी। शायद इसी कारण ब्राह्मणों व राजाओं ने आपसी साँठ-गाँठ कर उपहार व दंड, स्वर्ग व नरक की कथाएँ जनता में एक तरह का भय उत्पन्न करने के लिए रच दी हैं।

एक बच्चे के मन में माँ से उसे सुलाने के लिए पागल की कथाएँ सुनकर उस पागल के पास जाने की इच्छा जाग्रत् हो गई। बहुत से बच्चों की यह इच्छा थी, पर विष्णु शर्मा को उस पागल के प्रति कुछ विशेष आकर्षण था। विष्णु के पिता का खेत उस मंदिर के पास ही था तथा जब भी वह खेत पर जाता तो इस पागल को वह देखता। विष्णु को उसके पिता ने पढ़ने के लिए कुंभकोनम के एक गुरुकुल में भेज दिया। गाँव के कुछ प्रबुद्ध लोगों ने विष्णु की प्रतिभा से प्रभावित होकर उसके पिता को दक्षिण की काशी में पढ़ने के लिए भेजने के लिए हठ सा ही किया।

करीब दस साल बाद उसका संपर्क एक अत्यंत विद्वान् मणि कांचन अय्यर से हुआ, उसकी अद्‌भुत प्रज्ञा थी तथा विष्णु को उसके सामने जाने पर एक अलौकिक सा अनुभव होता था। इतने वर्षों में विष्णु ने शास्त्रों का बौद्धिक अध्ययन तो गंभीरता से अवश्य किया था, पर उसे कभी अनुभूति नहीं हुई थी। पर इस सुव्यक्ति के निकट आने पर उसे एक अनुभूति होती थी, जैसे कोई व्यक्ति अंधकार में मार्ग ढूँढ़ रहा हो और आकाश में बिजली की चमक के प्रकाश से रास्ता मिल जाए।

जब विष्णु ने उनसे इसकी चर्चा की तो वह मुसकराया, कहा कि अपने गुरु के सामने मैं तो केवल धूल का एक कण हूँ। विष्णु की उत्सुकता गुरु के बारे में जानने की हुई। मणि अय्यर ने कहा कि आजकल वे कहाँ हैं, यह तो मैं नहीं जानता हूँ, पर गुरु के बारे में मैं बता सकता हूँ।

देशिकर की बुद्धि बड़ी कुशाग्र थी। दर्शन के सूक्ष्म सिद्धांतों को न केवल वह समझता था, पर बड़ी अच्छी तरह श्रोताओं को समझा भी सकता था। अपने शिक्षकों के लिए वह बहुत प्रतिभाशाली पड़ता था। वाद-विवाद में वह कठिन प्रतिद्वंद्वी तथा विद्वानों को उसमें ज्ञान का असीम सागर दीखता था। अत: विद्वत्गण उसे ईर्ष्या, घृणा तथा हेय भाव से देखने लगे थे।

बुद्धिमत्ता में उसका सामना न कर पाने पर उन्होंने धूर्तता का सहारा लिया। इन लोगों ने ब्रह्मसूत्र पर एक सभा का आयोजन किया। संयोगवश मणि भी इस सभा में गया। देशिकर की यह अंतिम सभा थी। क्योंकि देशिकर को अब पूर्ण विश्वास हो गया कि इन बौद्धिक आयोजनों से व्यक्ति अंतर की गहराइयों में नहीं पहुँच सकता, वह सभा छोड़कर चला गया। अन्य विद्वानों ने उसके जाने पर बड़ी प्रसन्नता का अनुभव किया। मणि देशिकर की अद्वितीयता से, उसकी सहृदयता से तथा उसकी परतत्त्व की खोज की तीव्रता से अत्यंत प्रभावित हो गया था। वह भी सभा छोड़कर देशिकर के पीछे-पीछे चलने लगा। देशिकर शहर से कावेरी नदी की ओर जा रहा था।

एक छायादार वृक्ष के नीचे देशिकर बैठ गया तथा आँखें बंद कर लीं। मणि भी उससे कुछ दूरी पर बैठ उसे देखता रहा। दो घंटे बाद देशिकर ने आँखें खोलीं। उसका ध्यान मणि की ओर गया तथा उसने पूछा कि क्यों वह उसके पीछे आ रहा है। मणि ने जबाव दिया कि उसे लगता है कि उसके प्रश्नों का समाधान देशिकर कर सकते हैं। देशिकर ने मुसकराकर कहा कि प्रश्नों के उत्तर व्यक्ति को स्वयं खोजने पड़ते हैं। दूसरे उसका उत्तर नहीं दे पाएँगे। उसने कहा कि ये बौद्धिक अध्ययन, चर्चाएँ, सभाएँ, संगोष्ठियाँ आदि समाधान नहीं कर सकतीं।

देशिकर खड़ा हो गया। मणि ने आदरपूर्वक चरणस्पर्श किए। देशिकर ने उसके सिर पर हाथ रखकर उसे आशीर्वाद दिया। मणि को एक रहस्यमयी झलक सी दिखाई दी तथा उस प्रकाश में वह चेतनाशून्य हो गया। कुछ देर बाद जब उसकी चेतना लौटी तो देशिकर जा चुका था। मणि ने अत्यंत उदास हो कहा कि उस महापुरुष से उसका यह अंतिम साक्षात्कार था। मणि अब सारे बौद्धिक कार्य छोड़कर आध्यात्मिक खोज में लग गया। देशिकर की चर्चा तथा उसके स्पर्श से प्राप्त हुई झलक ने उसे अपनी वर्तमान स्थिति को समझने में सहायता मिली। जब विष्णु ने देशिकर के आकार-प्रकार, रंग-रूप के बारे में पूछा तो मणि ने जितना भी संभव था, उसे समझाया।

संस्कृत तो विष्णु ने काफी पढ़ ली थी। अब उसका आकर्षण मणि व देशिकर की तरह अनुभूति व सचेतन शून्यता का प्रयास करने के प्रति हो गया। दस साल बाद वह अपने गाँव लौटा। उसे व उसके सारे परिवार के लोगों, खासकर उसकी माँ को अत्यधिक प्रसन्नता हुई। रात को वे सब उसके चारों ओर बैठ गए तथा गुरुकुल, उसके शिक्षकवर्ग, उसके साथी विद्यार्थियों व कुंभकोनम और दुनिया भर के विषयों के बारे में पूछने लगे। विष्णु ने मणि के बारे में, अपने अनुभूति व चेतना की प्राप्ति के लिए आकर्षण के प्रयास के बारे में उन्हें कुछ नहीं बताया। पर उन्हें भरोसा दिलाया कि अब उसने इतना ज्ञान प्राप्त कर लिया है कि अपने पैरों पर खड़ा हो सके। जब उसके पिता ने पूछा कि क्या अब वह परिवार की जिम्मेवारी सँभाल सकता है, ताकि वे मुक्त हो सकें, तो विष्णु तुरंत तैयार हो गया। पिता ने अब वानप्रस्थ ले लिया तथा परिवार की जिम्मेवारी से अपने आपको मुक्त कर लिया।

परिवार के पास गाँव से थोड़े बाहर की ओर परिवार की खेती के लायक जमीन थी। विष्णु वहाँ जाने लगा। खेती पर लगे मजदूरों की निगरानी के लिए नहीं, एकांतवास के लिए। मंदिर के ध्वंसावशेष उसके खेत के पास ही थे। कुछ दिन बाद उसे अपने बचपन में देखे पागल की याद आई। उत्सुकतावश वह मंदिर में भीतर चला गया। जैसे ही उसने मंदिर में प्रवेश किया, उसे वही अनुभूति हुई, जो उसे मणि के सम्मुख हुई। पर यह उससे अधिक तीव्र थी। वह अपने को रोक नहीं पाया तथा पागल व्यक्ति को खोजने लगा। वह एक पत्थर के खंभे का सहारा ले आँगन में बैठा हुआ था। यद्यपि विष्णु अकेला था। उसे लगा, मानो वह दरबार में विराजमान सम्राट् के सम्मुख खड़ा है। विष्णु ने देखा कि उसकी आँखें बंद हैं तथा वह अपनी गँवारू शैली में मधुर स्वर में गा रहा था।

'इन्हें न कोई चिंता है, न कोई फिक्र है—दया, संयम व धैर्य के माधुर्य से आपूरित ऐसे व्यक्ति अत्यंत शुभ व शांतिदाता होते हैं।'

उसकी शुद्ध संस्कृत सुनकर विष्णु चकित हो गया कि एक पागल ने कैसे देवभाषा संस्कृत का पांडित्य प्राप्त कर लिया है। भाषा से कहीं अधिक मनस्थिति इतनी उदात्त थी कि सारा वातावरण मानो उसके पवित्र मुख से संस्कृत श्लोकों के गायन से उदात्त हो गया था। विष्णु इतना भावुक हो गया कि उसकी आँखों से अश्रुधारा प्रवाहित होने लगी। वह ईश्वरानुग्रह से प्रसन्न हो गया कि उसे एक ऐसे उदात्त पुरुष का साक्षात्कार हो गया।

सारा वातावरण एकदम शांत हो गया। मानो चमगादड़ और कबूतर भी वातावरण की शांति को भंग नहीं करना चाहते थे। कुछ समय बीत गया। विष्णु ने उस व्यक्ति की ओर देखा। वह आश्चर्यचकित हो गया कि उसे अपने अस्तित्व का भी मान नहीं था। विष्णु ने थोड़ी आवाज की, पर पागल पर कोई प्रतिक्रिया नहीं थी। विष्णु खड़ा हो गया। आदरपूर्वक साष्टांग प्रणाम कर मंदिर के बाहर निकल गया।

घर लौटकर विष्णु मंदिर व उस महान् व्यक्ति के बारे में ही सोचता रहा। उसके मस्तिष्क में इसके अलावा कोई विचार ही नहीं आ रहा था।

वह घर के बाहर आकर बैठ गया। मध्य रात्रि का समय था। भोजन के बाद काफी समय बीत चुका था। उसकी माँ भी विश्राम के लिए अपने कक्ष में चली गई थी।

चंद्रकिरणों की अमृतमय वर्षा से सारे क्षेत्र में एक रहस्यमय वातावरण निर्मित हो गया था। कभी-कभी दूर से उल्लू की आवाज आती सुनाई पड़ रही थी। झींगुर मानो आपस में तथा इस सृष्टि से वार्त्तालाप कर रहे थे।

अचानक उसके मस्तिष्क में एक अनुभूति उत्पन्न हुई। जिस महापुरुष को हम पागल कहते हैं, वह तो मणि का गुरु देशिकर ही है। मणि ने जिस प्रकार का वर्णन किया था तथा जिस प्रकार की अनुभूति विष्णु को इस व्यक्ति के सम्मुख हुई, वह ठीक वैसी ही थी, जैसी मणि के सम्मुख हुई थी। अचानक वह अत्यंत उत्फुल्लित हो गया तथा मणि को सबकुछ बताने के लिए उत्सुक हो उठा।

अगले ही दिन प्रातःकाल वह कुंभकोनम के लिए रवाना हो गया। मणि सुनकर आश्चर्यचकित हो गया तथा दोनों ही गाँव के लिए रवाना हो गए। मंदिर पहुँचकर देखा कि जिसे हम पागल कहते आए हैं, अभी भी वह उसी भाव में है तथा उसे अपने अस्तित्व का कोई भान नहीं है। मणि ने उसकी चेतना को जाग्रत् करने का बहुत प्रयास किया। दोनों उसके शरीर की देखभाल करने लगे। पर उसे होश ही नहीं आ रहा था। उसके पवित्र मुख से आते हुए गीत को विष्णु व मणि ने लिखना प्रारंभ किया। उन्होंने देखा कि प्रत्येक 'कृति' में परमहंस शब्द आ रहा था। प्रत्येक कृति में गायक के गहन अनुभव की सुगंध थी। दोनों ही मित्र अत्यंत प्रभावित हुए। क्योंकि प्रत्येक कृति में उन्हें गहन धारणा व ध्यान प्रेरित करने की सामर्थ्य थी। अब लोगों को इस व्यक्ति को पागल समझने की अपनी मूर्खता का अनुभव हुआ। पागल वह नहीं, अन्य सब लोग थे।

मानवजाति विष्णु व मणि की अत्यंत कृतज्ञ है, जिन्होंने देशिकर से ये अमूल्य रत्न प्राप्त किए, जिसे भारत 'सदाशिव ब्रह्मेंद्र' के नाम से जानता है। भगवान् की बड़ी कृपा है कि ऐसे पागल का पृथ्वी पर अवतरण होता है।

भीलवाड़ा टावर्स, ए १२ सेक्टर-१
नोएडा-२०१३०१

लघुकथा

झाँसा

● अशोक गुजराती

एरे घर आती थी वह, बरतन-पोंछा करने। उम्र होगी यही कोई सोलह-सत्रह साल। सीधी-सादी, भोली-भाली। सुबह-सुबह आते ही मेरी पत्नी से बोली, 'मैंने उसे पैचान लिया था, आमिर खान थी वो···' एक तो उसकी बोली, जो हिंदी के स्त्रीलिंग को पुल्लिंग और पुल्लिंग को स्त्रीलिंग बना देती थी; दूसरे उसका देसी लहजा। पत्नी कुछ समझ नहीं पाई। पूछा उससे, 'क्या कह रही है तू?'

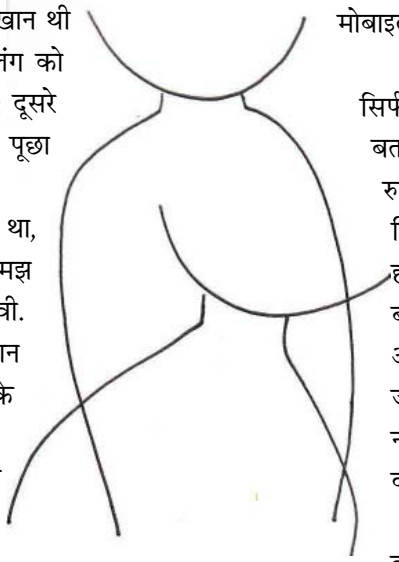

उसने ऐसी नजर से देखा, जिसका मतलब था, कैसे बुद्धू हैं आप पढ़े-लिखे लोग, शुद्ध हिंदी समझ नहीं पाते···फिर थम-थमकर कहा, 'वो रात में टी.वी. पर दिखाता है न आधा तसवीर, मैंने तड़ाक से जान लिया कि यह तो अपनी आमिर खान है···' पत्नी के ज्ञान-चक्षुओं ने फौरन उसका रहस्य ताड़ लिया।

रात में नौ बजे के करीब एक चैनल पर किसी जानी-मानी शख्सियत के चेहरे का कुछ भाग दिखाकर फोन नंबर दिए जाते हैं कि इस व्यक्ति से आप निश्चित ही परिचित हैं, बूझिए और फौरन फोन करके बताइए कि यह है कौन? कोई युवती सजी-धजी, थोड़ी-बहुत आकर्षक लगातार बोलती रहती है कि कम समय बचा है, यदि आप इस आधे-अधूरे फोटो को पहचान रहे हैं तो मोबाइल हाथ में उठाइए और हमारे नंबर पर बताइए तथा लाखों के इनाम जीतिए···आप उनको फोन करेंगे तो प्रतीक्षा करने को कहते रहेंगे। इसी बीच काफी देर बाद किसी का फोन उनके स्टूडियो में लगेगा, जो बेहिचक आमिर खान को सलमान खान बताने की जुर्रत करेगा। वही एंकर, खुली-खुली देह और लुभावनी सूरत को मटका-मटकाकर बताएगी कि यह जवाब गलत है और कोशिश कीजिए! आप उस फोन करनेवाले को बेवकूफ करार देकर सोचेंगे कि मुझे पक्का मालूम है कि यह कौन है और भिड़े रहेंगे। इस दरमियान आपके मोबाइल का मीटर चलता रहेगा।

महरी ने मेरी पत्नी को बताया कि उसके मोबाइल में सिर्फ बीस रुपए थे और वह अपने प्रिय नायक की पहचान बताकर एक लाख रुपए जीतने से वंचित रह गई···डेढ़ सौ रुपए होते तो यह हो जाता···मेरी पत्नी ने उसे समझाया कि जो बीच-बीच में गलत जवाब देते हैं, उन्हीं के लोग होते हैं···फोटो इतने सरल होते हैं कि कोई मूरख भी बता सकता है कि किसका है···ये दूर-संचार कंपनियों और इनकी मिलीभगत है, जबकि सरकार के कानों पर जूँ तक नहीं रेंगती, सारा पैसा लूटने का नाटक है, पता नहीं उस गरीब लड़की को कितना समझ में आया, क्योंकि वह अविश्वास भरी दृष्टि से देख रही थी।

और वही हुआ जिसकी आशंका थी। अगले दिन वह बिसूरते हुए आई कि···।

बी-४०, एफ-१, दिलशाद कॉलोनी, दिल्ली-११००९५
दूरभाष : ९९७१७४४१६४

कहानी

कर्ज का मूल्य

● राकेश भ्रमर

बाबू चंद्रभान ने अपने जीवन में अनजाने भी किसी प्राणी को कष्ट नहीं दिया था। जहाँ तक हो सका, सबकी मदद की। अपने घर के अभावों और आवश्यकताओं की चिंता न करते हुए भी दूसरों की आर्थिक रूप से मदद करते रहे। परिणामस्वरूप वे हमेशा आर्थिक तंगी में रहे। पत्नी से प्रतिदिन इसी बात को लेकर उनकी झड़प होती थी। बच्चे उनसे नाराज रहते थे। घर में लड़ाई-झगड़े से बचने के लिए वे अकसर कसम खाते थे कि अब किसी को पैसा नहीं देंगे, परंतु अगली बार जैसे ही कोई जरूरतमंद उनके सामने हाथ फैलाकर खड़ा हो जाता, वे बिना आगा-पीछा सोचे-समझे अपनी गाँठ ढीली कर देते।

चंद्रभान के अपने स्वभाव में कोई खोट नहीं थी, परंतु उनकी गलती यही थी कि वे हमेशा पैसा बिना किसी गारंटी, रेहन या कागजात के उधार देते थे और इसका परिणाम यह होता था कि कोई भी उनका पैसा वापस नहीं करता था। वे इतने सीधे थे कि आमना-सामना होने पर भी संकोचवश उससे पैसा नहीं माँग पाते थे। ऐसा लगता था, सामनेवाले ने नहीं, उन्होंने ही उससे पैसा उधार लिया हो। इस तरह उनका लाखों रुपया लोगों ने हड़प कर लिया और बिना डकार के गायब हो गए।

वे कोई अमीर व्यक्ति नहीं थे। बस एक सरकारी कार्यालय में तृतीय श्रेणी के कर्मचारी थे, परंतु स्वभाव सीधा और सरल था। दूसरों का कष्ट देख नहीं पाते थे। अपने खर्चों की परवाह किए बिना दूसरों को इस तरह पैसे दे देते थे, जैसे एक छोटे कर्मचारी के शरीर में धर्मपरायण हरिश्चंद्र, युधिष्ठिर या महाराजा हर्ष की आत्माएँ एक साथ प्रवेश कर गई हों।

अब वे नौकरी से रिटायर हो गए थे। ग्रेच्युटी, लीव इनकेशमेंट और पेंशन कम्यूटेशन से बस दसेक लाख रुपए मिले थे। यही उनकी जमापूँजी थी। उनके भविष्य निधि खाते में कुछ हजार रुपए ही थे। उसी से निकाल-निकालकर वे घर के बड़े खर्चे चलाते थे, वरना तनख्वाह तो लोगों को उधार देने में ही चली जाती थी। उनकी हिम्मत की दाद देनी पड़ेगी कि जो आदमी उनके कई हजार रुपए डकार लेता था, उसी को फिर से उधार दे देते थे। लोग उनके स्वभाव को पहचान गए थे, इसलिए कई बार तो लोग बिना जरूरत के भी उनसे पैसे माँग लेते थे और वे बिना किसी जाँच-पड़ताल के माँगनेवाले को पैसे दे देते थे।

रिटायरमेंट के पहले ही वे बेटे और बेटी की शादी के दायित्व से मुक्त हो चुके थे। बेटा दूसरे शहर में नौकरी कर रहा था और अपने परिवार के साथ खुश था। बेटी भी अपनी ससुराल में सुखी दांपत्य-जीवन व्यतीत कर रही थी, परंतु रिटायरमेंट के बाद जैसे ही पैसा उनके खाते में आया, बेटा और बेटी दोनों ही घर में आकर जम गए। उनसे माँग करने लगे कि सारा पैसा उनके नाम फिक्स्ड कर दें, वरना इसे भी वे किसी-न-किसी को उधार दे देंगे, और बुढ़ापे में एक कौर के लिए सबको तरसा देंगे।

सुपरिचित साहित्यकार। 'जंगल बबूलों के', 'हवाओं के शहर में'(गजल संग्रह), 'उस गली में' (उपन्यास), 'अब और नहीं' (कहानी-संग्रह)। 'प्राची' मासिक पत्रिका का संपादन। पत्र-पत्रिकाओं में सौ से अधिक रचनाएँ प्रकाशित। दूरदर्शन लखनऊ तथा आकाशवाणी रामपुर, जबलपुर और मुंबई से रचनाओं का प्रसारण। संप्रति केंद्र सरकार में अधिकारी।

उन्होंने बिना कुछ सोचे-समझे आधा-आधा पैसा बेटा और बेटी को बाँट दिया। हालाँकि पत्नी से इस बात को लेकर बहुत विवाद हुआ, परंतु अंत में जीत उनकी संतानों की हुई। दोनों अपने-अपने नाम की एफ.डी.आर. लेकर चले गए। घर में रह गए बाबू चंद्रभान और उनकी पत्नी। उनको केवल पेंशन का सहारा था।

बेटा अपने वेतन का एक पैसा भी माँ-बाप को नहीं देता था। बेटी तो पराए घर की हो ही चुकी थी।

सबकुछ बाँट देने के बाद निश्चिंत भाव से उन्होंने कहा, 'चलो, सारे झंझट से मुक्ति मिल गई। अब हम दोनों आराम से बुढ़ापा काटेंगे।'

'बुढ़ापा कैसे कटेगा? सारी जमापूँजी तो बेटे-बेटी में बाँट दी। अपने लिए कुछ जोड़कर नहीं रखा। हारी-बीमारी में क्या पैसा नहीं लगता। बुढ़ापा है, पता नहीं कब कौन सी बीमारी अचानक घेरकर आ जाए। आपकी समझ पर तो पत्थर पड़े हैं। लोगों ने लाखों रुपए लिये, वह आप वसूल नहीं कर पाए। रिटायरमेंट में जो पैसा मिला, वह भी बिना सोचे-समझे बेटे-बेटी को दे दिया। देख लेना, एक दिन हम एक बूँद पानी के तरसकर मर जाएँगे, मरते वक्त कोई हमारे मुँह में पानी की बूँद डालने नहीं आएगा।' पत्नी ने क्षोभ और दु:ख भरे स्वर में कहा।

चंद्रभान ने निर्विकार भाव से कहा, 'जो जिसका था, ले गया। हमारा होता तो हमारे पास रहता। फिर चिंता किस बात की? पेंशन तो हमारी है, उससे गुजारा चल जाएगा।'

'हाँ, बस दो रोटी का जुगाड़ है, परंतु क्या घर में राशन के अलावा और कुछ नहीं लगता?'

'सब हो जाएगा, तुम परेशान न हो।'

'क्यों परेशान न होऊँ? हाथ में पैसा नहीं है। पेंशन का पैसा तो आते ही खत्म हो जाता है। ऐसी कंगाली में जीने का क्या फायदा?'

चंद्रभान ने पत्नी से बहस करना उचित न समझा। उठकर बाहर पार्क में चले गए। वहाँ उनकी तरह कई रिटायर्ड व्यक्ति आकर बैठते थे। उनके साथ बैठकर गपशप मारते थे और रात घिरने के बाद घर आ जाते थे। सुबह भी उनकी यहीं दिनचर्या थी।

आदमी जब तक क्रियाशील रहता है, तब तक छोटे-मोटे दु:ख, कष्ट और परेशानियाँ वह आसानी से झेल लेता है। संयुक्त परिवार का प्रेम, स्नेह और एकता की भावना मनुष्य के अंदर अतिरिक्त ऊर्जा भरती है। चंद्रभान बाबू और उनकी पत्नी शुभा इस मामले में भाग्यशाली नहीं थे। न तो उनका संयुक्त परिवार था, न वे अब इतने क्रियाशील और सशक्त कि कष्ट, परेशानी और छोटे-मोटे दु:खों को आसानी से झेल लेते।

चंद्रभान बाबू सुबह-सुबह टहलने जाते थे। सौदा-सुलफ के लिए भी हाट-बाजार चले जाते। इस मायने में वे अधिक क्रियाशील थे और सर्दी-जुखाम को छोड़कर उन्हें कोई गंभीर बीमारी नहीं थी। वे दु:खों को लपेटकर नहीं रखते थे। बहुत ज्यादा लालसा उनके मन में नहीं थी। धन-दौलत की चाह जैसे उनके मन में थी ही नहीं। पत्नी का प्यार साथ था। बस बेटा और नाती-पोतों का प्यार-दुलार उनके जीवन में नहीं था, परंतु जो कुछ उनके पास नहीं था, उसके बारे में सोच-सोचकर चिंता और दु:ख को अपने हृदय में स्थान नहीं देते थे।

परंतु शुभा ऐसी नहीं थी। वह एक नारी थी—संवेदनशील, भावुक और नाते-रिश्तों को माननेवाली। घर में बहुत धन-संपत्ति नहीं थी, इसको लेकर भी वह बहुत परेशान रहती थी। अकसर चिंताग्रस्त रहती···अचानक किसी बड़ी बीमारी ने आ धरा, तो पैसा कहाँ से आएगा? कौन उन्हें अस्पताल में ले जाकर भरती करेगा? बेटे से उन्हें ऐसी कोई उम्मीद नहीं थी। वह पूरी तरह से अपनी पत्नी के वश में था और उसकी पत्नी सास-ससुर को फूटी आँख भी नहीं देखना चाहती थी। जबसे पति के साथ नए शहर में गई है, एक बार भी सास-ससुर से मिलने नहीं आई। एक बेटा हो गया, तब भी उसे लेकर नहीं आई। कितनी चिरौरी-विनती की बेटे, से न जाने कितनी बार कहा; परंतु वह भी पत्नी को नहीं मना पाया। उन्होंने जाने का मन बनाया तो बेटे ने मना कर दिया। कहा कि बहू उनका आना पसंद नहीं करेगी। जबकि पता चला है कि वह हर दो-तीन महीने में मायके जाती है और मायकेवाले तो उसी के घर में पड़े रहते हैं, जैसे उन्हें और कोई काम-धंधा ही न हो। इन्हीं सब बातों के बारे में सोच-सोच वे हरदम दु:खी रहती हैं और अपना रक्तचाप बढ़ाती रहती हैं। मधुमेह की बीमारी थी। उससे रक्तचाप और बढ़ गया था, परंतु बाहर जाकर टहलने का नाम न लेतीं। चंद्रभान बाबू कहते, तब भी नहीं जातीं। बस घर के कामों में व्यस्त रहतीं या ज्यादा-से-ज्यादा पड़ोसनों के साथ बैठकर घंटे-दो घंटे के लिए अपने दिल को बहला लेतीं।

शुभा जब अधिक बीमार रहने लगी तो चंद्रभान को थोड़ी चिंता हुई, परंतु उन्होंने घर के कामों में भी हाथ बँटाना आरंभ कर दिया। वे शुभा को ज्यादा-से-ज्यादा आराम देने की कोशिश करते।

इलाज चल ही रहा था। गनीमत यही थी कि उनके पास सी.जी.एच.एस. कार्ड था। दवाइयाँ मुफ्त में मिल जाती थीं, परंतु स्वास्थ्य मुफ्त में नहीं मिलता। एक दिन लेटे-लेटे शुभा ने कहा, ''आप सुबह से शाम तक घर-बाहर के काम करते रहते हो। मुझे देखकर दु:ख होता है कि मेरे रहते आपको कष्ट उठाना पड़ रहा है।''

''अरे पगली, घर के काम में कैसा कष्ट? जब तुम स्वस्थ थीं, मेरे लिए करती थीं। अब मैं फ्री हूँ तो तुम्हारे लिए कर रहा हूँ। कोई एहसान थोड़े कर रहा हूँ।''

''भगवान् क्या अच्छे आदमियों को ऐसे ही कष्ट देता है? आपने जिंदगी भर दूसरों की मदद की, आज हमारे बुढ़ापे में हमारी मदद करने के लिए भगवान् भी आते।''

चंद्रभान थोड़ा खुलकर हँसते हुए बोले, ''जब हमारे सगे बहू-बेटे हमारे बुढ़ापे का सहारा नहीं बने तो दूसरों से क्या उम्मीद की जा सकती है।''

''आप तो सिधाई में मारे गए। दूसरों को दिया पैसा भी नहीं वसूल पाए। बनिया-बक्कालों को देखो, कैसे सूद-दर-सूद लेकर मालामाल हो जाते हैं। आपका तो मूलधन भी डूब गया।''

''श्रीमतीजी, मैंने कोई सूद पर पैसा उठाने का धंधा थोड़े ही किया था। मैं तो जरूरतमंद लोगों की मदद करता था। अब उनकी नीयत में ही खोट था तो मैं क्या करता। भगवान् उनको बरकत दे।''

''आपको तो भगवान् भी नहीं सुधार सकता। आज हम कष्ट में हैं। पेंशन से गुजारा नहीं होता, तो कोई हमारी मदद के लिए क्यों नहीं

आता?'' शुभा ने चिढ़कर कहा।

''ऐसे कोई किसी की मदद नहीं करता है। जिनको जरूरत होती है, वह दूसरों के पास जाता है।''

''आप क्या दूसरों के पास जाओगे। अपना पैसा ही नहीं माँग पाते।''

''कैसे माँगने जाऊँ भागवान! उनके पास होते तो जरूर लौटा देते।''

शुभा ने हैरत से उनको देखा और फिर घृणा से कहा, ''बिना रोए तो माँ भी बच्चे को दूध नहीं पिलाती। आपने जिनको पैसा दिया, उनसे माँगोगे नहीं, कड़ाई नहीं करोगे तो क्यों वापस करने आएँगे? यहाँ तो लोग ताके बैठे रहते हैं कि पलक झपकते दूसरों की गठरी अपनी बगल में कर लें। आपने तो अपने हाथों ही अपने पैसों की गठरी दूसरों के हाथ में थमा दी और उम्मीद लगाए बैठे हो कि वह वापस करने आएगा। कभी-कभी बुद्धि और तर्क से काम ले लिया करो। अच्छा, कभी हिसाब लगाया कि आपने अपने जीवन में लोगों को कितना रुपया उधार दिया होगा?''

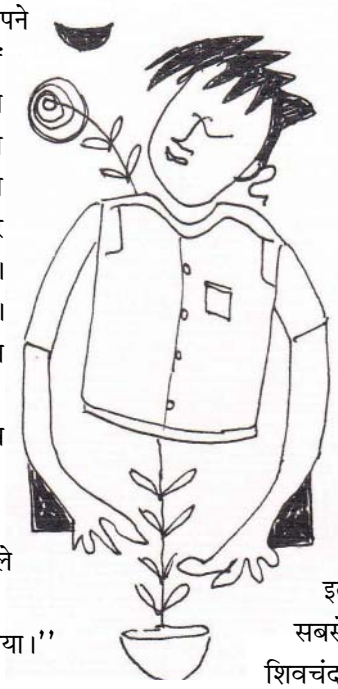

''कभी हिसाब नहीं लगाया, परंतु दो-ढाई लाख तो अवश्य होगा।''

''कभी किसी ने वापस भी किया?''

''हाँ, किसी-किसी ने किया, परंतु फिर अगले महीने ही कुछ बढ़ाकर माँग लिया।''

''यानी कि आपका उधार कभी वापस नहीं आया।''

''हाँ!''

''अब हम मुसीबत में हैं, किसी से माँगकर देखो, शायद कुछ वापस आ जाए।''

चंद्रभान सोच में डूब गए। शुभा ने कहा, ''ऐसे सोचने से काम नहीं चलेगा। कुछ करके दिखाओ। आप किसी के पास भीख माँगने नहीं जाओगे।''

''देखता हूँ,'' कहकर वे पत्नी के पास से टल गए। वे जानते थे कि किसी के पास पैसा माँगने नहीं जाएँगे और शुभा भी यह बात जानती थी। इसके बावजूद उनको उकसाती रहती थी, परंतु बासी कढ़ी में उबाल कहाँ से आता?

दिन किसी तरह बीत रहे थे। बेटा तो नहीं आता, परंतु बेटी कभी-कभार आकर उनके हाल-चाल पूछ जाती। उनका दु:ख कुछ हल्का हो जाता। उन दोनों की एकाकी दुनिया में खुशी के पल बहुत थोड़े थे, फिर भी उन्हें किसी से गिला-शिकवा नहीं था। न अपनों से न परायों से। जिनके मन में सांसारिक लालसाओं, कामनाओं और वासनाओं का वास नहीं होता, उनके जीवन में भौतिक खुशियाँ भले ही न हों, परंतु वह आत्मिक रूप से बहुत खुश और संतुष्ट होते हैं।

चंद्रभान पत्नी शुभा के साथ ड्राइंगरूम में बैठे टी.वी. देख रहे थे, तभी दरवाजे की घंटी बजी। दोनों ने चौंककर एक-दूसरे को संशय भरी निगाहों से देखा। आजकल उनके यहाँ लोगों का आना-जाना कम हो गया था। कभी-कभार कोई पड़ोसी आ जाता, वरना उनके जीवन में घर का एकांत ही था।

बिना कुछ बोले चंद्रभान उठकर दरवाजे की तरफ गए। दरवाजा खोला। बाहर एक सुदर्शन युवक हाथ में एक ब्रीफकेस लिये खड़ा था। चंद्रभान को देखते ही उसने झुककर उनके पैर छुए। वह हड़बड़ाकर एक कदम पीछे हट गए, ''अरे, यह क्या कर रहे हो?''

''वही जो मुझे करना चाहिए। आप जैसे आदर्श महापुरुष आजकल कहाँ मिलते हैं। यह मेरा सौभाग्य है कि आपके दर्शन सुलभ हो गए।''

''आप कौन हैं?'' उन्होंने अचंभित होकर पूछा।

''आप मुझे नहीं जानते। चलिए, अंदर चलकर मैं अपना परिचय देता हूँ।''

चंद्रभान बाबू बिना कुछ कहे अंदर आ गए। पीछे-पीछे युवक भी आ गया। सोफे पर बैठी शुभा को देखते ही उनकी तरफ लपका, ''अहा, माँजी!'' और फिर तच्छण उनके चरण स्पर्श किए। वह भी अचकचा गईं। वह उस युवक को पहली बार देख रही थीं। उनके मुँह से कोई शब्द नहीं निकला। बस आँखें चौड़ी करके पति को देखने लगीं।

युवक ने कहा, ''आप लोग चकित हो रहे हैं कि मैं इतनी आत्मीयता से आप लोगों से कैसे मिल रहा हूँ। तो मैं सबसे पहले आपका आश्चर्य दूर कर देता हूँ। बाबूजी, आप शिवचंद को तो जानते ही होंगे?''

चंद्रभान को तत्काल याद आ गया, ''हाँ, वह मेरे ऑफिस में चपरासी था···मैंने···'' फिर वे कहते-कहते रुक गए और एक पल के बाद पूछा, ''कैसा है वह? आप उसके कौन हैं? क्या··?''

''आपने सही समझा। मैं उनका बेटा हूँ। परंतु मुझे खेद है कि मेरे पिता अब इस दुनिया में नहीं हैं।'' युवक ने भावुक होकर कहा।

''ओह!'' चंद्रभान ने अफसोस प्रकट करते हुए कहा, ''यह कैसे हुआ? वह तो मुझसे छोटा था। मेरे रिटायरमेंट पर भी वह सर्विस में था।''

''हाँ, लेकिन उन्हें कैंसर हो गया। बहुत बाद में पता चला। छह महीने अस्पताल में जीवन-मृत्यु से संघर्ष करते रहे। अंतत: मृत्यु ने जीवन को हरा दिया।''

''ओह, यह तो बहुत बुरा हुआ।'' चंद्रभान ने कहा, शुभा के मुँह से भी च्च्च्च् निकल गया।

एक पल के लिए सन्नाटा पसरा रहा। फिर उस युवक ने कहा, ''मेरा नाम विश्वास है और मैं आपका कर्ज चुकाने आया हूँ।'' उसने ब्रीफकेस खोलने का उपक्रम किया।

युवक ने आगे कहा, ''आपको याद ही होगा। आज से दस साल

पहले आपने मेरे पिता को पचास हजार रुपए उधार दिए थे। ये रुपए मेरे बी.टेक. के एडमीशन के लिए पिताजी ने आपसे लिये थे। तब मुझे भी नहीं पता था कि मेरी पढ़ाई के लिए उन्होंने कहाँ-कहाँ से पैसे उधार या कर्ज पर लिये थे, उन्होंने कभी बताया नहीं। अपनी छोटी तनख्वाह से मेरी पढ़ाई का खर्चा निकालते रहे और कर्ज भी चुकता करते रहे। आपसे लिये पैसे के बारे में उन्होंने मृत्यु से कुछ दिन पूर्व बताया। उन्हें बहुत अफसोस था कि आप जैसे सज्जन पुरुष का कर्ज वे अपने जीवन काल में नहीं उतार सके। आज मैं वही कर्ज चुकाने आया हूँ, ताकि उनकी आत्मा को शांति मिल सके।'' वह भाव-विह्वल हो गया।

चंद्रभान और शुभा के मुँह से कोई शब्द नहीं निकला। वह केवल विस्फारित नेत्रों से विश्वास को देख रहे थे। विश्वास ने ब्रीफकेस खोलकर पचास हजार की गड्डी निकाली और चंद्रभान के हाथों में पकड़ाते हुए कहा, ''इसे आप स्वीकार करके मुझे कृतार्थ करें। मैं आपके कर्ज का मूल्य कभी नहीं चुका सकता। आपका कर्ज अमूल्य है। यह जीवन भर मेरे ऊपर चढ़ा रहेगा। सच तो यह है कि आपने मेरे पिता को कोई कर्ज नहीं दिया था, बल्कि जीवन दिया था, वरना वे अपनी छोटी तनख्वाह में न तो मुझे पढ़ा पाते, न अपने पैरों पर खड़ा कर पाते। आप द्वारा दिए गए पैसों को मैं कर्ज नहीं मानता, इसलिए इसका कोई ब्याज नहीं दे रहा हूँ। आपके उपकार का मैं प्रतिदान भी नहीं कर सकता, परंतु मैं आपका जीवन भर ऋणी रहूँगा।''

चंद्रभान की आँखों में आँसू थे। उनके हाथ काँप रहे थे। शुभा का हृदय भर आया था। यह एक ऐसा क्षण था, जब सभी के हृदय में भावों का सागर लहरा रहा था, परंतु किसी के मुँह से शब्द नहीं निकल रहे थे।

''मुझे एक अच्छी कंपनी में नौकरी मिल गई है। मेरी शादी भी हो गई है। मैं देख रहा हूँ, आप दोनों घर में अकेले हैं। पिताजी ने बताया था कि आपका एक बेटा और एक बेटी है। बेटा शायद कहीं बाहर नौकरी कर रहा होगा। बेटी ब्याहकर ससुराल चली गई होगी। आज हमारे घर के बुजुर्गों की यही नियति है। वह जीवन के अंत में अपनों से दूर हो जाते हैं और अपने सगे उनकी कोई परवाह नहीं करते। परंतु आप चिंता न करें। मैं अब इसी शहर में हूँ। हर हफ्ते आकर आपके हाल-चाल लेता रहूँगा।''

शुभा की हिचकी निकल गई, वह रोने लगी। विश्वास उनके पास आकर बोला, ''माँजी, आप परेशान और दु:खी न हों। मेरे रहते आप अकेली नहीं हैं। मैं आपका सगा बेटा नहीं हूँ, परंतु आप देखेंगी कि सगे बेटे से भी बढ़कर मैं आपकी सेवा करूँगा।'' वह भी भाव-विह्वल हो गया था।

इसके बाद सभी चुप हो गए। किसी के मुँह से कोई आवाज नहीं निकली।

चंद्रभान बस यही सोच रहे थे कि नेकी कभी बदी नहीं होती। मानवता और सज्जनता अभी भी संसार में जीवित हैं। शिवचंद और विश्वास जैसे लोग उसे जिंदा रखे हुए हैं।

ई-१५, प्रगति विहार हॉस्टल,
लोधी रोड, नई दिल्ली-११०००३
दूरभाष : ९९६८०२०९३०

कविता

सौगात

● बी.डी. बजाज

जब भी जाता हूँ अपने इस बगीचे में
अनायास ही स्थित हो जाती नजर
इक प्यारे से गमले को देखकर
जिसमें खिले हैं बेगनबेलिया के फूल
निशानी मेरे मित्र की
विदेश जाने से पहले की सौगात
जिसमें छिपे हैं उसके प्रिय जज्बात
इस प्यारी भेंट का मूल्यांकन
जब करता हूँ यदाकदा
तो कम पड़ जाती सारी दुनिया की संपदा
एक अदना सा पौधा और खिलते हुए फूल
निहारता हुआ मैं संसार से बेखबर,
दूर बैठा वह दोस्त आ जाता आँखों के सामने
हम बतियाने लगते
उन्मुक्त हँसी के दौर, तनाव रहित जीवन
सपने सुहाने
सफर में बीते हुए सुनहरी पल
याद आ जाता मुझे बीता हुआ कल
खुल जाती मुट्ठी जिसमें बंद है,
स्मृतियों का इतिहास
अतीत के चलचित्र
घूम जाते मेरे अंतर्मन में
खो जाता मैं इस आलोकित आनंद में,
मिल जाता जीने का अर्थ इस नगीने में
जब भी जाता हूँ अपने इस बगीचे में।

ए-८३, गुजराँवाला टाउन
देहली-११०००९
दूरभाष : ९८९९२७३०३०

व्यंग्य

राष्ट्रीय भ्रष्टाचार विश्वविद्यालय

● मनोहर पुरी

कनछेदी को गहरे लाल रंग का गाउन और सिर पर 'हुड' धारण किए हुए देखकर मैं चौंका। तेजी से मिल्खा सिंह की भाँति भागते हुए मैंने उसे धर दबोचा। मैंने पूछा, ''इस तरह भागते हुए कहाँ जा रहे हो और ये सर्कस के जोकर सरीखे कपड़े पहनकर राजभवन में कैसे घुस पा रहे हो? किसी ने देख लिया तो तुम्हें पकड़कर पिंजरे में बंद कर देगा और किसी सर्कस वाले के हवाले कर देगा।''

''क्या भाई साहब, आप भी हमेशा मेरी टाँग खींचते रहते हैं। माना मैं अनपढ़ हूँ, परंतु आप तो पढ़े-लिखे हैं। विश्वविद्यालय से ऊँची-ऊँची उपाधियाँ मिली हैं आपको। फिर आप इस ड्रेस से अनजान तो नहीं हो सकते। जब आपको 'पढ़ाई का डॉक्टर' बनाया गया था, तब भी तो आपने ऐसे ही कपड़े मुझ से प्रेस करवाए थे। आज इन्हें जोकराना पहनावा कह रहे हैं।'' कनछेदी ने सड़े हुए करेले सा मुँह बनाते हुए मुझे घूरा।

''अरे नहीं, मैं तो यों ही पूछ रहा था। कहाँ जा रहे हो इतना बन-ठन के?'' मैंने कनछेदी का क्रोध शांत करने के लिए अपने स्वर में नेताओं सी मिठास भरते हुए कहा।

''जा कहाँ रहा हूँ। यह राज भवन है तो इसमें महामहिम से मिलने के लिए ही तो जाऊँगा न। किसी घसियारे से तो नहीं।'' कनछेदी अभी भी नाराज था।

''अच्छा-अच्छा! महामहिम से कोई उपाधि लेने जा रहे हो। आज-कल डी.लिट्. की उपाधियाँ ऐसे ही घर बुलाकर दी जा रही हैं शायद।'' मैंने कहा।

''मैं उपाधि लेने नहीं बल्कि ऐसी जुगाड़ बिठाने जा रहा हूँ कि आप जैसों को डी.लिट् की डिग्री बाँटता फिरूँ।'' कनछेदी भुनभुनाया।

''यह तुम्हारे हाथ में कागजों का पुलंदा कैसा है?'' मैंने बात का रुख बदलने की गर्ज से कहा, ''तुम तो पढ़े-लिखे हो नहीं, फिर इन कागजों का क्या करोगे?''

''ये आपको कागज दिख रहे हैं। असल में आप को पूरी जानकारी तो होती नहीं, इसलिए ऐसी बहकी-बहकी बातें करते रहते हो।'' कनछेदी का मूड कुछ ठीक होने लगा था।

''ऐसा क्या हो गया कनछेदी, जो मेरी जानकारी में नहीं आया अथवा जिसके बारे में तुमने मुझे कुछ नहीं बताया?'' मैंने सहज होते हुए पूछा।

सुपरिचित साहित्यकार। उपन्यास, व्यंग्य-संग्रह, कहानी-संग्रह, कविता-संग्रह, लघु-काव्य के अलावा समीक्षात्मक ग्रंथ एवं अनेक पुस्तकें (हिंदी-अंग्रेजी) प्रकाशित। विगत चार दशकों से पत्रकारिता के क्षेत्र में सक्रिय। 'पत्रकार रत्न सम्मान', 'बहुमुखी प्रतिभा रत्न' सहित कई अन्य सम्मान।

''अच्छा, जानते हो, आज कल देश के जंगल में कुकुरमुत्तों की तरह से विश्वविद्यालय पैदा हो रहे हैं।'' कनछेदी ने मेरी जानकारी बढ़ाने के अंदाज में कहा।

''हाँ जानता हूँ, परंतु तुम्हारा विश्वविद्यालय जैसी भैंस से क्या लेना-देना। तुम जानते हो कि भैंस बीन नहीं सुनती और तुम्हें बीन के अलावा और कुछ बजाना आता नहीं है।'' मैंने चुहल करते हुए कहा।

''यदि आप दुधारू होने के कारण विश्वविद्यालय को भैंस कह रहे हो तो ठीक है। मैं भैंस के आगे बीन बजाने नहीं जा रहा बल्कि उसका दूध दोहने जा रहा हूँ। जानते हो, अब मैं राष्ट्रीय भ्रष्टाचार विश्वविद्यालय का स्वामी, संचालक और कुलपति हूँ—थ्री इन वन। महामहिम से इस विश्वविद्यालय के नए पाठ्यक्रमों पर विचार विमर्श करने के लिए जा रहा हूँ।'' कनछेदी ने मेरे कानों में पोखरण जैसा विस्फोट करते हुए कहा।

फिर तुरंत ही अपने आपको उस झटके से सँभालते हुए मैंने कहा, ''कनछेदी, यह तो तुमने बहुत अच्छा काम किया है, जो पूरा-का-पूरा विश्वविद्यालय अपने नाम किया है। राम कसम इस काम में राजनीतिवाला तुम्हारा अनुभव बहुत काम आएगा।''

''अरे! मेरी उसी पृष्ठभूमि को देखते हुए ही तो मुझे यह विश्वविद्यालय राजधानी में स्थापित करने की मंजूरी मिली है। करोड़ों रुपए की भूमि एक रुपए की लीज पर झटकी है मैंने। आपकी तरह किताबें पढ़-पढ़कर झक नहीं मारी। पर जानते हो, इसके लिए मुझे कितने बड़े-बड़े नेताओं से सिफारिश करवानी पड़ी है। राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, मंत्री और संतरी, किसी को नहीं छोड़ा मैंने।''

''इसमें सिफारिश की क्या आवश्यकता थी। तुम्हारा विश्वविद्यालय तो भ्रष्टाचार पर केंद्रित है, उसी के बल पर अनुमति-पत्र प्राप्त कर

लिया होता।'' मैंने आश्चर्य व्यक्त करते हुए कहा।

''मुझे आपकी छोटी समझ पर तरस आ रहा है। अरे, जानते नहीं कि एक ही धंधेवाले एक-दूसरे से दाम नहीं लेते। लगता है, आपने वह भजन नहीं सुना कि नाई से न नाई ले, धोबी से न धोबी ले।''

''हाँ-हाँ, सुना है, तो तुम किसे भ्रष्टाचार की नदिया पार करवाकर भ्रष्टाचार का भवसागर पार करना चाह रहे हो। ''

''अपने तो राम-लखन यही सब नेता हैं, जिनका इस देश रूपी भवसागर पर राज है। इनके कहने पर तो हम झाड़ू भी लगा दें। नैया खेने की तो बात ही क्या है। आज यदि मैं उन्हें भ्रष्टाचार की गंगा-यमुना पार करवाऊँगा, तभी तो वे मेरी भी सुध लेंगे।''

''खैर, तुम कुछ पाठ्यक्रम की बात कर रहे थे। क्या फैकल्टी मेंबरों से विचार-विमर्श करके इसे बनाया है अथवा अपने मन से बना लाए हो। यह विश्वविद्यालय का पाठ्यक्रम है, राजनीति में चुनावी टिकटें बेचने का धंधा नहीं है।''

''क्या बात करते हैं। मैंने अपने विश्वविद्यालय में एक से एक अनुभवी और प्रवीण भ्रष्टाचारियों को भरती किया है। उन्हीं की बुद्धि का निचोड़ मेरे हाथ में है। कोई माई का लाल इन विषयों की उपयोगिता को चुनौती नहीं दे सकता। वर्तमान समय में ऐसे पाठ्यक्रम युवाओं के बहुत काम आने वाले हैं, यह समझ लो।''

''ऐसे विशारद कहाँ से ढूँढ़ लाए हो, कनछेदी? वैसे तो मैं जानता हूँ कि अपने देश में इनकी कोई कमी नहीं है।''

''ठीक कहा भाई साहब आपने। एक-एक पद के लिए कई-कई आवेदन आए थे। ऐसे-ऐसे प्रार्थी थे, जिनके सामने राजा, रानी, वडेरे, ठठेरे, गोनिया, मोनिया, रहेले, बंदेले, गप्पू-शप्पू, लूल्लू-मूल्लू, बिब्बल दिब्बल, गंजू-वंजू और अंबर-संबर सब पानी भरते हैं।'' कनछेदी ने अपनी छाती में राजभवन के आसपास की प्रदूषित वायु को भरते हुए कहा। फिर बोला,'' इतना ही नहीं, जितने भी नेता और अभिनेता जेल जा चुके हैं अथवा जितने जाने के लिए तैयारी कर रहे हैं, उन सबको अतिथि प्राध्यापक के रूप में समय-समय पर बुलाने की तैयारी भी कर ली है। आखिर उनके अनुभव का लाभ भी तो विद्यार्थियों को मिलना ही चाहिए।''

''फिर भी कनछेदी क्या यह अच्छा नहीं रहेगा कि इन पाठ्यक्रमों के बारे में एक बार मुझे भी बता दो, ताकि महामहिम के सामने तुम्हें लज्जित न होना पड़े। यदि मुझे समझ में आ गया तो मैं भी तुम्हारे साथ चलूँगा।'' मैंने पूरी जानकारी हासिल करने के लिए कनछेदी को सुझाव दिया।

''चाहता तो मैं भी यही था, परंतु आप मिले ही नहीं और राजभवन से बुलावा आ गया। अब तो यही हो सकता है कि आप भी साथ चलो और महामहिम के साथ-साथ सारी बात आप भी समझ लो।'' कनछेदी ने कहा, ''वैसे भी महामहिम अपने 'हम निवाला हम प्याला हैं', इसलिए झिझकने की कोई बात है नहीं।''

''ठीक है, तो चलो। और कुछ नहीं तो मेरे अखबार के लिए कोई समाचार ही मिल जाएगा और तुम्हारे विश्वविद्यालय का प्रचार भी हो जाएगा।'' मैंने उसके साथ कदम-से-कदम मिलाते हुए कहा।

''यही तो समस्या है आप पत्रकारों की। हर जगह खबर सूँघने में लगे रहते हो। अरे क्या भ्रष्टाचार अभी तक तुम्हारे अखबार के लिए समाचार है। इस देश में इससे जुड़ी खबरों को अब कोई नहीं पढ़ता। अब तो यह एक उद्योग बन चुका है।'' कनछेदी ने चलते-चलते मेरा ज्ञानवर्धन किया।

भीतर महामहिम कनछेदी की प्रतीक्षा कर रहे थे। कनछेदी ने जाते ही अपने कागज उनके सामने फैला दिए। कनछेदी ने बताया कि राष्ट्रीय भ्रष्टाचार विश्वविद्यालय के लिए संभावित छात्रों से आवेदन माँगने के लिए यह विज्ञापन तैयार किया है। मैंने विज्ञापन महामहिम को सुनाने के लिए उठाया। लिखा था, ''राष्ट्रीय भ्रष्टाचार विश्वविद्यालय में निम्नलिखित पाठ्यक्रमों में प्रवेश हेतु आवेदन आमंत्रित किए जाते हैं। विश्वविद्यालय में प्रवेश हेतु उन छात्र-छात्राओं को प्राथमिकता दी जाएगी, जो आपराधिक पृष्ठभूमिवाले नेताओं के भाई-भतीजे होंगे अथवा जिनके घरवालों के पास भ्रष्टाचार के माध्यम से कमाई गई राशि के पर्याप्त भंडार होंगे। स्विस बैंक के खातेदारों के आवेदन पर सहानुभूतिपूर्वक विचार किया जाएगा। सजायाफ्ता नेताओं को स्वतंत्रता सेनानी स्वीकार करते हुए उनके बच्चों को छात्रवृत्ति देने का भी प्रावधान है।

मैंने विज्ञापन महामहिम को सुनाने के लिए उठाया। लिखा था, ''राष्ट्रीय भ्रष्टाचार विश्वविद्यालय में निम्नलिखित पाठ्यक्रमों में प्रवेश हेतु आवेदन आमंत्रित किए जाते हैं। विश्वविद्यालय में प्रवेश हेतु उन छात्र-छात्राओं को प्राथमिकता दी जाएगी, जो आपराधिक पृष्ठभूमिवाले नेताओं के भाई-भतीजे होंगे अथवा जिनके घरवालों के पास भ्रष्टाचार के माध्यम से कमाई गई राशि के पर्याप्त भंडार होंगे। स्विस बैंक के खातेदारों के आवेदन पर सहानुभूतिपूर्वक विचार किया जाएगा। सजायाफ्ता नेताओं को स्वतंत्रता सेनानी स्वीकार करते हुए उनके बच्चों को छात्रवृत्ति देने का भी प्रावधान है।

भ्रष्टाचार में स्नातक की उपाधि बी.डी.सी. (बैचलर डिग्री इन करप्शन)

यह पाठ्यक्रम हमारे भ्रष्टाचार शिक्षण संस्थान का सबसे प्रतिष्ठित कोर्स है। इसमें भ्रष्टाचार के सिद्धांत एवं व्यावहारिक ज्ञान की शिक्षा दी जाएगी।

१. हवाला और घोटाला : देश-विदेश में बड़े-बड़े घोटाले करने अथवा चुनाव के मैदान में ताल ठोकने के लिए हवाला के माध्यम से

भारी धनराशि को इधर-से-उधर करना।

२. वित्तीय प्रबंधन : राजनीति दलों द्वारा राज्य इकाइयों और केंद्र के मध्य भारी धनराशि के लेन-देन हेतु नेटवर्क तैयार करना।

३. रिश्वतखोरी के सिद्धांत : मेज के नीचे की राशि को मेज के ऊपर की राशि में बदलना। चाय-पानी, भेंट-पूजा और उपहारों के रूप में प्राप्त होनेवाली राशि और सामग्री का संग्रह, समायोजन एवं वितरण। विदेश यात्राओं और विदेश में बच्चों की शिक्षा के लिए दी जानेवाली राशि का औचित्य सिद्ध करना। चंदे के नाम पर दल को दी जानेवाली राशि का बँटवारा।

४. भू-प्रबंधन : भू-प्रबंधन के नाम पर बिना किसी निवेश के दिन दोगुनी रात चौगुनी कमाई करने के विभिन्न तरीके। सरकारी संपत्ति को हड़पने के कानूनी सिद्धांत और उन्हें व्यवहार में लागू करना। यह पाठ्यक्रम बहुत ही अनुभवी नेताओं, मंत्रियों और नौकरशाहों के द्वारा मिलकर तैयार किया गया है।

जन-संपर्क एवं मीडिया प्रबंधन में डिप्लोमा

१. मीडिया में निरंतर छाए रहने के नुस्खे।

२. मीडिया द्वारा उठाए गए किसी भी सच्चे आरोप को झूठा और बेबुनियाद बताकर उसका सफलतापूर्वक खंडन करना, ताकि उन्हें राजनीति से प्रेरित सिद्ध किया जा सके। स्टिंग ऑपरेशन जैसे प्रमाणों को भी नकली वीडियो फुटेज कहकर नकारना।

३. किसी भी ऐसी बात को संदर्भ के बिना भी उछालने के गुर सीखना, जिनसे कोई स्वार्थ सिद्ध होने की संभावना हो।

४. दलीय प्रवक्ता के रूप में अपनी गलत बातों को बार-बार दोहराना और दूसरे दल की सही बातों को गलत ठहराने में प्रवीणता प्राप्त करना। दूरदर्शन पर चिल्लाने, मुसकराने तथा बेशर्मी से अपनी बात पर डटे रहने का व्यावहारिक ज्ञान।

५. सार्वजनिक सभाओं में हाथ हिलाने, नमस्ते इत्यादि अभिवादन करने और श्रोताओं की जाति, धर्म, भाषा और आर्थिक आवश्यकताओं के अनुरूप उन्हें संबोधित करने के भिन्न-भिन्न ढंग।

कानूनी दाँव-पेंच में स्नातकोत्तर डिग्री

१. हत्या, बलात्कार तथा स्थानीय पुलिस से साँठगाँठ।

२. अपराध करके उससे बच निकलने में प्रवीणता और यदि किसी समय हिरासत में लिये जाने की संभावना बने तो अग्रिम जमानत प्राप्त करने की तैयारी।

३. जेल में रहते हुए चुनाव लड़ने के तरीके।

४. दंगे भड़काने की तैयारी। शांतिपूर्ण होनेवाले प्रदर्शनों में से पत्थर उछालने की तकनीक। बसें जलाने और सड़क तथा रेलमार्ग अवरुद्ध करने की जानकारी। इसके लिए मिट्टी के तेल, पेट्रोल, लाठी, गोला-बारूद और अन्य हथियारों का भंडारण। देसी शराब के व्यापारियों और भट्ठी से शराब बनानेवालों के साथ निकटता।

५. अफवाहें फैलाने के सिद्धांत और उनका व्यावहारिक प्रयोग।

इस अंक के चित्रकार

लालबहादुर श्रीवास्तव

चित्रकार, कहानीकार एवं कवि। कहानी, कविता, लघुकथा, साक्षात्कार, व्यंग्य, यात्रा-वृत्तांत, बाल-कविताएँ, कहानी पत्र-पत्रिकाओं एवं समाचारों में निरंतर प्रकाशित। 'नया सवेरा, धूप-छाँव, बाल-संग्रह, मुखौटे, लघु कथा-संग्रह प्रकाशित। जनगणना २०११ में विशिष्ट सेवाओं एवं देश के प्रथम जनगणना गीत लेखन के लिए राष्ट्रपति रजत पदक से सम्मानित। वर्ष २०१६ में 'सरस्वती विहार शैक्षिक संस्थान इंदौर' द्वारा साहित्य सेवा सम्मान २०१६ से पुरस्कृत एवं कई संस्थानों द्वारा रचनाओं पर सम्मानित।

संपर्क : एल.आई.जी./ए-१५
जनता कॉलोनी, मंदसौर-४५८००१ (म.प्र.)
दूरभाष : ०९४२५०३३९६०

६. सरकारी योजनाओं के माध्यम से अधिक-से-अधिक संपत्ति अपने और अपने संबंधियों के लिए हड़पने के तरीके।

अरे-अरे, बस पत्रकार महोदय! इतने समकालीन पाठ्यक्रमों की तो मैंने कल्पना भी नहीं की थी। इनसे तो सार्वजनिक जीवन और शिक्षा के क्षेत्र में क्रांति आ जाएगी, कनछेदी। मैं प्रयास करूँगा कि तुम्हारे राष्ट्रीय भ्रष्टाचार विश्वविद्यालय को 'विश्वविद्यालय अनुदान आयोग' से अतिरिक्त आर्थिक सहायता दिलवा सकूँ। तुम निश्चिंत होकर ऐसे ही पाठ्यक्रमों के माध्यम से देश की भावी पीढ़ी का भविष्य सँवारते रहो। तुम्हारे हाथों में देश की भावी पीढ़ी पूरी तरह से सुरक्षित है, इसमें मुझे कोई संदेह नहीं। इतना कहते ही महामहिम ने कनछेदी को गले से लगा लिया और मैं अपना माथा पकड़कर बैठ गया।

८२, साक्षर अपार्टमेंट्स,
ए-३, पश्चिम विहार, नई दिल्ली-११००६३
दूरभाष : ९८१०३९५२२३

सरकारी तख्ता

मूल : **अजीज नेसिन**
अनुवाद : **सुरजीत**

२० दिसंबर, १९१५ को जनमे आधुनिक तुर्की साहित्य के प्रतिष्ठित हस्ताक्षर अजीज नेसिन की सौ से ज्यादा पुस्तकें प्रकाशित हुईं। व्यंग्यकार के रूप में चर्चित नेसिन ने कविता, नाटक और अन्य विधाओं पर भी अपनी पैनी कलम चलाई। तुर्की, इटली, बुल्गारिया, सोवियत यूनियन में अनेक सम्मानों से अलंकृत नेसिन को अपने राजनीतिक सिद्धांतों के लिए जेल भी जाना पड़ा। धार्मिक कट्टरवाद के खिलाफ सक्रिय रहनेवाले इस महान् लेखक का ६ जुलाई, १९९५ को निधन हो गया। हम उनका एक चर्चित व्यंग्य-लेख यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं।

क्या आप जानते हैं कि सरकार का तख्ता कैसे उलटा जाता है? संभव है, आप कभी इस प्रकार का कार्य संपन्न करने के बारे में सोचें! यदि न भी सोचें तो भी थोड़ा सा फालतू ज्ञान प्राप्त करने में हर्ज ही क्या है! आइए, इसका तरीका जान लीजिए।

जी, क्या कहा आपने? क्या मैंने स्वयं कभी किसी सरकार का तख्ता उलटा है? जी नहीं, तख्ता तो नहीं उलटा, पर उसके बारे में एक पुस्तक अवश्य पढ़ी है। 'सरकार का तख्ता उलटने का ज्ञान' नामक एक पुस्तक। मुद्दत हुई, मुझे किसी अज्ञात कृपालु ने विदेश से डाक द्वारा भेजी थी। पुस्तक के प्रत्येक पृष्ठ पर 'गोपनीय' छपा हुआ था। मुझे पुस्तक पाकर बड़ा विस्मय हुआ कि इस प्रकार की खतरनाक चीज बिना सेंसर के मुझ तक डाक द्वारा कैसे पहुँच गई? पुस्तक का प्रकाशन स्थान संभवत: गलत था, क्योंकि बड़ी तलाश के बावजूद उस स्थान का नाम मुझे किसी एटलस में न मिल सका। पुस्तक की भूमिका में लिखा था, चूँकि संसार में सबसे अधिक बोली जानेवाली भाषा अंग्रेजी है, इसलिए यह पुस्तक अंग्रेजी में प्रकाशित की गई है। भूमिका की कुछ बातें प्रस्तुत हैं—

'हम यह पुस्तक खुफिया तौर पर उन लोगों तक पहुँचाएँ, जो हमारे रिकॉर्ड के अनुसार सरकार का तख्ता उलटने की पूरी योग्यता रखते हैं। आप पढ़कर अपने किसी ऐसे मित्र या संबंधी को दे दीजिए, जो आपके विचार में इस योग्यता का स्वामी हो। इस संबंध में विश्वसनीय और गुणवान व्यक्तियों के लिए खुफिया कोर्स चलाने की भी सिफारिश की जाती है।

'सरकार का तख्ता उलटना आपका बुनियादी उद्देश्य होना चाहिए। हम इस उद्देश्य की प्राप्ति में आपकी सफलता के लिए प्रार्थना करते हैं। याद रखिए, संसार भर में कोई भी सरकार इतनी सुदृढ नहीं कि इस पुस्तक में बताए गए तरीकों से उसका तख्ता न उलटा जा सके। आजमाइश शर्त है।

भूमिका पढ़ते ही मेरा सारा शरीर डर से काँप उठा। होश-हवास उड़ गए। थोड़ी देर बाद जब घबराहट जरा खत्म हुई तो सोचा, पुस्तक फौरन पुलिस के हवाले कर दूँ, क्योंकि हर वफादार नागरिक को ऐसा ही करना चाहिए। फिर खयाल आया, शायद देश में कई ऐसे लोग हों, जो सचमुच सरकार का तख्ता उलटने की कला सीखना चाहते हों। यदि पुस्तक पुलिस को दे दी तो देश में आसान कशीदाकारी से लेकर कोकशास्त्र तक हर प्रकार की पुस्तक बिना रोक-टोक पढ़ी जा सकती है, तो फिर यह पुस्तक क्यों न पढ़ी जाए?

पुस्तक में कई परिच्छेद थे। हर परिच्छेद में किसी एक प्रकार की सरकार का तख्ता उलटने के अनेक तरीके दर्ज थे। सरकार की प्रकृति, देश के लोगों की अपनी विशेषताएँ और तख्ता उलटनेवालों के लक्ष्यों एवं उद्देश्यों के अनुसार हर तरीका दूसरे तरीकों से भिन्न था। पुस्तक की शैली बहुत मधुर और आकर्षक थी। पढ़नेवालों को ऐसा अनुभव होता, मानो कोई स्वादिष्ट व्यंजन या बढ़िया सा सूप बनाने की विधि पढ़ रहे हों। वास्तव में सारी पुस्तक की दिलचस्पी का भेद उसकी आकर्षक लेखन शैली में छुपा हुआ था। पुस्तक पढ़नेवाले के मन में ख्वाहमख्वाह वर्तमान सरकार का तख्ता उलटने की तड़प उफनने लगती थी। मुझ जैसा डरपोक इनसान भी पुस्तक के कुछ परिच्छेद पढ़ते ही अपने-आपको प्रसिद्धतम क्रांतिकारियों का समकालीन समझने लगा।

अब आप नमूने के तौर पर इस अद्वितीय पुस्तक के विभिन्न परिच्छेदों के शीर्षक पढ़िए। (स्थान की कमी के कारण हर परिच्छेद का केवल शीर्षक ही लिखा जा सकता है। विस्तार में फिर कभी जाएँगे।)

१. लोक-शत्रु सरकारों का तख्ता उलटने की तरकीब।
२. तानाशाही से छुटकारा प्राप्त करने के तरीके।
३. डरपोक क्रांतिकारियों को प्रोत्साहन देने के सफल नुस्खे।
४. अत्याचार-प्रिय सरकारों के विरुद्ध जनता को विद्रोह पर उकसाने

की विधियाँ।

५. वायदे भूल जानेवाली सरकारों से छुटकारा पाने की राहें।
६. वर्तमान सरकार का तख्ता उलटना किन परिस्थितियों में शुरू करें?
७. पिछड़े और विकासशील देशों में सरकार का तख्ता उलटने के लिए ध्यान देने योग्य क्रियाएँ।
८. सभ्य देशों में क्रांति लाने के परखे हुए तरीके, आदि-आदि।

चूँकि पुस्तक का अंतिम परिच्छेद पूरी पुस्तक में सबसे अधिक अपील रखता था, इसलिए अंतिम परिच्छेद में लिखी तेजी से प्रभाव डालनेवाली विधियाँ पाठकों की सेवा में प्रस्तुत की जा रही हैं। मुझे विश्वास है, आप यह परिच्छेद केवल एक बार गौर से पढ़ने के तत्काल बाद बेकाबू होकर इस विधि को कार्यान्वित करने के लिए उठ खड़े होंगे। यहाँ एक बात और स्पष्ट कर दूँ, इस विधि से सरकार का तख्ता उलटने में किसी प्रकार का खतरा नहीं, न आपको फाँसी के तख्ते पर लटकाया जा सकता है और न जेल भेजा जा सकता है। कारण यह है कि तख्ता उलटने के बावजूद स्वयं सरकार को भी पता नहीं चलेगा कि यह हरकत किसने की है। अत: अंतिम परिच्छेद बिल्कुल निर्भीक होकर तन्मयता से पढ़िए।

किसी जमाने में महाद्वीप गमटी के उत्तर-पूर्व में पर्वत पेमा और जगादरी दरिया के बीच में एक पर्वतीय देश स्थित था, जिसका नाम था खाकान। खाकानी बड़े दिलचस्प और सीधे-सादे लोग थे, पर स्वयं को काफी चालाक समझते थे। इस वर्ष फरवरी महीने तक देश में 'जिंदाबाद' पार्टी सत्तारूढ़ थी। उस महीने के चुनाव में यह पार्टी हार गई और 'औलादे-वतन' पार्टी ने सरकार बना ली। यह परिवर्तन देश के इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण घटना थी।

'औलादे-वतन' का लीडर कागान खाँ था। वह बुरा आदमी नहीं था। विश्व-सम्मेलनों के दौरान सोए रहना और अगर जाग रहा हो, तो नाक में उँगली फेरना, बस यही उसकी दो बड़ी बुराइयाँ थीं। चुनाव जीतने पर कागान खाँ देश का प्रधानमंत्री बन गया। यह बात विरोधी 'जिंदाबाद' पार्टी को एक आँख न भाई। वह हर कीमत पर 'औलादे-वतन' पार्टी को सत्ता से हटाना चाहती थी। अत: सबसे पहले विरोधी पार्टी ने अपने अखबारों में कागान खाँ और उसके साथियों पर आरोप लगाया कि वे सब चोर हैं। जनता ने इस आरोप पर बिल्कुल ध्यान नहीं दिया। लोगों का कहना था कि एक निकम्मे व्यक्ति को केवल इसलिए देश का प्रधानमंत्री बना देना, कि वह चोर नहीं है, सरासर गलत नीति है। प्रधानमंत्री ऐसा होना चाहिए, जो कम-से-कम सरकार का काम तो चला सके, चाहे चोर ही क्यों न हो। लोग सचमुच न्यायसंगत थे, क्योंकि 'जिंदाबाद' पार्टी के नेताओं ने भी अपने राजकाल में कोई कम चोरियाँ तो नहीं की थीं।

जब विरोधी पार्टी ने देखा कि उनकी यह चाल कारगर साबित नहीं हुई, तो उन्होंने अफवाह उड़ा दी कि कागान खाँ तानाशाह है और जनता की स्वतंत्रता समाप्त करने पर तत्पर है। जनता ने इस अफवाह पर भी कान न धरे। मतलब यह कि उन्होंने कागान खाँ को सत्ता से हटाने के लिए सभी लोकतांत्रिक तरीके आजमा लिये, पर किसी में सफलता न मिली। अत: उन्होंने जनता को 'औलादे-वतन' पार्टी की सरकार के विरुद्ध विद्रोह करने पर उकसाने का क्रांतिकारी तरीका अपनाया। यह उनकी बुनियादी गलती थी, क्योंकि विद्रोह किसी अन्य देश में तो सफल हो सकता था, पर खाकानी जनता के स्वभाव और उनकी सांस्कृतिक परंपराओं को विद्रोह नाम की किसी चीज की हवा तक नहीं लगी थी। न ही उन लोगों के खमीर में हिंसा की मिलावट थी कि उन्हें विद्रोह पर तैयार किया जा सकता। इस तरह राष्ट्र के लिए सरकारी आदेशों की अवज्ञा में विद्रोह करना बिल्कुल असंभव था।

जब सरकार से छुटकारा प्राप्त करने का कोई तरीका सफल न हुआ, तो 'जिंदाबाद' पार्टी के नेता गर्ग खाँ ने पार्टी के सदस्यों का विशेष अधिवेशन बुलाया और सदस्यों को यों संबोधित किया, 'प्रिय मित्रो! इस निर्दयी सरकार का तख्ता उलटने में हमारी पार्टी को जो असफलता मिली है, उसका बड़ा कारण यह है कि हमने क्रांति के ऐसे तरीके अपनाए, जो अन्य देश में प्रयुक्त किए जाते रहे हैं, जबकि जरूरत इस बात की थी कि हम अपनी राष्ट्रीय संस्कृति और स्थानीय वातावरण तथा परंपराओं को देखते हुए कोई शुद्ध, देसी नुस्खा इस्तेमाल करते। आप सब जानते हैं, हर देश का अपना अलग परिवेश होता है और हर राष्ट्र की अपनी विशिष्ट विशेषताएँ। अब हमें चाहिए कि कोई ऐसा तरीका ढूँढ़ें, जो हमारी जनता की आत्मा और राष्ट्रीय प्रकृति के अनुकूल हो। इस संबंध में मैंने अपने राष्ट्रीय इतिहास का गहन अध्ययन कर के सरकार का तख्ता उलटने का एक शुद्ध, देसी तरीका ढूँढ़ निकाला है, जिसका उदाहरण आपको दुनिया के किसी अन्य देश के इतिहास में नहीं मिलेगा। अगर आप लोग मेरी तजवीज गौर से सुनें, तो मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि कागान खाँ की सरकार का ढाँचा दो माह के अंदर धड़ाम से जमीन पर आ गिरेगा और खुदा ने चाहा, तो सत्ता हमारे और आपके हाथों में होगी।'

अधिवेशन में उपस्थित लोग गर्ग खाँ की खोज के बारे में और विस्तार से सुनने के लिए एकाग्रचित्त हो गए। गर्ग खाँ ने भाषण जारी रखा, 'बड़े खेद की बात है कि हम लोग अपने व्यक्तिगत अनुभवों को भूलकर दूसरों के रेडीमेड नुस्खों की तलाश में मारे-मारे फिरते रहे। यही हमारी गलती है। आइए, जरा मिलकर सोचें कि हम स्वयं सत्ता की गद्दी से कैसे हटाए गए थे? इसलिए कि जनता को हमसे सख्त नफरत हो गई थी। लोग हमें बेहद संदेह की दृष्टि से देखते थे। अत: उन्होंने हमें सत्ता से यों हटा दिया, जैसे मक्खन से बाल निकाला जाता है। अब हमें चाहिए कि सत्तारूढ़ पार्टी के लोगों को सत्ता से हटाने के लिए हम भी हू-ब-हू वही तरीके अपनाएँ, जिनसे हम लोगों को सत्ता से हटाया गया था। आइए, हम सब अपनी पार्टी से त्याग-पत्र देकर 'औलादे-वतन' पार्टी में शामिल हो जाएँ। इस पार्टी को खचाखच अपने आदमियों से भर दें, ताकि जनता की नफरत हमारी पार्टी से हटकर हमारे आदमियों के साथ सत्तारूढ़ पार्टी के विरुद्ध केंद्रित हो जाए। यही नफरत अंतत: सरकार का तख्ता उलटकर रख देगी।'

यह प्रस्ताव सुनकर सब सदस्य वाह-वाह कर उठे, लेकिन एक

महाशय ने पूछा, 'पर श्रीमान, हमें यह तो बताइए कि हम लोग 'औलादे-वतन' पार्टी में शामिल होने के बाद करेंगे क्या?'

गर्ग खाँ मानो इस प्रश्न की प्रतीक्षा में था, वह झट बोला, 'हम लोग वहाँ भी कुछ नहीं करेंगे। हमें जनता ने इसलिए तो नफरत का निशाना बना लिया था कि हम करते-कराते कुछ भी नहीं थे। बस यही काम 'औलादे-वतन' पार्टी में शामिल होने के बाद जारी रखना होगा। हाथ-पर-हाथ धरे बैठे रहना। फिर देखना, सरकार का तख्ता कैसे उलटता है!'

विशेष अधिवेशन का यह निर्णय पार्टी की प्रादेशिक, जनपदीय और ग्रामीण शाखाओं तक पहुँचा दिया गया। 'जिंदाबाद पार्टी' के सदस्यों ने हर स्तर पर धड़ाधड़ त्याग-पत्र देकर 'औलादे वतन' पार्टी में शामिल होना शुरू कर दिया।

उधर सत्तारूढ़ पार्टी के नेता और प्रधानमंत्री, विरोधी पार्टी के सदस्यों के यों पंक्ति-दर-पंक्ति सत्तारूढ़ पार्टी में शामिल होने की खबरें सुन-सुनकर जामे में फूले न समाते। उनके विचार में सत्तारूढ़ पार्टी की लोकप्रियता दिन-प्रतिदिन बढ़ती चली जा रही थी और विरोधी पार्टी का सारा जोर तेजी से टूट रहा था। अपनी पार्टी की लोकप्रियता का लोहा मनवाने के लिए प्रधानमंत्री ने पार्टी के वार्षिक अधिवेशन का आयोजन कर डाला।

उद्घाटन सामारोह में जब प्रधानमंत्री कागान खाँ मंच पर आया, तो लोगों ने बड़ी देर तक तालियाँ बजा-बजाकर उसका स्वागत किया। कागान खाँ माइक्रोफोन हाथ में लेकर बोला, 'मेरे प्य···'

अभी वह इतना ही कह पाया था कि श्रोताओं ने नारे लगाने और तालियाँ बजानी शुरू कर दीं। जनता ने इतने जोश-खरोश का प्रदर्शन किया कि प्रधानमंत्री के लिए भाषण देना कठिन हो गया। उसने कई बार प्रयत्न किया कि कम-से-कम अपने आरंभिक वाक्य 'मेरे प्यारे मित्रो और भाइयो!' ही पूरा कर पाए, पर हर बार लोगों के नारों ओर तालियों के शोर के कारण 'मेरे प्या···' के बाद उसके मुँह से निकलनेवाली कोई बात समझ न आई। श्रोताओं में एक बड़ी संख्या विरोधी पार्टी के उन सदस्यों की थी, जो अब 'औलादे-वतन' पार्टी में शामिल हो चुके थे और जिन्हें अपने राजकाल में पिछले प्रधानमंत्रियों के भाषणों के दौरान नारे लगाने और तालियाँ बजाने की आदत पड़ चुकी थी। थोड़ी देर बाद एक अवसर ऐसा आया कि कागान खाँ तालियों के मध्यवर्ती विराम से लाभ उठाते हुए यह कहने में सफल हो गया, 'मेरे प्यारे मित्रो और भाइयो! मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि···'

वायुमंडल फिर नारों और तालियों से गूँज उठा। अगले विराम तक कागान खाँ दाँत-मुट्ठियाँ भींचता रहा। फिर बोला, 'अब आप अशिष्टता की हद तक पहुँच रहे हैं। प्यारे···'

तालियाँ और नारे पहले से कहीं अधिक तीव्रता धारण कर गए।

पार्टी अधिवेशन समाप्त हो गया, पर प्रधानमंत्री जहाँ कहीं नजर आता, 'औलादे-वतन' पार्टी के नए सदस्य देर तक उसकी शान में तालियाँ बजा-बजाकर नारे लगाते रहते। अगर प्रधानमंत्री खाँसता, तो वे वाह-वाह के नारे लगाते। अगर वह छींकता, तो भी उसी भावना से नारे लगाते।

प्रधानमंत्री गुस्से से लाल-पीला हो रहा था। अंतत: तीव्र झल्लाहट की अवस्था में वह चिल्लाने लगा, 'बकवास बंद करो, कमबख्तो प्यारे'

यों लगता था, जैसे प्रधानमंत्री को हिचकी आ रही हो। उसका कोई वाक्य पूरा न होने पाता। किसी को उसकी बात समझ न आती और लोग फिर अंधाधुंध नारे लगाने तथा तालियाँ बजाने में मग्न हो जाते। प्रधानमंत्री का गुस्सा पराकाष्ठा पर पहुँच चुका था, पर उसे समझ में नहीं आता था कि करे तो क्या करे? आखिर वह गुस्से पर काबू पाते हुए खिसियानी-सी हँसी हँसा और एक बार फिर लोगों से संबोधित हुआ, 'भई, खुदा के लिए शोर मत कीजिए! गड़बड़ न मचाइए! प्या···'

जब कागान खाँ ने देखा कि यहाँ कोई सुनवाई नहीं, तो वह शोरगुल से बेपरवाह होकर काफी देर अनाप-शनाप बोलता रहा। अंतत: मंच से उतरकर अपनी सीट पर जा बैठा।

पार्टी अधिवेशन समाप्त हो गया, पर प्रधानमंत्री जहाँ कहीं नजर आता, 'औलादे-वतन' पार्टी के नए सदस्य देर तक उसकी शान में तालियाँ बजा-बजाकर नारे लगाते रहते। अगर प्रधानमंत्री खाँसता, तो वे वाह-वाह के नारे लगाते। अगर वह छींकता, तो भी उसी भावना से नारे लगाते। प्रधानमंत्री जम्हाई लेता, नाक खुजाता या ऊँघता तो भी वे लोग नारों और तालियों से उसकी इन हरकतों की दाद देते। प्रधानमंत्री, जो कि आरंभ में लोगों के नारे और तालियाँ सुन-सुनकर नाराज होता, लोगों पर गुस्सा प्रकट करता, कभी उनसे चुप रहने की याचना करता और कभी उन्हें इस अनुचित हरकत पर गालियाँ दिया करता था, धीरे-धीरे तालियाँ और नारों का आदी हो गया। कुछ ही समय बाद उसे अपनी शान में उठनेवाले नारों और तालियों का इतना नशा लग गया कि अगर कभी उसके ऊँघने पर ये आवाजें बंद हो जातीं, तो वह चौंककर उठ बैठता और अपने इर्द-गिर्द यों नजर दौड़ाता, जैसे लोगों से जवाब-तलबी कर रहा हो कि तालियाँ क्यों बंद कर दी गई हैं! नारे क्यों खामोश हो गए हैं!

यह क्रम यों ही चलता रहा। कुछ समय बाद लोगों में अफवाहें फैलानी शुरू हो गईं कि प्रधानमंत्री कागान खाँ का दिमाग चल गया है। बस फिर क्या था, जो दुर्दशा किसी पागल की होती है, वही प्रधानमंत्री और उसकी 'औलादे-वतन' पार्टी की हुई। दो माह के अंदर-अंदर उस पार्टी की सरकार का तख्ता उलट गया।

सम्मानित पाठकगण! हमें चाहिए, इतिहास की इस महत्त्वपूर्ण क्रांति से शिक्षा प्राप्त करें। अगर सरकार का तख्ता उलटने से बाकी सब तरीके असफल हो जाएँ, तो यह आखिरी तरीका आजमाना न भूलिए। दुनिया की सुदृढतम सरकार भी इस तरीके की बात न लाते हुए दम तोड़ देगी।

सा अ

सी-३४, सुदर्शन पार्क
नई दिल्ली-११००१५
दूरभाष : ०९३१२१२४८२९

कहानी

पापा कब लौटेंगे

● राकेश 'चक्र'

राकेश और जीतू दोनों बहन-भाई आपस में बड़े प्यार से खेलते। शीलू की उम्र ढाई वर्ष थी और जीत की सवा वर्ष। जीत बहुत ही चंचल स्वभाव का था। वह ऐसी बाल सुलभ लीलाएँ करता कि शीलू उससे जब तंग हो जाती, तब कहती, 'मैं तुझे अब अपनी पीठ पर नहीं घुमाऊँगी।'

'न तुझते बोलूँगी।'

'तू बहुत तंदा है।'

'न तुदे तुछ थाने तो दूँगी।' आदि बातें बोलकर रूठ जाती, वह उसकी बातें समझता या न समझता, बस वह रूठने के हाव-भाव समझ जाता। वह उसे बार-बार मनाने आता, लेकिन शीलू घर में इधर-उधर दुबकने (छिपने) का प्रयास करती। घंटों ये बाल-लीलाएँ चलतीं और फिर जीतू गले में बाँहें डालकर मना ही लेता। जब भी शीलू कुछ खाती, वह अपने भाई को साथ ही खिलाती, उसकी माँ मधु मना भी करती कि सब चीजें उसे न खिलाए। जैसे जब जीत को सर्दी लग जाती, तो वह संतरा और अंगूर खिलाने को मना करती तथा कभी कड़ी चीजों, जैसे मक्के के फूले, भूने चने आदि को, क्योंकि उसके अभी दो-चार दाँत ही निकले थे।

शीलू के पिता जब दफ्तर से शाम को लौटते तब दोनों ही पापा,-पापा कहकर लिपट जाते तथा वह दोनों को गोद में उठाकर प्यार करते और फूले न समाते। शीलू की माँ जब यह देखती, तब उसकी खुशी का ठिकाना न रहता। परिवार में खुशियाँ ही खुशियाँ बरस रही थीं। वह रोज ही खाने-पीने की अच्छी-अच्छी चीजें लाते।

शीलू के पिता जितने परिवार के प्रति सरल, सहज और समर्पित थे, उसके विपरीत दफ्तर के काम में तिकड़मी और चालाक थे। बिना लिये-दिए वे जल्दी किसी का काम न करते तथा जब तक कुछ न मिल जाता, तब तक वह कार्य करानेवाले को कई-कई चक्कर लगवाते। मीठे इतने कि किसी को काम करने के लिए मना न करते। दु:खी होकर काम करानेवाला कुछ फल-फूल चढ़ाता और तब जाकर उसका काम होता। वे लोगों से मुँह में पान भरे-भरे कहते, 'भाई, जब बड़े-बड़े खद्दरधारी, अधिकारी दोनों हाथों से दूह रहे हैं तो मैं तो रहा छोटा कर्मचारी, मुझे उनके पदचिह्नों पर चलने में गुरेज कैसा?' यह कहते-कहते वह पान की पीक कूड़ेदान में थूक देते।

दो वर्ष की नौकरी में शीलू के पिता ने नई मोटरसाइकिल व अन्य

सुपरिचित लेखक एवं रचनाकार। प्रौढ़ साहित्य पर दो दर्जन कृतियाँ, किशोरों के लिए दर्जनभर कृतियाँ तथा प्रचुर संख्या में बाल-साहित्य प्रकाशित। छोटे-बड़े डेढ़ दर्जन पुरस्कार-सम्मान प्राप्त।

घरेलू कीमती सामान खरीद लिया था। घर की खुशियाँ देखते ही बनती थीं। पड़ोसी कहते कि परिवार हो तो ऐसा।

शीलू का दाखिला तीन वर्ष की पूरी होते ही एक नर्सरी अंग्रेजी स्कूल में करा दिया गया। वहाँ का मासिक व्यय अच्छा-खासा था। शीलू रिक्शे से आती-जाती, उसे अन्य बच्चों के साथ खूब मजा आता तथा कक्षा में भी उसे ढेर सारे खेल-खिलौनों से खेलने को मिलता। शीलू की मीठी-मीठी तोतली बोली पर उसकी शिक्षिकाएँ बहुत खुश रहतीं।

सोमवार का दिन था। शीलू नौ बजे अपने स्कूल चली गई थी तथा उसके पिता भी दफ्तर जाने की तैयारी कर रहे थे। मधु ने अपने पति को अच्छी तरह नाश्ता कराया और चार पराँठे सब्जी के साथ दफ्तर के लिए भी टिफिन में रख दिए। दफ्तर में पहुँचने का समय प्रात: दस बजे का था, लेकिन शीलू के पिता घर से सवा दस और साढ़े दस के बीच ही चलते। आज भी उन्होंने चलने से पहले कपड़ों पर सेंट छिड़का और जीतू को प्यार किया।

मोटर साइकिल से दफ्तर तक पहुँचने का पंद्रह मिनट का रास्ता था, वैसे भी वे नई महँगी मोटर साइकिल पर बैठ हवा से बातें करते और दस मिनट में ही पहुँच जाते। आज इन्होंने तिराहे के पास जैसे ही कार को ओवरटेक किया, विपरीत दिशा से आ रहे ट्रक से इनकी टक्कर हो गई। बस फिर क्या था, इन्हें तेजी और लापरवाही से चलाने का परिणाम मिल गया। सारी खुशियाँ एक पल में ही छूमंतर हो गईं। ट्रक चालक के खिलाफ मुकदमा दर्ज हुआ, जबकि उस समय चालक की कोई गलती नहीं थी।

अंग्रेजों का बनाया भारतीय कानून या तो गरीबों को सजा दिलाने के लिए बना है या निर्दोषों को सजा दिलाने के लिए, बस झूठे-सच्चे गवाह चाहिए, जिन्हें धन दे खरीदा या बेचा जा सकता है।

मधु के जीवन में इससे बड़ी विपत्ति क्या आ सकती थी? उसके

परिवार की सारी खुशियाँ छिन्न-भिन्न हो गईं। इस दुर्घटना को उसने किसी तरह शीलू से छिपाए रखा, जीतू तो बहुत छोटा ही था।

जीवन में विपत्ति का पहाड़ कब टूटकर गिर जाए, कुछ पता ही नहीं चलता; लेकिन हम तो माया और आत्मसंभ्रम में पड़कर भविष्य को भूल ही जाते हैं।

मधु पहले से ही अपने सास-ससुर, जेठ-जेठानी आदि से दूर रहती थी, फिर भी उसे इस हादसे के बाद कितना सुनना पड़ा, यह तो उसका दिल ही जानता था।

'ऐसी कपूतनी आई कि मेरे लड़के को ही खा गई।'

'डायन ने मेरा लड़का ही खा लिया।'

'मैं तो पहले ही कहती थी कि भाभी के पैर अच्छे नहीं हैं।'

'ऐसी दुष्ट-कुलटा का कौन मुँह देखे?'

'मनहूस खुद न मरी, मैं तो अपने भाई की दूसरी शादी कर देता।'

ससुरालियों के ये सब प्रवचन सुनकर उसका कलेजा छलनी हो जाता, लेकिन उसके भाई उसे ढाढ़स बँधाते रहते, 'तुम अपने बच्चों की तरफ देखो मधु, तुम्हें इनके लिए जिंदा रहना है, हम तो हैं तुम्हारे लिए।'

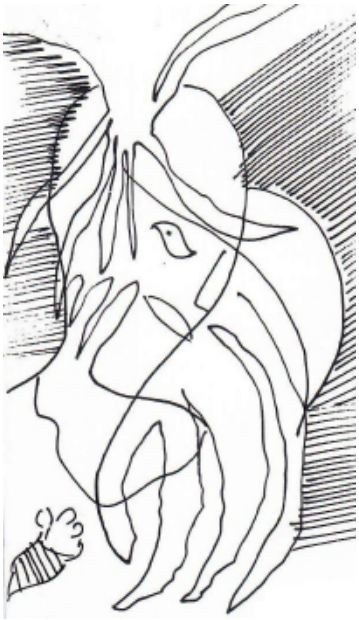

वह सोचती रहती कि वह धरणी की तरह है, जिस पर न जाने सदियों से क्या-क्या होता आ रहा है, अब क्या-क्या हो रहा है तथा क्या-क्या होता रहेगा? फिर भी ये मौन और धैर्य की प्रतिमा बनकर और सहकर सबकुछ लुटा रही है, मैं क्या अपने बच्चों के लिए न जी सकूँगी, इतने ही दिन का साथ था। मेरे पास तो वो सब कुछ छोड़ गए हैं? विभाग मुझे नौकरी भी देने को तैयार है, ससुरालिये मदद करें या न करें, मेरे भाई और माँ-पिता तो पूर्ण रूप से कर ही रहे हैं···जब जीवन में दु:ख ही लिखा है तो उसे भी हँसकर क्यों न सहन किया जाए···। कितनी ही अबलाएँ आज भी नारकीय जीवन जीने को मजबूर हैं। मैं उनसे तो कम-से-कम बेहतर ही हूँ।

धीरे-धीरे एक वर्ष बीत गया और मधु में साहस का संचय होता गया। प्राय: शीलू अपनी माँ से पूछती, 'मेरे पापा कहीं गए हैं? वो कब लौटेंगे?'

मधु उसे ढाढ़स बँधाते हुए बड़ी ममत्त्वपूर्ण क्षुद्रार्थ दृष्टि और गोद में लेकर कहती, 'बिटिया, तुम्हारे पापा का स्थानांतरण बहुत दूर हो गया है। वह खूब सारे रुपए लेकर लौटेंगे और तुम्हारे लिए खूब सारी चीजें लाएँगे।'

शीलू माँ को उलाहना देते हुए कहती, 'मुझे पैसा-वैसा कुछ नहीं चाहिए और न मुझे कोई चीज चाहिए। मुझे पापा से मिलवा दो। इतने दिन हो गए हैं। मुझे पापा की बहुत याद आती है। मम्मी ये स्थानांतरण क्या होता है? मुझे बताओ न।'

शीलू के ममस्पर्शी वाक्य उसके हृदय को हिलाकर रख देते और वह अपने आँसुओं को अंदर-ही-अंदर पी जाती।

वह शीलू के भोले से मुख को बार-बार चूमकर अपना सारा प्यार उड़ेल देती और कहती, 'बिटिया, वह जल्दी लौटेंगे। स्थानांतरण का मतलब है बदली-ट्रांसफर।'

फिर वह पूछती, 'मम्मी, कहीं बदली हुई है?'

मधु प्यार से कहती, 'नए लोक में।'

'क्या मम्मी नया लोक बहुत दूर है?'

'हाँ, बिटिया, बहुत दूर है, इसलिए तो नहीं आ पा रहे हैं तुम्हारे पापा।'

'अच्छा, मैं भगवान् से कहूँगी कि मेरे पापा की बदली जल्दी करा दें।'

दोनों बच्चे जब सो जाते तब मधु अपने कक्ष में अकेली ही होती, तब यदाकदा दु:ख का सागर उमड़-घुमड़कर बिस्तर को भिगो देता, लेकिन फिर वह सँभलकर अपने आपसे पूछती कि आखिर वह यह सब क्यों कर रही है? अरे, उनकी अमानत तो मेरे पास है। फिर क्यों वह ऐसा कर रही है? नहीं, नहीं वह अब बिस्तर को गीला न करेगी। वह मुझे रोते जानकर खुश न होंगे। उन्हें जाना था, इसलिए तो अपनी अमानत छोड़ गए हैं, फिर सोते हुए दोनों बच्चों को प्यार करने लगती।

प्रत्येक मनुष्य के जीवन में जाने-अनजाने सुखद स्मृतियाँ सुधावर्षण करती रहती हैं। यही मन को कहकशाँ बना देती हैं, जिससे मुनष्य में कुछ समय के लिए स्फूर्ति भर जाती।

शीलू हँसी-खुशी स्कूल जाती, लेकिन जब भी उसे पापा की याद आती, तो वह उदास हो जाती। उसे अब महसूस होने लगा कि उसके पापा नहीं लौटेंगे, क्या मम्मी उसे झूठ-मूठ ही समझाती हैं, लेकिन आज ऐसी घटना घट गई कि उसने शीलू के बालमन में कई तरह के झाड़-झंखाड़ उगा दिए। शीलू की कक्षा में नीतू नाम की लड़की पढ़ती थी। वह बहुत नटखट और शरारती थी। वह कक्षा में रोज ही किसी-न-किसी को चिढ़ाती, चिकोटी काट लेती तथा मौका पाकर अन्य बच्चों की रबड़ और पेंसिल भी गायब कर देती। सब बच्चे ही उसकी शरारतों से परेशान थे, इसी कारण उसकी कोई सहेली या लड़का मित्र नहीं था। उसके पिता पुलिस विभाग में आरक्षी थे। उसके पिता ने ही एक दिन पूर्व बताया था कि जो तुम्हारी कक्षा में शीलू नाम की लड़की पढ़ती है, उसके पिता की मृत्यु हो गई है, जो हमारे विभाग में ही बाबू थे। वैसे भी कई बार शीलू से बच्चे पूछते कि तुम्हारे पापा कभी भी विद्यालय के कार्यक्रमों में नहीं आते, हमारे तो आते हैं। बस मम्मी ही कभी-कभी आ जाती हैं, तो शीलू कह देती कि मेरे पापा की बदली बहुत दूर हो गई है, वह बहुत सारा रुपया लेकर आएँगे और मेरे लिए

खूब सारी अच्छी-अच्छी चीजें लाएँगे। बच्चे उसके तर्क से सहमत हो जाते। जैसे ही शीलू आज अपनी कक्षा में प्रविष्ट हुई, वैसे ही नीतू ने चिढ़ाना शुरू कर दिया।

'शीलू तो हमें झूठ-मूठ बहकाती थी कि मेरे पापा बहुत सारा रुपया लेकर आएँगे और खूब सारी चीजें लाएँगे। झूठी कहीं की। तेरे पापा तो मर गए हैं।' कल मेरे पापा बता रहे थे।

इतना कहना था कि शीलू खूब जोर-जोर से रोने लगी। कुछ ही बच्चे कक्षा में आए थे और कुछ आते जा रहे थे। शीलू के रोने की आवाज सुनकर कई बच्चे उसके पास आ गए थे, लेकिन नीतू वहीं से फुर्र हो गई, शायद वह प्रार्थना-स्थल पर जाकर खड़ी हो गई थी।

सब बच्चे शीलू से पूछने लगे, 'क्या हुआ, शीलू क्या हुआ?'

लेकिन शीलू अपने मुँह पर दोनों हाथ ढाँपकर रोए ही जा रही थी। थोड़ी ही देर में प्रार्थना का घंटा बजा और सब बच्चे अपना-अपना बस्ता कक्षा में ही छोड़ अन्य दिनों की भाँति प्रार्थना-स्थल पर जाने लगे तथा अपनी कक्षा की कतार में खड़े होने लगे। शीलू के आँसू थम नहीं रहे थे, लेकिन वह रूमाल से अपना चेहरा पोंछकर उदास-उदास मन लिये प्रार्थना-स्थल पर अपनी कक्षा की कतार में खड़ी हो गई। उसने प्रार्थना में गाया जानेवाला एक भी शब्द मुख से न बोला और भगवान् से मन-ही-मन पूछने लगी कि क्या तुमने सचमुच मेरे पापा को मार दिया है, क्या वे अब कभी वापस नहीं लौटेंगे? क्या मुझे नीतू या अन्य बच्चे इसी तरह चिढ़ाया करेंगे? सबके ही मम्मी-पापा तो स्कूल के आयोजनों में आते हैं, वार्षिकोत्सव में तो मैं मामा के साथ आई थी, क्योंकि मम्मी के दफ्तर की उस दिन छुट्टी नहीं थी, मम्मी बता रही थीं कि उनके यहाँ बड़े साहब का मुआयना है, इसलिए छुट्टी नहीं मिल पाएगी, मम्मी कितनी रिरियाई थीं और खुशामद की थी छुट्टी के लिए, लेकिन मम्मी को छुट्टी नहीं मिली थी। शाम को दफ्तर से आकर मम्मी रोई भी थीं और मैंने ही उन्हें चुप कराया था और मेरे चुप कराने-समझाने पर मम्मी खुश होकर मुझे चूमने लगी थीं। जल्दी से भगवान् मेरे पापा को वापस कर दो न। फिर ये बच्चे मुझसे ऐसा सवाल न करेंगे।

उसके यह सोचते-सोचते प्रार्थना समाप्त हो गई थी। सब बच्चे कतारबद्ध हो अपनी-अपनी कक्षा में जा रहे थे।

शीलू की माँ आठवीं कक्षा उत्तीर्ण थी, इसलिए उन्हें चतुर्थ श्रेणी की नौकरी मिली। चपरासी के जो भी कार्य थे, वे उन्हें करने पड़ते। किसी को वह पानी पिलाती तो किसी के लिए पान, सिगरेट-बीड़ी और चाय लाकर देती, फाइलें इधर से उधर ले आती। लेकिन उसे नित्य ही सैकड़ों गिद्ध दृष्टियों से तार-तार होना पड़ता। बाबुओं से लेकर छोटे-बड़े कर्मचारी, अधिकारी उसके कृशोदरी, क्षीणकटि, वामा रूप पर मुग्ध रहते। अधिकतर उसके साथ अधिक-से-अधिक संसर्ग चाहते, वह थी कि बेचारी इस निर्लज्ज पुरुष जाति से बचती-फिरती तथा जो भी समय मिलता, अपनी अन्य महिला सहकर्मियों के साथ दु:ख-सुख बाँटा करती।

वह जब नितांत अकेली होती, तो अपना असह्य हृदय भार लिये सोचती कि क्यों उसे नौकरी करने आना पड़ता? मैंने तो स्वप्न में भी न सोचा था कि उसे गैरों के जूठे गिलास धोने पड़ेंगे और निर्लज्ज लोगों के व्यंग्य-बाण तथा डाँट-फटकार सुननी पड़ेगी। कई निर्लज्ज उसे अपनी चेरी बनाना चाहते हैं, यह कैसा समाज है, जहाँ पति के न रहने पर लोग उसे खा जाना चाहते हैं, आँखों में शर्म और हया रह ही नहीं गई है। क्या यह सब भाग्य का खेल नहीं है? उसका खेल न होता तो शायद मुझे यहाँ लाकर न पटकता।

यह सोचते-सोचते उसमें महान् आत्मबल आ जाता। अच्छे-से-अच्छे कर्मठ और शक्तिशाली मनुष्य अपने भाग्य से हारते रहे हैं और हारते रहेंगे। एक बच्चा जन्म लेते ही लखपति और करोड़पति हो जाता है तथा दूसरा कूड़ा बीननेवाले के यहाँ जन्म लेकर खाकपति। बच्चे का क्या दोष है, वह तो निर्दोष है। कई इस बात का मखौल उड़ा सकते हैं? लेकिन यह शाश्वत सत्य चला आ रहा है।

दोपहर तीन बजे जब शीलू अपने विद्यालय से रिक्शे से लौटी तो वह आज बहुत उदास-उदास थी। उसने रिक्शे में किसी भी सहपाठी से बात न की और न ही फूलों की तरह मुसकान बिखेरी; क्योंकि जब भी हँसती थी तो उसके मुख से सुधावर्षण होता। उसकी नानी ने जब उसका उदास चेहरा देखा तो पूछने लगीं, 'शीलू, आज ऐसी क्या बात हो गई, जो तुम इतना रूँआँसा चेहरा बनाए हो। सब ठीक तो है?'

इतना सुनकर भी वह कुछ न बोली और असह्य हृदय भार के बोझ तले वह बस्ता रख और अपने जूते उतार बिस्तर में लेट गई। उसकी नानी उसके पीछे-पीछे आईं और उससे बार-बार वही प्रश्न दोहराने लगीं। उसकी आँखों से अश्रुओं की अविरल धारा बहती रही। नानी के बहुत मनाने पर भी उसने कुछ न खाया और न ही उसने स्कूल से टिफिन में रखे पराँठे खाए थे। उसे कब नींद आ गई, उसे पता ही न चला। जीत दूसरे कमरे में सो रहा था।

सायं साढ़े पाँच बजे उसकी माँ आ गई। उसकी नानी ने अपनी पुत्री को सब हाल बताया।

शीलू की माँ ने सोते-सोते ही उसे प्यार किया तो उसकी नींद खुल गई।

'बिटिया, आज तुमने न टिफिन में रखे पराँठे खाए और न ही नानी के साथ खाना। क्या हो गया मेरी बच्ची? कुछ तो बोलो।'

वह बहुत देर तक कुछ न बोली, तब उसकी माँ के झर-झर आँसू बहने लगे। माँ को रोता देखकर वह भी रोने लगी और सुबकती-सुबकती माँ के गले से लिपट गई और बोली, 'मम्मी, अब तुम मत रोओ, मैं अब तुमसे कभी नहीं पूछूँगी कि मेरे पापा कब लौटेंगे? सचमुच वे हमसे बहुत दूर, बहुतू दूर चले गए हैं।'

उसकी माँ ने उसे इस तरह अंक में भर लिया था, जैसे गर्भ में सीपी का कीट मोती को छिपा लेता है। शीलू की नानी अपने हाथों से दोनों पर ममत्व का सुधावर्षण करती रहीं।

९०, शिवपुरी (डबल फाटक)
मुरादाबाद-२४४००१ (उ.प्र.)
दूरभाष : ०९४५६२०१८५७

अज्ञेय–काव्य और पर्यावरण

● मनमीत कौर

प्रकृति मानव के लिए वरदान है। प्रकृति से ही मानव पोषण प्राप्त करता है, अर्थात् प्रकृति में मानव उपयोगी सभी चीजें विद्यमान हैं, किंतु यह भी उतना ही बड़ा सत्य है कि मानव एक स्वार्थबद्ध प्राणी है और उसकी लालसाओं का कोई अंत नहीं है। बहुत पहले ही महात्मा गांधी ने कह दिया था कि यह पृथ्वी हमारी आवश्यकताओं को तो पूरा कर सकती है, लालच को नहीं। किंतु इस मानव रूपी स्वार्थबद्ध प्राणी ने अपनी आवश्यकता–पूर्ति के नाम पर प्रकृति को केवल लूटा ही है। प्रकृति के प्रति मानव का यह निष्ठुर व्यवहार ही पर्यावरण असंतुलन और विनाश का प्रमुख कारण बन गया है। अज्ञेय ने अपनी कविताओं में इस विषय पर बराबर चिंतन एवं मनन किया है।

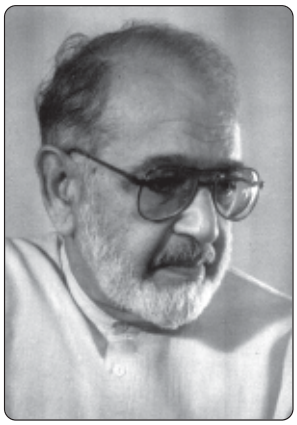

पर्यावरण असंतुलन के कारण आज प्रदूषण इस कदर बढ़ गया है कि मानव–जीवन दुस्तर होता जा रहा है। 'भर गया गगन में धुआँ' कविता में अज्ञेय लिखते हैं, 'जो था, सब हमने मिटा दिया/ इस आत्मतोष से भरे कि उसके हमीं बनानेवाले हैं/ भर गया गगन में धुआँ हमारे कहते–कहते/ स्वर्ग धरा पर हम ले आने वाले हैं!' मानव का स्वयं को सृष्टि का एकमात्र सृष्टा समझना ही सभी समस्याओं का आधार है। प्रकृति तथा अन्य को सर्वथा पृथक् एवं विरोधी सत्ता मान लेने पर उसका अवधारणात्मक वशीकरण एवं दोहन अत्यंत सरल हो जाता है। मानव का दर्प एवं अहंकार इस धरती के जीवन को चौपट करता जा रहा है। मानव–जीवन वर्तमान में जिन समस्याओं से जूझ रहा है, उन्हीं में से एक समस्या वायु–प्रदूषण की भी है। औद्योगिक युग के आगमन के बाद से लेकर अब तक जिस तेजी से कल–कारखाने खुले हैं, उनकी चिमनियों द्वारा निकलने वाले धुएँ से उतनी ही तेज गति से वायु भी प्रदूषित हुई है। महानगरों में चूँकि कल–कारखाने एवं वाहन अधिक हैं, अत: वहाँ की स्थिति और भी भयावह है।

अधिकाधिक लोग श्वास संबंधी रोगों से ग्रस्त हैं, इसके अतिरिक्त रासायनिक वर्षा का खतरा अलग से बना रहता है। 'बावरा अहेरी' में अज्ञेय ने दिखाया है कि मानव द्वारा निर्मित कृत्रिमता अर्थात् मोटरों, चिमनियों आदि से निकलने वाले धुएँ का आतंक इस कदर बढ़ गया है मानो वो बावरा अहेरी (सूर्य) को ही छिपा लेगी— गोधूली की धूल को, मोटरों के धुएँ को भी/ पार्क के किनारे पुष्पिताग्र कर्णिका की आलोक–खची/ तन्वि रूप–रेखा को/ और दूर कचरा जलानेवाली कल की उद्दंड चिमनियों को, जो/ धुआँ यों उगलती हैं मानो उसी मात्र से अहेरी को हरा देंगी! इस प्रकार का वायु–प्रदूषण किसी भी प्राकृतिक परिवेश के लिए अभिशाप से कम नहीं है।

मानव आज प्रकृति से कटता जा रहा है और यांत्रिकता के निकट संपर्क में आता जा रहा है, जबकि आवश्यकता दोनों में संतुलन बनाए रखने की है। 'औद्योगिक बस्ती' में कवि ने एक ऐसी बस्ती का चित्रण किया है, जो पहाड़ियों से घिरी हुई है, जिसकी नैसर्गिक सुंदरता देखते ही बनती है, किंतु वहाँ पर उद्योग लगने से वहाँ की नैसर्गिकता लगभग नष्ट–भ्रष्ट सी हो गई है। मानव ने जिस आशा के साथ औद्योगीकरण को अपनाया, अब वही उसकी स्वतंत्रता में बाधक बन गया है—'पहाड़ियों से घिरी हुई इस छोटी–सी घाटी में/ ये मुँहझौंसी चिमनियाँ बराबर/ धुआँ उगलती जाती हैं।/ भीतर जलते लाल धातु के साथ/ कमकरों की दु:साध्य विषमताएँ भी/ तप्त उबलती जाती हैं।/ बँधी लीक पर रेलें लादे माल/ चिहुँकती और रँभाती अफराए डाँगर–सी/ ठिलती चलती जाती हैं।/ उद्यम की कड़ी–कड़ी में बँधते जाते मुक्तिकाम/ मानव की आशाएँ ही पल–पल/ उसको छलती जाती हैं।'

उद्योगों के कारण आज कई तरह के भूमि, वायु, जल, ध्वनि आदि प्रदूषण फैल रहे हैं। विकास की जो आशा की गई थी, वह सब बेकार हो गई। मानव ने अपने को बंधन में डालने के लिए स्वयं यह जाल बुना है और अब अपनी ही आशाओं द्वारा छला जा रहा है। किंतु इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि कवि विकास या विज्ञान विरोधी है और न ही वे हमें वन–संस्कृति या आश्रम–संस्कृति की ओर लौटाना चाहते हैं, वे तो बस इन सबमें संतुलित अनुपात चाहते हैं, ताकि हम विकास तो करें पर प्रकृति की बलिवेदी पर नहीं। इसी संदर्भ में अज्ञेय के लेखन की प्रशंसा करते हुए रामस्वरूप चतुर्वेदीजी लिखते हैं, 'उनकी मुख्य दृष्टि इसी ओर रही है कि मनुष्य की अनुभूति और उसके व्यक्तित्व का क्षरण न

हो, खतरा चाहे यंत्र का हो चाहे सर्वसत्तावादी पद्धति का, महानगर का या कि प्राविधिक जीवन में अंतर्प्राप्त गति का। सबसे बड़ी बात यह है कि मनुष्य को मनुष्य के खतरे से बचाना है। इस सबका उपाय एक ही है—मनुष्य, प्रकृति और यंत्र के बीच उचित अनुपात विकसित करना। मनुष्य न यंत्र से क्षरित हो और न मनुष्य से ही। नए समाज और संसार की यह केंद्रीय समस्या है, और हम पाते हैं कि अज्ञेय ने अपने युग की इस मूल समस्या को ठीक-ठीक पहचाना है; स्वतंत्र, स्वायत्त तथा सर्जनशील व्यक्तित्व के विकास पर बराबर बल दिया है।'

अज्ञेय ने अपनी रचनाओं में प्रकृति, पर्यावरण और संस्कृति को एक साथ जोड़ दिया है। वन-राजियों से आच्छादित नंदा भारतीय संस्कृति एवं अस्मिता की प्रतीक है। अज्ञेय को राष्ट्र की, संस्कृति की चिंता है, नष्ट होती वन-संपदा एवं पर्यावरण-असंतुलन के प्रति भी वे चिंतित हैं। उन्हें पता है कि वनों के कटने और औद्योगिक बस्तियों के बसने से मानव जीवन में विकास नहीं बल्कि विनाश पनपेगा। इसलिए 'नंदा देवी' (शृंखला-२) में लिखते हैं, 'वहाँ दूर शहर में/ बड़ी भारी सरकार है/ कल की समृद्धि की योजना का/ फैला कारोबार है,/ और यहाँ इस पर्वती गाँव में/ छोटी-से-छोटी चीज की भी दरकार है/ ···आज ठेकेदार को/ हमारे पेड़ काट ले जाने दो,/ कल हाकिम/ भेड़ों के आयात की/ योजना सुनाने आवेंगे/ आज बच्चों को/ भूखा ही सो जाने दो/···कुछ भूख, कुछ अज्ञान, कुछ लोभ में/ अपनी संपदा हम रहे हैं खोते।/ जिंदगी में जो रहा नहीं/ याद उस की/ बिसूरते लोक-गीतों में/ कहाँ तक रहेंगे सँजोते।' अर्थात् सरकार समृद्धि के लिए बड़ी-बड़ी योजनाएँ बनाती है, पेड़ों के बदले सुनहरे भविष्य का सपना दिखाती है, जबकि वास्तविकता इससे बिल्कुल अलग है। विकास के नाम पर हम अपनी वन-संपदा खोते जा रहे हैं। वन हमारे पर्यावरण के संचालक और संरक्षक हैं। ये धरती के शृंगार हैं, जलधाराओं तथा मिट्टी के कटाव को रोकते हैं। ये प्राणवायु देते हैं, बहुमूल्य लकड़ियाँ, औषधियाँ, ईंधन आदि प्रदान करते हैं। इसी में हमारा जैव-वैविध्य संरक्षित है। प्रदूषण दूर करने में भी इनकी प्रमुख भूमिका है।

आज हमारा वातावरण विविध प्रकार के भौतिक एवं सांस्कृतिक प्रदूषणों से भर गया है, जिसे देखकर अज्ञेय व्याकुल हो उठते हैं। 'भवंती' की एक टीप में उन्होंने लिखा है, 'पहले था तरल वाष्प, जिसमें था रेडियम और थी हाइड्रोजन; रेडियम से जीव-तत्त्व बना, हाइड्रोजन से पानी; जीव-तत्त्व से उस पानी में मछली। इस प्रकार रेडियम से विकास की कई सीढ़ियों के बाद आई मछली, फिर मछली से उसी प्रकार विकास की कई और सीढ़ियों के बाद आविर्भूत हुआ मनुष्य। इस प्रकार समीकरण बदल गया, पानी और मिट्टी नहीं, मछली और मनुष्य, रेडियम तब तक प्रायः चुक चला था, पर मनुष्य ने फिर रेडिमधर्मी-पदार्थ फोड़ निकाले और सारी मछलियों को उन से दूषित और विषाक्त कर दिया। हाँ, यहीं पर हम आज हैं।

नवोदित रचनाकार। २३ अक्तूबर, १९८१ को जन्म। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में लेख प्रकाशित। शांतिनिकेतन में शोधरत।

अज्ञेय वनों के महत्व को अच्छी तरह समझते हैं। इसीलिए पेड़ों के कटने से दुखी होते हैं। हमारी वन-संपदा के साथ-साथ लोक-संस्कृति के नष्ट होने से भी वे चिंतित हैं। ध्यातव्य है कि कवि ग्राम या नगरीय सभ्यता एवं संस्कृति में द्वंद्व नहीं चाहता, बल्कि वह संपूर्ण मानव-सभ्यता का हिमायती है। अतः जहाँ भी वे मानव-जीवन को संकट में पाते हैं, उसके खिलाफ आवाज उठाते हैं। कवि की समग्र संवेदना मानव और मानवेतर सृष्टि के बीच समुचित तालमेल के बीच टिकी है। वह जानता है कि सभी एक-दूसरे पर आश्रित हैं और एक के मिटते ही दूसरे के अस्तित्व पर भी विनाश का खतरा बढ़ जाता है। कवि की यह चिंता 'नंदा देवी' (शृंखला-६) में दिखी है—'नंद,/ जल्दी ही-/ बीस-तीस-पचास बरसों में/ हम तुम्हारे नीचे एक मरु बिछा चुके होंगे/ और तुम्हारे उस नदी-धौत सीढ़ी वाले मंदिर में/ जला करेगा/ एक मरु-दीप!' नंदादेवी जल की स्रोत है, जिसके शिखर से अनेक नदियाँ, झरने आदि बहती हैं। इसके सूखने से हरी-भरी धरती भी सूख जाएगी और उसके स्थान पर होगा मरुथल। मानव का प्रकृति के साथ सामंजस्य पूरी तरह टूट गया तो यह 'मरु-दीप' मानव-सभ्यता का भी 'मरु-दीप' बन जाएगा। अतः मानव को याद रखना होगा कि 'प्रकृति रक्षति रक्षिता' अर्थात् प्रकृति भी उसी की रक्षा करती है, जो उसकी रक्षा करता है अन्यथा यह अपने विनाश का बदला अवश्य लेती है।

महानगरों में पनपने वाली आधुनिक सभ्यता का उदाहरण है, 'महानगर : रात'। आज की उपभोक्तावादी संस्कृति में मानव-मन आधुनिक सुख-सुविधाओं एवं फैशनपरस्ती का गुलाम हो गया है। वह अपनी ही संकल्पना और निर्मिति-सभ्यता का दास हो गया है। वह अपनी पहचान खोता जा रहा है तथा सभी सहज मानवीय मूल्य भी नष्ट होते जा रहे हैं। अज्ञेय लिखते हैं, 'असंदिग्ध ये सभी सभ्यता के लक्षण हैं/ और सभ्यता बहुत बड़ी सुविधा है सभ्य, तुम्हारे लिए!/ किंतु क्या जाने ठोखर खा कहीं रुके वह,/ आँख उठाकर ताके और अचानक

तुमको ले पहचान-/अचानक पूछे धीरे-धीरे-धीरे/हाँ, पर मानव/ तुम हो किस के लिए? विकास की इस अंधी दौड़ में मानव ज्यों-ज्यों आगे बढ़ता जा रहा है, वैसे-वैसे अपने संस्कारों और परंपराओं से दूर होता जा रहा है। वह संवेदनहीन हो गया है। सुख-सुविधाओं में मग्न वह हर उस व्यक्ति को उपेक्षा भरी दृष्टि से देखता है, जो उसी का प्रतिरूप है।

उत्तर-आधुनिकता के इस दौर में उपभोक्तावादी संस्कृति सब पर हावी है, जो बेतहाशा भोग में विश्वास करती है। यह कृत्रिम आवश्यकताएँ उत्पन्न कर उसकी पूर्ति के लिए लोगों को आकर्षित करती है। इस प्रक्रिया में थोड़े से मजबूत व्यक्तियों या राष्ट्रों द्वारा अधिकांश कमजोर व्यक्तियों या राष्ट्रों का शोषण तो होता ही है, साथ ही प्राकृतिक संसाधनों का भी भरपूर दोहन होता है। पश्चिम चिंतन के केंद्र में मनुष्य प्रकृति का स्वामी हो सकता है, प्रकृति को दासी बनाकर दुह सकता है, पर भारतीय चिंतन के केंद्र में मनुष्य से ज्यादा प्रकृति है तथा अज्ञेय का इस प्रकृति से, अपनी परंपरा, सभ्यता एवं संस्कृति से बहुत गहरा लगाव है।

आज हमारा वातावरण विविध प्रकार के भौतिक एवं सांस्कृतिक प्रदूषणों से भर गया है, जिसे देखकर अज्ञेय व्याकुल हो उठते हैं। 'भवंती' की एक टीप में उन्होंने लिखा है, 'पहले था तरल वाष्प, जिसमें था रेडियम और थी हाइड्रोजन; रेडियम से जीव-तत्त्व बना, हाइड्रोजन से पानी; जीव-तत्त्व से उस पानी में मछली। इस प्रकार रेडियम से विकास की कई सीढ़ियों के बाद आई मछली, फिर मछली से उसी प्रकार विकास की कई और सीढ़ियों के बाद आविर्भूत हुआ मनुष्य। इस प्रकार समीकरण बदल गया, पानी और मिट्टी नहीं, मछली और मनुष्य, रेडियम तब तक प्राय: चुक चला था, पर मनुष्य ने फिर रेडिमधर्मी-पदार्थ फोड़ निकाले और सारी मछलियों को उन से दूषित और विषाक्त कर दिया। हाँ, यहीं पर हम आज हैं। नहीं, इससे भी थोड़ा आगे, क्यों मनुष्य सिर्फ मछलियों को नहीं, सारे वायुमंडल को और सारी धरती को विषाक्त कर रहा है—हवा को, नमी को, मिट्टी को और पत्थर को, बीज को और वनस्पति को और स्वयं मनुष्य की अस्थि-मज्जा को।'

अज्ञेय की यह चिंता वर्तमान में हम सभी की चिंता है। आज प्रदूषण केवल बहस का विषय नहीं रह गया, बल्कि हमारे दैनिक जीवन का अंग बन गया है। मनुष्य जिस तेजी से एक-दूसरे के संपर्क में आ रहे हैं, उसी तेजी से उनमें पारस्परिक संप्रेषण एवं आपसी समझदारी का भी अभाव होता जा रहा है। ऐसे में अज्ञेय का लेखन, उनकी कविताएँ हमें इन विषयों पर गहराई से सोचने को विवश करती हैं, एक नई दृष्टि प्रदान करती हैं, ताकि इससे उबरने का कोई विकल्प तलाशा जा सके।

बमडिया नीयर पोस्ट ऑफिस
पोस्ट-सुंदरचक, वर्धमान-७१३३६० (प.बं.)
दूरभाष : ८४३६७९८२८२

लघुकथा

मैं जो हूँ, हूँ!

● **अशोक गुजराती**

योगेशजी मुंबई से दिल्ली आए थे। मंत्रालय में उनका एक महत्त्वपूर्ण काम था। जब हो गया तो शाम को खुशी-खुशी मार्केटिंग के लिए निकले कि परिवार के लिए कुछ खरीद लिया जाए। महाराष्ट्र सदन के मैनेजर ने उन्हें करोल बाग का पता दे दिया।

वहाँ घूमते रहे। चलते-चलते पत्नी और बच्चों के वास्ते छोटी-मोटी चीजें काफी सस्ती मिलती देख लेते रहे। फिर आया जूतों-चप्पलों का बाजार। उन्होंने सोचा कि अपने पहने हुए जूते निवृत्त होने को उतावले हैं, नए लेने में कोई हर्ज नहीं है।

जूतेवाले से एक जोड़ा पसंद कर पहनकर देखा। कीमत उनके यहाँ से बहुत कम थी। बाएँ पैर में जूता कुछ तंग सा आ रहा था। उनकी शिकायत पर जूतेवाला बोला, 'सर, जैसा भी है, हम उसको अभी ठीक नहीं कर सकते।'

उन्होंने मन बना लिया कि ले लिया जाए। उससे कहा, 'दे दो। मैं अपने शहर के चमार से दुरुस्त करवा लूँगा।'

जूतेवाला भड़क गया, 'चमार किसको कह रहे हो तुम···हम मोची हैं मोची!'

वे सकपका गए कि मुझसे क्या गलती हो गई ऐसी! शांत होकर उसको समझाया कि 'भाई, मैं महाराष्ट्र से हूँ, वहाँ सब मोची को यही कहते हैं। फिर भी यदि आपको बुरा लग गया हो तो मैं माफी माँगता हूँ।'

उनके सौम्य एवं शालीन व्यक्तित्व और क्षमा माँगने के कारण दुकानदार का गुस्सा भी ठंडा पड़ गया। उन्होंने पैसे चुकाए, जूतों का डिब्बा लिया, लेकिन निकलते-निकलते उसे नसीहत देना न भूले, 'भाईसाहब, अपनी जो भी जाति है, उसके लिए शर्मिंदा होने या विशेष शब्द अपनाने के बजाय जो है, उसे अभिमान से स्वीकारो और उसी बलबूते दुनिया से लड़ो!'

प्रत्युत्तर में उसके चेहरे पर मुसकान देख वे आश्वस्त हुए।

बी-४०, एफ-१, दिलशाद कॉलोनी, दिल्ली-११००९५
दूरभाष : ९९७१७४४१६४

इधर बुडा, उधर पेस्ट

● रंजन कुमार सिंह

मैं यहाँ न आया होता तो शहर की सुंदरता का मेरा पैमाना शायद कुछ और होता। यहाँ आने से पहले मुझे अनेक मित्रों ने बताया था—बड़ा ही खूबसूरत शहर है वह। फिर भी यहाँ आए बिना शहर के सौंदर्य की परिकल्पना असंभव थी। और अब जब मैं यहाँ पहुँच चुका हूँ, लगता है मानो आँखें अँजुरी सी बँध गई हैं और मैं यहाँ की सुषमा पीता जा रहा हूँ, पीता ही जा रहा हूँ। सौंदर्य के बखान में मैं यह बताना तो भूल ही गया कि मैं हंगरी की राजधानी बुडापेस्ट में हूँ। इसे पेस्टबुडा भी कहूँ तो गलत नहीं होगा। दरअसल मेरी एक ओर पेस्ट है और दूसरी ओर बुडा। बीच में मैं जहाँ खड़ा हूँ, उसके नीचे से दानेब नदी बहती है। वैसे दानेब ग्रीक नाम है। इस नदी को दुनाव, दोनाऊ, दूनो, दुनेरिया आदि अन्य नामों से भी पुकारा जाता है। दानेब से मैं पहले ही मिल चुका हूँ वियना में, बल्कि और भी पहले जर्मनी के ब्लैक फॉरेस्ट में। यूरोप के दस देशों से गुजरनेवाली इस नदी पर चार देशों की राजधानियाँ बसी हैं। आस्ट्रिया तथा हंगरी की राजधानियों क्रमशः वियना एवं बुडापेस्ट के अलावा स्लोवाकिया की राजधानी ब्रातिस्लावा और सर्बिया की राजधानी बेल्ग्राद की भी यह शोभा है। हालाँकि इसका बड़ा भाग रोमानिया से होकर गुजरता है, पर इस पर बसा सबसे बड़ा शहर बुडापेस्ट ही है।

सन् १८७३ से पहले बुडा और पेस्ट दो अलग-अलग नगर हुआ करते थे। १८७३ में इन दोनों के साथ ओबुडा नाम के एक अन्य नगर को मिलाकर इनका नाम बुडापेस्ट रख दिया गया। ओबुडा दरअसल पुराने बुडा को ही कहते थे। इससे पहले १८४९ में चेन ब्रिज के निर्माण के साथ ही बुडा और पेस्ट के बीच आवाजाही के लिए स्थायी प्रबंध हो चुका था, जबकि पहले यह काम पंटून पुल से हुआ करता था। मैं इसी चेन ब्रिज पर खड़ा हंगरी के संसद् भवन को निहार रहा हूँ। यह नयनाभिराम भवन दानेब के पूर्वी तट यानी पेस्ट में स्थित है और दानेब के पश्चिमी तट यानी बुडा स्थित पहाड़ी पर निर्मित है शाही महल। यह पहाड़ी क्या है, पूरा दुर्ग है। जाना भी जाता है यह कैसल हिल के नाम से ही। जिस तरह अपनी दिल्ली आक्रांताओं का शिकार होती रही, वैसे ही बुडा और पेस्ट पर भी बाहरी हमले लगातार होते रहे। मध्यकाल में इसे हूण, तातार और तुर्की आक्रमण झेलने पड़े तो आधुनिक काल में रूस और जर्मनी के। वैसे मूल रूप से इस क्षेत्र में मेग्येर कबीले के लोग रहते आए हैं। मुझे याद है, बचपन में हंगरी के बेहद आकर्षक स्टांप को पाने के लिए हम लालायित रहते थे और उनपर हंगरी के बदले मेग्यार पोस्टा लिखा देखकर हमें हैरत भी होती थी। मेरे खजाने में मेरे पिता का भेजा वह पोस्टकार्ड आज भी सुरक्षित है, जिसे उन्होंने हमें बुडापेस्ट से लिखा था।

लेखक व फिल्म निर्माता रंजन कुमार सिंह का हिंदी और अंग्रेजी पर समान अधिकार है। 'अजनबी शहर अजनबी रास्ते' *(यात्रा-संस्मरण)*, 'बंद खिड़की से टकराती चीख' *(कहानी-संग्रह)* तथा 'सरहद जीरो मील' उनकी महत्त्वपूर्ण हिंदी पुस्तकें हैं। अंग्रेजी में कई शोधपरक पुस्तकों का लेखन। देश-विदेश में भारतीय कला और संस्कृति पर व्याख्यान। संप्रति वेदांत पर गहराई से अध्ययनरत।

बुडापेस्ट आकर पिताजी की याद हो आना स्वाभाविक है। दो बार वे यहाँ आ चुके थे। पहली बार वे यहाँ आए किसी श्रम सम्मेलन में भाग लेनेवाले भारतीय प्रतिनिधिमंडल के अगुआ बनकर और दूसरी बार यहाँ पहुँचे राष्ट्रपति डॉ. शंकर दयाल शर्मा के साथ भारतीय प्रतिनिधिमंडल के सदस्य के रूप में। हर बार वे इस शहर को लेकर भिन्न अनुभव से गुजरे, पर दोनों ही बार उन्होंने इस शहर को उतना ही सुंदर पाया। उन्हीं के शब्दों में एक नदी के दो किनारों को जोड़ता हुआ शहर बुडापेस्ट, जहाँ जिंदगी का उफान शराब की बोतल में नहीं, बौद्धिक अनुराग में है। यहाँ पहुँचकर मेरी चेतना थम जाती है, कल्पना को आकार मिल जाता है। नए परिवेश की गुदगुदाहट तन-मन को किंचित् सरसता प्रदान करती है।'

हंगरी के संसद् भवन का उल्लेख करते हुए उन्होंने लिखा है—'हंगरी का संसद् भवन भव्यता और कलात्मकता का मिला-जुला रूप है। हम अपने संसद् भवन पर नाज करते हैं, लेकिन इस भवन के हॉल, कमरे तथा जीने, सबके सब हमें पीछे छोड़ रहे थे। कमरों की दीवारों तथा छज्जों की चित्रकारी भी गजब की थी, आँखें हटती ही नहीं थीं।'

भारत का एक सांसद, वह भी राष्ट्रपतिजी के साथ भारतीय प्रतिनिधिमंडल का सदस्य, जब अपने संसद् भवन को हंगरी के इस संसद् भवन से उन्नीस पा रहा हो, तो मुझ जैसा साधारण सैलानी इसके रूप-जाल में भला क्यों न फँसता? पिछले दिन राह चलते मैं इस भवन को देखकर ठिठक गया था और मेरी आँखें बरबस उसपर टिकी रह गई थीं। मुझे लगा कि हो न हो, यह यहाँ का संसद् भवन ही होगा, फिर भी

मैंने किसी राहगीर से पूछ लिया, सामने क्या है यह? अंग्रेजी और हिंदी दोनों से अनजान इस राहगीर ने मेरा आशय समझकर मुझे संक्षिप्त सा उत्तर दिया, 'ओरसाघाज'। तो यह संसद् भवन नहीं है? मैंने मन-ही-मन सवाल किया। यह तो मुझे बाद में मालूम चला कि ओरसाघाज यहाँ के संसद् भवन को ही कहते हैं। 'ओरसाघाज' का अर्थ है—देश का घर। यह जानने के बाद मेरा मन फिर से वहाँ जाने को अधीर हो उठा। और अब मैं उसे निहारता हुआ चेन ब्रिज पर खड़ा था।

इससे पहले मैं कैसल हिल स्थित शाही महल देख आया था। शाही महल से थोड़ी ही दूर पर स्थित मत्यास गिरजाघर और उसके साथ में बना फिशरमेंस बैशुन यानी मछुआरों का गढ़ भी लोगों को खासा आकर्षित करते हैं। मत्यास गिरजाघर बुड़ा शहर के बनने, बिगड़ने और सँवरने का खामोश गवाह रहा है। हालाँकि सन् १०१५ में निर्मित इस गिरजाघर का आधिकारिक नाम 'चर्च ऑफ आवर लेडी' है, पर इसे आज सम्राट् मत्यास के नाम से ही जाना जाता है। सम्राट् मत्यास की दो शादियाँ इसी गिरजाघर में हुई थीं।

वैसे तो १३वीं शताब्दी में हुए मंगोल आक्रमण के बाद कैसल हिल पर आए शरणार्थियों ने यहाँ निर्माण कार्य आरंभ कर दिया था, पर १५वीं शताब्दी में सम्राट् मत्यास तथा वेट्रिक्स के विवाह के बाद कैसल हिल ने स्वर्ण युग का साक्षात्कार किया। उनकी दूसरी पत्नी नेपल्स की राजकुमारी बेट्रिक्स के साथ ही इटली के अनेक शिल्पकार भी यहाँ आए और उन्होंने अपनी कला की छटा कैसल हिल के चप्पे-चप्पे पर बिखेर दी। यही वह समय था कि जब शाही महल अपनी पूर्ण गरिमा तक पहुँचा। फिर एक समय ऐसा भी आया, जब तुर्की के ओटमान शासकों ने बुडा को नेस्तनाबूद कर दिया और यहाँ के बेशकीमती सामान लूट ले गए। हालाँकि उन्होंने जब दुबारा यहाँ चढ़ाई की तो बुडा को ओटमान साम्राज्य में ही मिला लिया। ये बुडा के बुरे दिन थे। शाही महल फौजी छावनी में तब्दील हो गया था और मत्यास गिरजाघर में नमाज पढ़ी जाने लगी थी। बाद में सशस्त्र बलों ने मिलकर बुडा की घेराबंदी की और उसे ओटमान शासकों से छुड़ाने में सफल हुए। इसके बाद वर्षों तक शाही महल तथा मत्यास गिरजाघर के पुनर्निर्माण का काम चलता रहा। इस बीच भी कभी इसे नाजी शासकों ने रौंदा तो कभी रूसी शासकों ने।

आज कैसल हिल की इमारतें और दानेब किनारे का क्षेत्र यूनेस्को के विश्व दाय की सूची में शुमार हैं। दानेब नदी के दो पाटों के बीच झूलते चेन ब्रिज पर खड़ा हुआ मैं कभी संसद् भवन को निहारता हूँ तो कभी शाही महल को। दानेब नदी में राष्ट्रपतिजी के साथ नौका विहार के दौरान उसके दोनों किनारों का परिदर्शन करते हुए पिताजी ने अनुभव किया था कि यह नदी बुडा और पेस्ट को अलग नहीं करती, बल्कि उन्हें जोड़ती है, जबकि इन दोनों उपनगरों को जोड़नेवाले चेन ब्रिज से गुजरते हुए मुझे लगता है, मानो मेरी यात्रा बुडा से पेस्ट की ओर नहीं होकर राजशाही से लोकतंत्र की ओर है। ओरसाघाज (देश का घर) कितना सार्थक नाम है यहाँ के संसद् भवन का। हमारे यहाँ तो संसद् भवन तक जाने के लिए राजपथ से ही गुजरना होता है, जनपथ से तो आप उसे दूर से ताकते रह जाते हैं।

सरकारी यात्रा होने के कारण पिताजी के लिए हंगेरियाई संसद् के दरवाजे खुले रहे थे। उन्हीं के शब्दों में—'अतिथिशाला और संसद् भवन का फासला लगभग सत्रह-अठारह किलोमीटर का है, जहाँ हमें कई बार जाना पड़ा। गार्ड ऑफ ऑनर के लिए, राष्ट्रपति से बातचीत करने तथा भोज में शामिल होने। हर बार बुडापेस्ट के मुख्य बाजारों से होकर राष्ट्रपति का काफिला निकलता था और लौटता था, और मैं देखता था कि सामान्य होते हुए भी यह असामान्य कारवाँ, जिसमें पच्चीस-तीस लंबी-लंबी गाड़ियाँ होती थीं, गुबार छोड़कर गुजर जाता था और लोग देखते रह जाते थे।'

जबकि मैं एक सामान्य भारतीय नागरिक के तौर पर यहाँ के इस अति विशिष्ट दृश्य का आनंद लेता हुआ संसद् भवन की तरफ बढ़ रहा हूँ। रास्ते में मैं संत स्टीफेंस चर्च से भी गुजरता हूँ और हीरोज स्क्वेयर से भी। इन रास्तों से गुजरते हुए समझना आसान हो जाता है कि किसी ने बुडापेस्ट को दुनिया का नौवाँ सबसे सुंदर शहर तो किसी ने इसे दुनिया का दूसरा सबसे उम्दा शहर क्यों माना है। निश्चय ही कोई शहर आपसे आप नहीं बन जाता, उसे बनाते हैं वहाँ के लोग। अपनी पहली हंगरी यात्रा में पिताजी ने अनुभव किया था कि देश या राष्ट्र बनता है अनुशासन से, निष्ठा से, लगन से और परिश्रम से। हंगरी में आकर पल-पल और पग-पग पर मुझे इसका भान हो रहा है।

और यही भान यदि मुझे भी यहाँ आकर हो रहा है तो कहा जा सकता है कि यह हंगरी का स्थायी भाव है, संचारी भाव नहीं। यह उसका चारित्रिक गुण है, महज संयोग या दिखावा नहीं। संसद् भवन को पास से देखना भी उतना ही आनंदित करता है, जितना कि उसे दूर से देखना। यह दिन के उजाले में भी उतना ही आकर्षित करता है, जितना कि रात की जगमगाहट में। मैंने इस भवन को दानेब के पार से भी देखा था और कैसल हिल से भी। बल्कि कैसल हिल के ऊपर से देखते हुए मुझे संसद् भवन से संत स्टीफेंस चर्च तक का नजारा इतना मुग्धकारी लगा था कि मैं पहाड़ी पर से पैदल ही उतरता चला गया, ताकि मैं इस नजारे का भरपूर आनंद ले सकूँ। वैसे कैसल हिल पर आने-जाने के लिए बस भी है और फनिक्युलर रेल भी। फनिक्युलर रेल दरअसल किसी ढलान पर रस्सियों से खींचा जानेवाला ट्राम है।

संसद् भवन का ९६ मीटर ऊँचा गुंबद शहर के अनेक भागों से देखा जा सकता है। हंगरी के लोग ९६ की संख्या को महत्त्वपूर्ण मानते हैं। हंगरी की स्थापना सन् ८९६ में हुई। सन् १८९६ में उन्होंने हंगरी का १०००वाँ स्थापना दिवस बड़ी धूमधाम से मनाया और उसी साल इस संसद् भवन का भी उद्घाटन हुआ। वैसे इसकी आधारशिला बुडा, ओबुडा एवं पेस्ट के विलय के बारह साल बाद सन् १८८५ में रखी जा चुकी थी। बताते हैं कि इसके निर्माण में लगभग ४ करोड़ ईंटों के साथ ४० किलो सोने की भी खपत हुई। इनमें रत्नों की तो गिनती ही नहीं। गुंबद के दोनों ओर एक समान विस्तार बोरोक एवं गॉथिक शैली में बनी इस इमारत को सुडौल बनाते हैं। कभी यह संसद् हमारे यहाँ की लोकसभा और राज्यसभा की तरह दो सदनों का हुआ करता था। रूसी अधीनता के समय इसका एक सदन भंग कर दिया गया और तब से यह एक-सदनी ही है। अब इसके एक हिस्से में राष्ट्रीय असेंबली बैठती है तो दूसरे का उपयोग संगोष्ठियों एवं सभाओं के लिए किया जाता है। यह हिस्सा मुझ जैसे सैलानियों के लिए भी खुला है, जो चार हजार फॉरिंट देकर इसकी भव्यता को अंदर से भी देख सकते हैं। लंबी कतार में लगकर मैं प्रवेश-पत्र खरीद लेता हूँ और साढ़े तीन घंटे बाद का समय मुझे मिल पाता है।

ओरसाघाज को देखने के लिए सुबह ८ बजे से लेकर शाम ६ बजे तक लोगों की कतार लगी ही रहती है। एक अनुमान के अनुसार लगभग पाँच लाख सैलानी हर साल इसे देखने पहुँचते हैं। हर रोज अंग्रेजी के अलावा हंगेरियन, फ्रेंच, हिब्रू, जर्मन, रूसी, इतालवी तथा स्पेनिश सहित आठ भाषाओं में भवन परिभ्रमण कराया जाता है। साढ़े तीन घंटे तक ओरसाघाज को बाहर से निहारते रहने के बाद मैं भव्य सीढ़ियाँ चढ़कर इमारत के मुख्य तल पर पहुँचता हूँ। इस भवन में कुल अट्ठाईस जीने हैं, जिनमें सत्रहवें जीने से सैलानियों को ऊपर ले जाया जाता है। साथ में होते हैं गाइड और गार्ड।

भीतर घुसते ही इस भवन की भव्यता आप से आप आपको बाँध लेती है। नीचे लाल कालीन बिछी है, रास्ते में अनेक मूर्तियाँ खड़ी हैं, खिड़कियों में कलात्मक काँच लगे हैं और दीवारों पर सुंदर भित्तिचित्र हैं। २६८ मीटर लंबा तथा १२३ मीटर चौड़ा यह भवन बाहर से जितना भव्य है, उतना ही आकर्षक यह भीतर से भी है। लंबाई में यह इमारत ब्रिटेन के संसद् भवन को पीछे छोड़ देती है। यहाँ के ६९१ कमरों में सैकड़ों कार्यालय स्थित हैं, जिनमें प्रधानमंत्री कार्यालय भी शामिल है। भवन में कुल दस दालान हैं। कुल २५२ मूर्तियाँ यहाँ की शोभा बढ़ाती हैं, जिनमें ९० मूर्तियाँ तो सिर्फ भवन के मुहान पर ही हैं। ये मूर्तियाँ हंगरी के शाही शासकों की तो हैं ही, इनमें हरेक पेशे का प्रतिनिधित्व करते आमजनों की प्रतिमाएँ भी हैं। आमजनों का प्रतिनिधित्व करनेवाली ये प्रतिमाएँ इसी कारण से यहाँ लगाई गई हैं कि यहाँ बैठनेवाले विधि-निर्माताओं के सामने आमजनों की तसवीर बराबर बनी रहे और वे उन्हें व उनके हितों को भुला न सकें। हमारे यहाँ तो महात्मा गांधी और बाबा आंबेडकर के बीच आमजन बिल्कुल ही खो गया है।

सुंदर गलियारों से होता हुआ मैं पुराने उपरी सदन में पहुँच जाता हूँ। यह सदन हाउस ऑफ मैग्नेट्स कहलाता था और हमारे यहाँ के राज्यसभा की तरह था। अब यह सदन भंग हो चुका है तो इस हॉल का उपयोग बैठकों, सम्मेलनों तथा भवन परिभ्रमण के लिए किया जाता है। गुंबद के दूसरे पार्श्व पर ठीक ऐसा ही हॉल है, जहाँ चुने हुए जनप्रतिनिधि यानी सांसद बैठते हैं। शाहबबूल से बनी मेज-कुरसियाँ अर्धवृत्त में व्यवस्थित हैं, जिन पर ४५३ लोग बैठ सकते हैं। वैसे हंगरी की ससद् के सदस्यों की संख्या सिर्फ १९९ ही है। अध्यक्ष को बैठने के लिए ऊँचाई पर आसन बना है। हंगरी की राजशाही के प्रतीक चिह्न यहाँ की दीवारों पर अंकित हैं। भूरे, लाल और हरे रंग के बीच चमकती स्वर्णिमा इस हॉल की शोभा में चार चाँद लगा देती है। यहाँ से निकलकर मैं लॉबी में आ जाता हूँ। यहाँ की दीवारों पर विभिन्न पेशों से जुड़े आमजनों का प्रतिनिधित्व करनेवाली प्रतिमाएँ हैं। इसके आगे गुंबद के ठीक नीचे राजमुकुट रखा है। वहाँ दो संतरियों का पहरा हमेशा बना रहता है। इसी गुंबद की दूसरी ओर हाउस ऑफ रिप्रेजेंटेटिव या यों कहें कि लोकसभा है। इसके पूर्व की ओर भव्य सीढ़ियाँ हैं, जो मुख्य द्वार से चली आ रही हैं। मुझे इससे आगे जाने की इजाजत नहीं है, पर मेरे पिता क्या इसी मार्ग से इस संसद् भवन में नहीं पधारे होंगे? छत पर दो बड़े भित्तिचित्र बने हैं। विशेष ग्रेनाइट पत्थरों से निर्मित आठ विशाल स्तंभ इसे सौंदर्य के साथ-साथ गरिमा भी प्रदान करते हैं। बताते हैं कि इनमें से एक-एक स्तंभ चार टन के ग्रेनाइट पत्थर से बना है। यह भी बताया जाता है कि इस विशेष ग्रेनाइट पत्थर के ऐसे स्तंभ पूरे विश्व में सिर्फ १२ ही हैं, जिनमें आठ यहाँ हैं।

संसद् भवन का परिभ्रमण करके जब मैं बाहर निकलता हूँ तो भी उसका चित्र अपनी आँखों में बसा पाता हूँ। पता नहीं क्यों, मुझे लगता है कि मैं चार आँखों से इस सौंदर्य एवं भव्यता का आनंद ले रहा हूँ, जिनमें से दो मेरे पिता स्व. शंकर दयाल सिंहजी की हैं।

१४०२ त्रिशूल, कौशांबी
गाजियाबाद-२०१०१०
दूरभाष : ९२१२३७०७११

पंछी अब बिरहा गाएँगे

● शैलेंद्र चौहान

ग्रीष्म

झंकृत होती हैं नाड़ियाँ
शिराओं का बढ़ जाता है चाप
तापमापी करता दर्ज तापमान
अड़तालीस डिग्री सैल्सियस
कविताएँ होती वाष्पित जल-सी
उत्सर्जित होती स्वेद-सी
फूटती मन और शरीर से
फैल जाती हैं ब्रह्मांड में

हँस रहे हैं इंद्रदेव

चरागाह सूखा है
निश्चिंत हैं हाकिम-हुक्काम

नियति मान
चुप हैं चरवाहे

मेघ नहीं घिरे
बरखा आई, गई

पशु विवश हैं
मुँह मारने को
किसी की खड़ी फसल में

हँस रहे हैं
आकाश में इंद्रदेव

थार का जीवट

अब तक तो
बहुत भला है
रेती में भी पौधे हैं
काँस, आक और
छोटे-छोटे लंबे पत्तों वाले
नन्हे 'जोजरू'

अब तक तो
बहुत भला है
लू की मार है मद्धम
है हवा भी थोड़ी नम

क्या होगा जो मेघ नहीं बरसे
सावन सूखा जाएगा
मरुधरा यह ताप से फट-फट जाएगी

वनस्पतियाँ सूखेंगी
नर-नारी, पशु-पक्षी सब
प्यास से तड़पेंगे
कितना कष्ट सहेंगे
आसार नहीं अच्छे हैं,

पर कितना जीवट है!
कहता है वह वृद्ध
विपदाएँ झेलीं
न जाने कितनी बार
बना महाप्रलयंकारी
यह थार।

जाने-माने कवि-कथाकार। २१ दिसंबर, १९५४ को खरगौन में जन्म। चर्चित रचनाओं में हैं– 'नौ रुपए बीस पैसे के लिए', 'श्वेतपत्र', 'ईश्वर की चौखट पर' *(कविता-संग्रह)*; 'नहीं यह कोई कहानी नहीं' *(कहानी-संग्रह)* तथा 'पाँव जमीन पर' *(कथा-रिपोर्ताज)*। संप्रति एक सार्वजनिक उपक्रम में उप महाप्रबंधक।

आतप

फिर फूले हैं
सेमल, टेसू, अमलतास
हुआ गुलमोहर
सुर्ख लाल
ताप बहुत है
अलसाई है दोपहरी
साँझ ढले
मेघ घिरे
धीरे-धीरे खग-मृग
दृग से ओट हुए
दुबके वनवासी
ईंधन की लकड़ी पर
रोक लगी जंगल में
वन-वन भटकें मूल निवासी
जल बिन
बहुत बुरा है हाल
तेवर ग्रीष्म के हैं आक्रामक
कैसे कट पाएँगे ये दिन
जन-मन, पशु-पक्षी
हुए हैं बेहाल!

पता नहीं था

ऐसे भी दिन आएँगे
पता नहीं था,
सूनी-सूनी दोपहरी में
सुधियों के जंगल घूमेंगे
ताल-तलैया, खेत-मड़ैया,
बेरौनक, बिछड़े हुए समैया
सूनी-सूनी आँखों में
सपनों का बिखराव
पंछी अब बिरहा गाएँगे,
पता नहीं था ऐसे भी दिन आएँगे।

अमलतास पीले-पीले छितराए थे
चंपा धीमी-धीमी महक रही थी
सेमल, टेसू दमक रहे थे,
अब तो बस
अँजुरी भर फूल भरे
गुलमोहर खड़ा है
बेगनबेलिया का रंग निखरा है।

अमराई की गंध खो गई
कोयल की मीठी
कूक नहीं,
भौंरे भी अब क्या गाएँगे

पता नहीं था
ऐसे भी दिन आएँगे।

३४/२४२, सेक्टर-३, प्रताप नगर,
जयपुर-३०२०३३ (राजस्थान)
दूरभाष : ७८३८८९७८७७

किन्नौर के जनजातीय गहने

● पवन चौहान

हिमाचल की धरती का हर कोना अपने में कोई-न-कोई विशेषता लिये हुए है। यहाँ आपको बहुत से इलाकों में ऐसे रीति-रिवाज, रस्में, परंपराएँ और लोक-संस्कृति के चेहरे मिल जाएँगे, जिनके आकर्षण में हम स्वत: ही खिंचे चले जाते हैं। इन्हीं इलाकों में एक है—जनजातीय जिला किन्नौर, जहाँ हम आज भी वही ठेठ रीति-रिवाज, परंपराएँ और लोक-संस्कृति को निहार सकते हैं, जिसे यहाँ के निवासी सदियों से सँजोते आए हैं और कड़ाई तथा ईमानदारी से इनका पालन भी कर रहे हैं। खासकर हम जिस विषय को लेकर बात करने जा रहे हैं, वह है यहाँ की औरतों का पहनावा और इनके आभूषण, जो किसी को भी अपने मोहपाश में बाँध लेता है।

चाहे उत्सव हो या त्योहार, जन्म की खुशी हो या फिर शादी का जश्न, वे लद जाती हैं गहनों से। गहने इतने कि चेहरा देख पाना मुश्किल हो जाता है। इस अजीबो-गरीब शृंगार की खूबसूरती देखते ही बनती है। यह शृंगार इनकी परंपरा का एक हिस्सा है और वर्तमान में इनकी संस्कृति की सजीवता की निशानी। इनका परंपरागत परिधान और ढेरों गहनों से किया गया शृंगार किसी को भी सम्मोहित करने में पूर्णतया सक्षम है। किन्नौर वैसे दो भागों में बँटा हुआ है—निचला किन्नौर और ऊपरी किन्नौर। निचले किन्नौर की सीमा ज्यूरी से आगे चौरा से शुरू होकर पूह तक जाती है, जबकि ऊपरी किन्नौर का हिस्सा पूह से शुरू होकर किन्नौर के अंतिम हिस्से तक जाता है। भौगोलिक स्थिति के अनुसार इन महिलाओं के गहनों में कम या ज्यादा अंतर पाया जाता है।

सिर से पाँव तक गहनों से लदी इन महिलाओं का शृंगार देखते ही बनता है। सिर पर प्रठेपण (टोपी), जो तीन-चार फूलों के रंग से सजी होती है, की बनावट गोलाकार चपटी होती है। माथे पर ही बँधा होता है सुंदर डिजाइन का चाँदी/सोने का पट्टा, जिसे 'तोनोल' कहा जाता है। इस पट्टे से पूरा चेहरा ही ढक जाता है। यह पट्टा निखालस सोने या चाँदी या फिर दोनों धातुओं के संयोग से सुंदर सा डिजाइन देकर बनाया गया होता है। नाक पर लौंग, बलाक, बालु (नथ) गहना पहना होता है, जो सोने का बना होता है। सोने को किन्नौरी बोली में 'जड़' और चाँदी को 'मुल' कहा जाता है। गले में लाल व हरे पत्थर से मिलकर बनी माला पहनी जाती है, जिसे 'तिंग शुलिक' कहा जाता है। 'तिंग' शब्द का प्रयोग लाल पत्थर के लिए किया जाता है। एक गहना है 'पटका चंग', यह भी गले में पहना जाता है, जो चाँदी के छोटे-छोटे गोल दानों से निर्मित होता है। गले पर ही सोने के तीन गोल बड़े दाने पहने जाते हैं, जिन्हें 'शोक पोटक' या 'त्रमोले' भी कहा जाता है। 'शोकपोटक' की एक माला से लेकर तीन मालाएँ तक हो सकती हैं। यह महिला के परिवार की आर्थिक स्थिति पर निर्भर करता है। शोक पोटक की खास बात यह है कि यह विवाहित महिला के गले में हमेशा लटका रहता है। इसे मंगलसूत्र की तरह पहना जाता है। इसे निचले किन्नौर की महिलाएँ काले धागे में पिरोकर या फिर काले या सफेद मोतियों की माला में पिरोकर पहनती हैं; जबकि ऊपरी किन्नौर की महिलाएँ इन तीन सोने के दानों को मूँगे या फिरोजे की माला में पिरोकर पहनती हैं। गले पर ही 'टुंग्मा' (चाँदी का चौरस या षट्कोण के आकार का) गहना पहना जाता है, जो दुलहन को बुरी नजर से बचाता है। गले में ही पहना जाता है 'चंद्रहार' या 'चंद्रमंगल', जो सारे

जाने-माने साहित्यकार। ख्याति-लब्ध पत्र-पत्रिकाओं में लेख, कविता, कहानियाँ प्रकाशित एवं शिमला दूरदर्शन और आकाशवाणी से कहानी और कविता पाठ। हिम साहित्य परिषद् (मंडी, हि.प्र.) द्वारा आयोजित कहानी प्रतियोगिता में कहानी 'शारदा' को द्वितीय पुरस्कार, साहित्य मंडल (नाथद्वारा) का सम्मान। संप्रति स्कूल शिक्षक (टी.जी.टी., नॉन-मैडिकल)।

गहनों में सबसे भारी और लंबा होता है। यह गले से लेकर पेट या घुटनों तक लंबा हो सकता है। यह पूरी तरह से चाँदी या चाँदी और सोने का बना रहता है। इसके अलग-अलग डिजाइन होते हैं।

अब कान की बात करें तो कान में 'कोनतई' (चाँदी और सोने की), 'झूमकू', 'खुल-कनतई' (चाँदी की) या फिर 'काँटे' (सोने के) पहने जाते हैं। 'कोनतई' में बालियों की संख्या १२-१५ से शुरू हो जाती है। आमतौर पर इनमें एक कान की कोनतई की संख्या २१ तक तो रहती ही है। इनकी ज्यादा संख्या महिलाओं की आर्थिक स्थिति पर निर्भर करती है। इनकी संख्या ज्यादा होने के कारण इन्हें कपड़े या डोरी के सहारे बाँधा जाता है। इनका सारा भार कपड़े या फिर डोरी में देकर दोनों कानों की डोरियों को सिर के ऊपर गाँठ देकर बाँध दिया जाता है। इस तरह से इतनी सारी बालियों को कान के ऊपर अनुशासनात्मक तरीके से सजाया जाता है। इनका भार लगभग ६० या ६५ तोले तक हो सकता है। इनका शृंगार बहुत ही खूबसूरती प्रदान करता है।

इसके साथ झालर की तरह (चाँदी के) अलग-अलग डिजाइन के गहने भी पहने जाते हैं, जिन्हें 'मुलु' कहा जाता है। इनका भार इतना ज्यादा होता है कि यह कान को चीर दे। इसलिए कान में पहने जानेवाले इन गहनों को भी डोरी के साथ सिर पर बाँधकर सहारा दिया जाता है। इसमें पीपल के आकार की छोटी-छोटी पत्तियाँ चाँदी की तारों में ऐसे पिरोई जाती हैं कि इनका एक गुच्छा जैसा तैयार हो जाता है। फिर ये सुंदर चाँदी के गुच्छे महिलाएँ अपने कानों के ठीक ऊपर बालों के सहारे पिन से अटकाती हैं। 'सौंगना' भी कान का ही एक आभूषण है, लेकिन इसे ऊपरी किन्नौर की महिलाएँ ही पहनती हैं। इस आभूषण के एक सिरे को दूसरे रिंग के सिरे के साथ जोड़कर एक खास लंबाई दी जाती है। इस गहने में फिरोजा जड़ा रहता है। इस आभूषण को महिलाएँ हुक के सहारे अपने बालों पर टिकाती हैं।

इन महिलाओं का एक अन्य आभूषण है 'कोंठी'। यह गहना कई मालाओं से मिलकर बना होता है। इसे गले में पहना जाता है। मुख्यत: चाँदी से बनी इन मालाओं में फिरोजा, मूँगा और अन्य कीमती पत्थरों का समावेश रहता है। चाँदी की इन मालाओं का अपना ही महत्त्व है। यह महिलाओं के शृंगार में चार चाँद लगाती है। ये मालाएँ छोटे-बड़े घेरे की होती हैं। इन सभी मालाओं को इकट्ठे इस तरह से व्यवस्थित किया जाता है कि एक माला दूसरी के ऊपर नहीं आती। पहले कान में 'मुरकी' (पत्ते के आकार की) भी पहनी जाती थी, लेकिन समय बदलने के साथ-साथ इसका प्रचलन भी धीरे-धीरे समाप्त हो गया है। इसकी जगह अब 'काँटे' पहने जाते हैं। हाथ में चूड़ियों के साथ सोने और चाँदी के कड़े पहने जाते हैं। सोने के कड़े को 'सुनंगो' और चाँदी के कड़े को 'धागलो' कहा जाता है। इसमें दोनों हाथों के कड़ों का भार कम-से-कम ४० तोला तो रहता ही है। पैरों की उँगलियों में चाँदी का गहना पहना जाता है, जिसे 'बांगपोल' कहा जाता है।

शादी आदि मौकों पर इनकी पोशाक भी खास तरह की होती है या यों कहा जाए तो गलत न होगा कि सही मायनों में पूर्ण किन्नौरी परिधान आपको विवाह, त्योहार या अन्य उत्सव में ही देखने को मिल सकता है। इस पारंपरिक परिधान में शामिल रहती है किन्नौरी टोपी, शॉल, दोहड़ू (एक लंबा गरम ऊन का शॉल, जिसे साड़ी की तरह फोल्ड करके गाची के साथ बाँधा जाता है), गाची (कमर में बाँधा जानेवाला कपड़ा) और मखमल की हरी जैकेट। आर्थिक सामर्थ्य के अनुसार कई औरतें चाँदी की गाची भी पहनती हैं। दोहड़ू को कंधों के बाएँ हिस्से में एक खास पिन से कसा जाता है, जो सोने और चाँदी के मिश्रण से बनी होती है। इसे 'पलपे' कहा जाता है। इसी तरह शॉल को कसने के लिए सोने और चाँदी से बनी (चतुर्भुज आकार की) पिन का इस्तेमाल किया जाता है, जिसे स्थानीय बोली में 'दीगरे' कहा जाता है। चोटी पर 'चाक' (सिर की चोटी पर पहना जानेवाला सोने का वृत्ताकार आभूषण) से किए गए शृंगार के तो क्या कहने! आर्थिक क्षमता के अनुसार चोटी पर एक से लेकर दस-पंद्रह तक चाक पहने जाते हैं।

किन्नौर की इन महिलाओं का यह शृंगार सजने-सँवरने की एक नई इबारत लिखता है। कोई भी इस पहनावे और शृंगार को देखकर अचरज में पड़ जाता है। सभी सोचते हैं कि ये महिलाएँ इतने सारे गहनों को चेहरे पर लिये कैसे देख पाती हैं, हर कार्य बिना बाधा के सहज तरीके से कैसे कर पाती हैं और खूब खुले मन से कैसे नाचती भी हैं? लेकिन यह सब इनकी आदत में शुमार है और ये महिलाएँ अपने हिसाब से खुद को इन गहनों के बीच से देखने का तरीका ढूँढ़ लेती हैं। पर चाहे कुछ भी हो, कई किलो भार के गहनों से अलंकृत इन महिलाओं द्वारा किया गया पारंपरिक शृंगार सचमुच ही किसी को भी अपने मोहपाश में बाँध लेता है। यह शृंगार इनकी समृद्ध संस्कृति का द्योतक है, जो आज के इस आधुनिकता के माहौल में भी इनकी संस्कृति को सजीवता प्रदान किए हुए है। तो फिर देर किस बात की है, आइए, चलते हैं किन्नौर की रमणीय वादियों में, यहाँ की लोक-संस्कृति और इसके प्राकृतिक सौंदर्य के गवाह बनने।

गाँव व डाक : महादेव, तहसील : सुंदरनगर,
जिला : मंडी- १७५०१८ (हि.प्र.)
दूरभाष : ०९४१८५ ८२२४२

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ

'साहित्य अमृत' का मई अंक प्राप्त हुआ। त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदीजी के स्वस्थ होने की खबर अच्छी लगी। संपादकीय कई खुलासे उजागर करता नजर आया। भ्रष्टाचार देश को बरबाद कर रहा है। संपादकीय बेहद महत्त्वपूर्ण और सूचनाप्रद है। लेख 'बीवी की छुट्टियाँ', 'विद्यालयों में नैतिक शिक्षा' अच्छे लगे। कहानी 'उधार का सुख', 'एक रुपए में खुशी', 'सुझाव'; व्यंग्य 'भूतपूर्व मंत्री से···', 'यमपुरी में हड़कंप' खूब पसंद आए। बाल-जगत् में कविता अच्छी लगी; मगर कहानी नहीं पढ़ने को मिली। यात्रा-संस्मरण में प्रेमपाल शर्मा की 'सौराष्ट्र की तीर्थ-परिक्रमा' बेहद पसंद आया। हमें भी घर बैठे इस यात्रा का आनंद मिला। साहित्यिक गतिविधियाँ बेहद जानकारी से भरी लगीं। ***—बद्रीप्रसाद वर्मा अनजान, गोरखपुर***

सिंहस्थ कुंभ पर केंद्रित 'साहित्य अमृत' का अप्रैल अंक मिला। सत्यजित रे की कहानी 'दो जादूगर' में सृजन का आनंद पाया। सुशील शर्मा, निर्जला शर्मा व राजेश कुमार व्यास की रचनाओं में कुंभ की पौराणिकता, ऐतिहासिकता व प्रकृति से जुड़ाव का आनंद मिला। कुंभ मिलन का पर्व है। प्रकारांतर से उसमें लोकहित भी समाहित है। बलदेव वंशी, अशोक 'अंजुम', विनोद चंद्र पांडेय की कविताएँ भी भाईं। सुरेश्वर त्रिपाठी की 'माटी की ढलान' में फूलों से भरे बगीचे में बाँसुरी की तान का स्पंदित स्वर सुनाई दिया। वासुदेव की 'गंध माधव' में जीवन की गाड़ी पटरी पर चलती दीखी। विजय कुमार 'सिंह' की 'निपूती' में बंद कोठरी में धूप का अहसास हुआ। गोपाल चतुर्वेदी, पूरन सरमा ने भी अच्छे व्यंग्य साधे, सार्थक लगे। ऋता शुक्ल का 'स्याम देश का भ्रमण' भी रुचिकर लगा। कुछ वासंती छटा भी मिली। मन प्रसन्न हुआ। सभी रचनाकारों एवं संपादक का सुखद, ज्ञानवर्धक जानकारी के लिए धन्यवाद।

—नंद किशोर तिवारी, वाराणसी

'साहित्य अमृत' के अप्रैल अंक में उज्जयिनी के सिंहस्थ पर पर्याप्त सामग्री इस महामेले की सांस्कृतिक गरिमा के अनुकूल ही है। कहानी 'दो जादूगर' सहित शेष रचनाएँ भी कुशल संचालन का परिचय देती हैं। साहित्य सुधा से आकंठ भर देता है हृदय-घर यह 'साहित्य अमृत'। लेखकों के सार्थक परिश्रम को पाठकों के आस्वाद के लिए परोसने में आपका नैपुण्य प्रशंस्य है। 'साहित्य अमृत' पढ़कर हम जैसे अनेक पाठक साहित्य सीखने का प्रयास करते हैं। विधाओं की ठीक पहचान के लिए स्पष्टता जरूरी है, वरना तो सारा युग ही अनेक गड्डमड्ड उलझनों में खोता जा रहा है।

—गोपाल माहेश्वरी, इंदौर

'साहित्य अमृत' के मार्च, अप्रैल एवं मई अंक प्राप्त हुए। मार्च के अंक में प्रबंध संपादक श्री श्यामसुंदर का जे.एन.यू. प्रकरण में दिया गया वक्तव्य सराहनीय है। यह सर्वधर्म समभाव की धरणी भारत है, इसमें राष्ट्रविरोधी तत्त्वों के लिए वस्तुत: कोई स्थान नहीं है। साथ ही संयुक्त संपादक श्री हेमंत कुकरेती की माताजी श्रीमती भागरथी कुकरेती के निधन के समाचार ने वस्तुत: हमें व्यथित किया। इस अंक में प्रो. राजेंद्र मिश्र की कहानी 'प्रतिकार' बहुत पसंद आई। अप्रैल के अंक में श्री हेमंत कुकरेती का संयुक्त संपादकीय वक्तव्य 'कुंभ के बहाने अमृत की खोज' बहुत सुंदर लगा, जल ही वस्तुत: इस धरा का, शरीर का प्राण तत्त्व है। सिंहस्थ एवं उज्जैन के संबंध में सभी आलेख रुचिकर एवं सराहनीय रहे। इसी अंक में संपादक श्री त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी की अस्वस्थता का समाचार मिला। दु:ख हुआ कि चिकित्सकों ने उन्हें लिखने को मना किया है, किंतु मई के अंक में उनका विचारोत्तेक संपादकीय पढ़कर आनंद आ गया, दु:ख का पूर्णत: परिहार हो गया। ***—दिनेशप्रसाद तिवारी, कानपुर***

'साहित्य अमृत' का मई अंक प्राप्त हुआ। 'कुछ अपनी, पनामा पेपर्स का खुलासा, वंदे मातरम् और 'भारत माता की जय' स्वतंत्रता संग्राम की देन' जैसा संपादकीय 'साहित्य अमृत' के पाठकों के लिए नए विचार लेकर उपस्थित हुआ है। आर.के. नारायण द्वारा प्रतिस्मृति लेख 'बीवी की छुट्टियाँ' पठनीय है। चंद्रकांत शास्त्री पचौली की कविता 'ओ राष्ट्र प्रहरी' भारतात्मा की पहचान के रूप में प्रस्तुत की गई है। नताशा अरोड़ा की कहानी 'फैसला' गहन चिंतन की कहानी है। प्रख्यात शिक्षाविद् श्री महेश शर्मा का आलेख 'विद्यालयों में नैतिक शिक्षा' अनिवार्य और पढ़ने योग्य है। कविता 'ढूँढ़ता हूँ उसका स्पर्श' सुनीता जैन की भावुक रचना है। लघुकथा के रूप में 'भीख' महत्त्वपूर्ण है। बहुत रोचक कहानी 'एक चिट्ठी ऐसी भी' श्रद्धा पांडेय की लेखनी का कमाल है। ओमप्रकाश शर्मा 'प्रकाश' की कविता 'कवि' भी चिर निर्वासित कवि की भावना की अभिव्यक्ति है। छंदा बैनर्जी का आलेख 'पश्चात्य समीक्षकों की दृष्टि में गीतांजलि' एक खोजपूर्ण रचना है। एक नई गजल जहीर कुरैशी की कलम को उजागर करती हुई है 'दुखड़े बदलते रहते हैं'। शशिभूषण सिंहल की कहानी 'उधार का सुख' अपने आप में रोचक है। अनुरक्ति चतुर्वेदी की 'उनकी कविता' पठनीय है। इसके साथ ही 'मान-सम्मान की प्रतीक—पाग' शिवनंदन कपूर की प्रतीकात्मक रचना है। 'सीख' लघुकथा में अनीता प्रभाकर कुछ नया कह रही हैं। कहानी 'एक सच स्त्री और स्त्री का' पठनीय है। गोपाल चतुर्वेदी की व्यंग्य रचना 'मुरगे का मुगालता' अपनी प्रभावपूर्ण भाषा में प्रस्तुत है। 'गुड बाय डार्लिंग' लघुकथा का अच्छा स्वरूप है। 'साहित्य अमृत युवा हिंदी कहानी प्रतियोगिता' के पुरस्कार-अर्पण समारोह का सचित्र वर्णन देखकर अच्छा लगा। 'अम्माँ है पहला स्कूल' होड़िल सिंह 'मधुर' की मनभावन बाल-कविता है। प्रेमपाल शर्मा का यात्रा-संस्मरण 'सौराष्ट्र की तीर्थ परिक्रमा' एक खोजपूर्ण रचना है। इन सबके अलावा ममता चंद्रशेखर, अनुप्रिया, ललित शर्मा, डी.एन. श्रीनाथ, शरद नारायण खरे, केशुभाई देसाई और सतीश चंद चतुर्वेदी जैसे अनेक लेखक इस अंक की शोभा बढ़ा रहे हैं। संपादक मंडल को बधाई। ***—कृष्ण मित्र, गाजियाबाद***

'साहित्य अमृत' ने अपने अंक में अमृत पर्व कुंभ को समुचित स्थान देकर साहित्य के अमृत से दूरस्थ स्थानों में स्थित पाठकों को भी सराबोर कर दिया। सीमा शर्मा, सिद्धार्थ शंकर गौतम, मोहन यादव तथा निर्मला शर्मा ने अपनी लेखनी के द्वारा साहित्य अमृत पत्रिका के माध्यम से अवंतिका (उज्जयिनी) पुरी के वैभव-विलास, क्षिप्रांगण के अमृत हुलास व महाकाल महेश्वर महाप्रसाद को जन-जन के सम्मुख प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया। साधुवाद। ***—चंद्रकांत पचौरी शास्त्री, चंपावत (उत्तराखंड)***

वर्ग पहेली (१२९)

अगस्त २००५ अंक से हमने **'वर्ग पहेली'** प्रारंभ की, जिसे सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं ज्ञान–विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा–

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ ३० जून, २०१६ तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें दो सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम–पते अगस्त २०१६ अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर **'वर्ग पहेली', साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२** के पते पर भेजें।

वर्ग पहेली (१२७) का शुद्ध हल

१ अं	त	२ रं	३ ग	■	४ ता	५ र	को	६ ल
ध	■	७ गी	ति	८ रू	प	क	■	घु
९ वि	१० मा	न	■	मा	■	११ म	१२ म	ता
१३ श्वा	न	■	१४ प	ल	१५ क	■	नो	■
१६ स	म	झौ	ता	■	१७ म	र्मा	ह	१८ त
■	नौ	■	१९ का	२० बु	ल	■	२१ र	न
२२ प	ती	२३ ला	■	लं	■	२४ प	ता	का
द	■	२५ द	२६ न	द	२७ ना	ना	■	स
२८ क	ठि	ना	ई	■	२९ च	ह	ब	च्चा

★ पुरस्कार विजेता ★

१. **श्रीमती सरिता दशोत्तर**
१२/२, कोमल नगर, बरबड रोड
रतलाम (म.प्र.)

२. **श्री दिनकर सहल**
डी-३/३४९८, वसंत कुंज
नई दिल्ली-११००६०

पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई !

वर्ग-पहेली १२७ के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं—सर्वश्री ब्रह्मानंद 'खिच्ची', विजयपाल सेहलंगिया (महेंद्रगढ़), सी.आर. नाहड़िया (नारनौल), फकीरचंद ढुल (कैथल), राजेंद्र कुमार सिंह, सुभाष आर्य, बी.डी. बजाज (दिल्ली), मोहन उपाध्याय (अजमेर), रुक्मणी संगल (पटियाला), रामप्रकाश राय (गोरखपुर), अनिल शर्मा (काशगंज)।

वर्ग पहेली (१२९)

बाएँ से दाएँ—

२. कोशिश जारी रखना (२,३)
५. बधाई (४)
६. देर का पकाया हुआ (२)
७. व्याख्या करनेवाला (४)
८. अग्नि उत्पन्न करनेवाला (३)
१०. झुँझलाना (३)
१२. युक्ति (४)
१३. शरीर (२)
१४. कुशल, सावधान (४)
१६. संदेह करना (२,३)

ऊपर से नीचे—

१. बूढ़े लोगों के लिए आदर-सूचक शब्द (२)
२. पुरानी प्रथा पर चलना (३,१,३,२)
३. जौहरी (५)
४. इज्जत बिगाड़ना (२,३)
५. विपत्ति (४)
८. जाँच, परीक्षा (५)
९. ठंडाई पैदा करनेवाला (५)
११. अकबर का पुत्र सलीम (४)
१५. स्मरण (२)

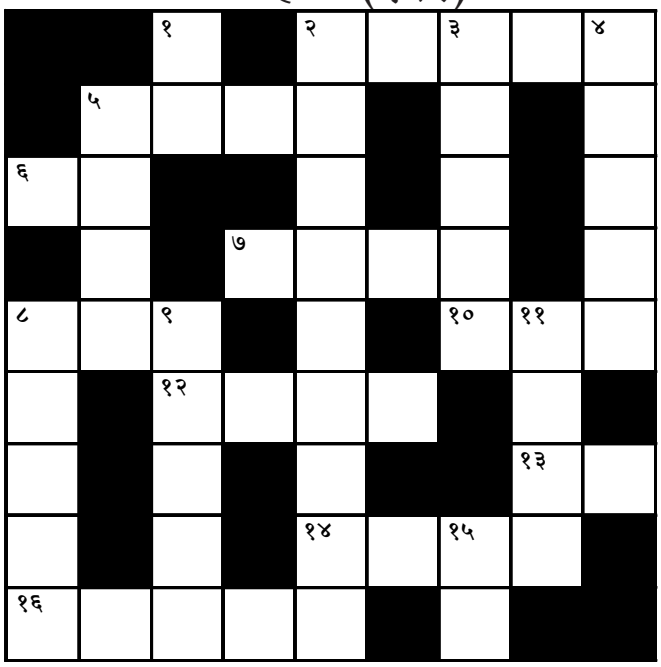

प्रेषक का नाम : .....

पता : .....

.....

.....

वर्ग पहेली (१२८) का हल अगले अंक में।

२७वाँ डॉ. हेडगेवार प्रज्ञा सम्मान समारोह संपन्न

२४ अप्रैल को कोलकाता में श्री बड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय के तत्त्वावधान में स्थानीय कलामंदिर सभागार में २७वाँ डॉ. हेडगेवार प्रज्ञा सम्मान समारोह संपन्न हुआ, जिसकी अध्यक्षता त्रिपुरा के राज्यपाल श्री तथागत राय ने की। मुख्य अतिथि सांसद श्री अर्जुनराम मेघवाल थे। इस अवसर पर पुस्तकालय की ओर से प्रसिद्ध मराठी साहित्यकार श्रीमती शुभांगी भडभडे को '२७वाँ डॉ. हेडगेवार प्रज्ञा सम्मान' से सम्मानित किया गया। सम्मान-स्वरूप उन्हें श्रीफल, शॉल, एक लाख रुपए की राशि एवं मानपत्र प्रदान किया गया। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सह-सरकार्यवाह डॉ. कृष्ण गोपाल मुख्य वक्ता थे। सुपरिचित गायक श्री ओम प्रकाश मिश्र ने 'देश के लिए जिएँ...' गीत गायन किया। संचालन डॉ. प्रेमशंकर त्रिपाठी ने किया तथा धन्यवाद श्री लक्ष्मीनारायण भाला ने ज्ञापित किया। ☐

सम्मान समारोह संपन्न

विगत दिनों पुणे में शेखावत परिवार द्वारा डॉ. दामोदर खड़से की अध्यक्षता, श्री नागराज मंजुले के मुख्य आतिथ्य एवं सुश्री कविता गुप्ता के विशिष्ट आतिथ्य में सर्वश्री हस्तीमल हस्ती को उनके हिंदी गजल संग्रह 'ना बादल ना दरिया जाने' के लिए, मराठी में रमण दणदिवे को 'काहूर' के लिए, उर्दू में उद्धव महाजन 'बिस्मिल' को 'गजल के साथ' के लिए, विजय चोरमारे को 'नष्ट कुछ भी नहीं होता' के मराठी अनुवाद 'काहीच नष्ट होत नसतं' के लिए 'सोनइंदर सम्मान २०१६' से तथा सुनील देवधर को 'सोनइंदर साहित्य महासागर सम्मान २०१६' से सम्मानित किया गया। ☐

बाल साहित्य सम्मान समारोह संपन्न

२८ अप्रैल को भोपाल में बाल कल्याण एवं बाल साहित्य शोध संस्थान के तत्त्वावधान में मानस भवन, श्यामला हिल्स स्थित सभागार में श्री राघवेंद्र शर्मा की अध्यक्षता में तथा सर्वश्री कमला सक्सेना, राजकुमार जैन व हरीश खंडेलवाल के मुख्य आतिथ्य में श्री तरुण कुमार दधीच को 'श्री जगदीश गुरु बाल साहित्यकार सम्मान' से सम्मानित किया गया। सम्मान-स्वरूप उन्हें अंगवस्त्र, श्रीफल, नकद राशि, स्मृति-चिह्न एवं प्रशस्ति-पत्र भेंट किए गए। ☐

श्री दुलीचंद जैन सम्मानित

१० अप्रैल को जलगाँव में रतनलाल सी. बाफना फाउंडेशन की ओर से आयोजित समारोह में सर्वश्री मोफतराज मुणोत, ईश्वरलाल जैन, दलुभाऊ जैन की उपस्थिति में श्री दुलीचंद जैन को 'आचार्य हस्ती अहिंसा अवार्ड' से सम्मानित किया गया। सम्मान-स्वरूप उन्हें एक लाख रुपए की राशि, स्मृति-चिह्न, प्रशस्ति-पत्र, शॉल और मुक्ताहार भेंट किए गए। श्री दुलीचंद ने सम्मान राशि को जरूरतमंद विद्यार्थियों के शैक्षणिक उत्थान के लिए समर्पित करने की घोषणा की। ☐

रचनाकार दंपती सम्मानित

विगत दिनों इंदौर में नागरी प्रचारिणी सभा के सभागृह में संस्था 'शंखनाद' एवं 'समकालीन स्पंदन' द्वारा आयोजित समारोह में पं. हरिराम द्विवेदी की अध्यक्षता, डॉ. जितेंद्र नाथ मिश्र के सारस्वत आतिथ्य एवं श्री ओम धीरज के विशिष्ट आतिथ्य में निरंतर रचनात्मकता एवं उपलब्धियों के लिए शॉल, श्रीफल, स्मृति-चिह्न देकर रचनाकार युगल श्री संदीप राशिनकर एवं श्रीमती श्रीति राशिनकर को सम्मानित किया गया। इस अवसर पर सर्वश्री विनय कूल, अमरनाथ शर्मा, नरोत्तम शिल्पी, वेद प्रकाश मिश्र, सिद्धनाथ शर्मा, रामजी नयन, बृजेश चंद्र पांडेय, रचना शर्मा, मंजरी पांडेय, राजेंद्र आहुति, संगीता श्रीवास्तव एवं नरेंद्रनाथ मिश्र ने काव्य पाठ किया। संचालन श्री धर्मेंद्र गुप्त 'साहिल' ने किया तथा धन्यवाद श्री सभाजीत शुक्ला ने ज्ञापित किया। ☐

सम्मान समारोह संपन्न

२२ अप्रैल को नई दिल्ली के गांधी शांति प्रतिष्ठान सभागार में श्रीमती शांति खरे की अध्यक्षता, डॉ. श्याम सिंह शशि के मुख्य आतिथ्य एवं डॉ. राम अवतार शर्मा के विशिष्ट आतिथ्य में '२२वाँ अ.भा. राजभाषा विकास एवं सम्मान समारोह' आयोजित किया गया, जिसके प्रथम सत्र में 'हिंदी : राजभाषा से राष्ट्रभाषा की यात्रा कब पूरी करेगी और कैसे?' विषय पर सर्वश्री मोहन स्वरूप भाटिया, भावना शुक्ला, इंद्रकुमार शर्मा, अवधेंद्र कुमार व हरीलाल मिलन ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री उमाशंकर मिश्र ने किया। द्वितीय सत्र में पूर्व राज्यपाल डॉ. भीष्मनारायण सिंह के मुख्य आतिथ्य में कानपुर महानगर विशेषांक के अलावा सर्वश्री कृष्ण गोपाल दीक्षित के 'धरती बचे प्रदूषण से', विनीत विद्यार्थी की तीन कृतियों 'फलित ज्योतिष एवं ग्रह शमन', 'तंत्र-मंत्र-यंत्र का इतिहास एवं उसकी उपादेयता' एवं 'चुंबक चिकित्सा का अन्य चिकित्सा पद्धतियों से संबंध', रामजीमल की 'भजन-पीयूष', सुधांश यादव 'साहिल' की 'खैर मकदम ही सही', डिंपल शर्मा की 'चिराग मुसकराते हैं', मुहम्मद लतीफ 'लुत्फी' की 'कदम-कदम चिराग जले' तथा सुरेश चंद्र निशिकर की 'इतिहास पुरुष डॉ. भीमराव अंबेडकर' पुस्तकों का लोकार्पण किया गया। इस अवसर पर सर्वश्री इंद्रकुमार शर्मा, अवधेंद्र कुमार, हुकम सिंह राजपूत, रविंद्र सिंह, भूपेंद्र प्रसाद सिंह, संजय कुमार प्रबंधक एवं ओंकारदास मानिकपुरी को 'राजभाषा भूषण सम्मान' से सम्मानित किया गया। ☐

श्री उमाशंकर मिश्र सम्मानित

विगत दिनों अमृतसर में समस्त आर्य समाज संस्थाओं द्वारा 'वैदिक आर्य सम्मेलन' में वैदिक संस्कृति के प्रचार-प्रसार, हिंदी व भारतीय भाषाओं व संस्कृतियों के विकास द्वारा सामाजिक उत्थान में विशिष्ट योगदान हेतु श्री उमाशंकर मिश्र को 'आर्य गौरव सम्मान' से सम्मानित किया गया। इस अवसर पर श्रीमती स्वराज ग्रोवर ने अपने विचार व्यक्त किए। साथ ही 'जन कल्याण संगठन' एवं 'मदनलाल ढींगरा वेलफेयर सोसायटी' द्वारा हिंदी भाषा के प्रति जागरूकता तथा साहित्य व संस्कृति के विकास हेतु सुदीर्घकालीन सेवाओं के लिए उन्हें 'राष्ट्र गौरव सम्मान' से सम्मानित भी किया गया। ☐

डॉ. सुशीलकुमार पांडेय 'साहित्येंदु' सम्मानित

विगत दिनों कादीपुर सुल्तानपुर में डॉ. सुशीलकुमार पांडेय 'साहित्येंदु'

को गोरखपुर की सामाजिक एवं साहित्यिक संस्था आधारशिला के संयोजन में डॉ. रूप कुमार बनर्जी की अध्यक्षता में मुख्य अतिथि प्रो. अशोक कुमार द्वारा उत्कृष्ट साहित्य कर्म के लिए 'रवींद्र सम्मान २०१६' से सम्मानित किया गया। ☐

श्री कृष्ण कुमार यादव सम्मानित

विगत दिनों गाजियाबाद में श्री कृष्ण कुमार यादव को उनके रफी अहमद किदवई नेशनल पोस्टल एकेडमी में गगन स्वर प्रकाशन के संपादक श्री ए.के. मिश्र द्वारा प्रशासन के साथ-साथ हिंदी साहित्य और लेखन के क्षेत्र में उल्लेखनीय सेवाओं के लिए 'गिरिराज सम्मान-२०१६' से सम्मानित किया गया। सम्मान-स्वरूप उन्हें शॉल, नारियल एवं प्रशस्ति-पत्र भेंट किए गए। ☐

श्रीमती सूर्यबाला सम्मानित

विगत दिनों मुंबई के राजभवन में महाराष्ट्र-दिवस के उपलक्ष्य में आयोजित समारोह में विभिन्न क्षेत्रों की प्रतिभाओं को सम्मानित किया गया। इस अवसर पर प्रख्यात हिंदी रचनाकार सूर्यबाला को उनके विशिष्ट अवदान के लिए राज्यपाल श्री चे विद्यासागर एवं मुख्यमंत्री श्री देवेंद्र फडनवीस द्वारा पुष्पगुच्छ, शॉल व रजत-पत्रिका देकर सम्मानित किया गया। ☐

काव्य गोष्ठी संपन्न

विगत दिनों भीलवाड़ा में साहित्यिक उन्नयन को समर्पित संस्था 'सामयिकी' द्वारा मासिक रचना गोष्ठी का आयोजन श्री ओम उज्ज्वल की अध्यक्षता, श्री प्रह्लाद राय व्यास के मुख्य आतिथ्य एवं डॉ. कैलाश पारीक के विशिष्ट आतिथ्य में किया गया। इस अवसर पर सर्वश्री अजीज जख्मी, भँवर आर्य, जयप्रकाश भाटिया, रेखा स्मित, श्यामसुंदर सुमन, गुलाब मीरचंदानी, सुधा तिवारी सखी, पुनीता भारद्वाज, गोपाल पंचोली आसु, रामगोपाल जांगिड़, रतन चटुल, नरेंद्र वर्मा, प्रह्लाद मुस्कान, देवीलाल दुलारा व दिव्या सेन ने काव्य पाठ किया। संचालन सुश्री रेखा स्मित ने किया। ☐

परिचर्चा कार्यक्रम संपन्न

विगत दिनों कानपुर में गायत्री विहार नागरिक परिषद्, केशवपुरम् के प्रांगण में डॉ. शिवशंकर त्रिवेदी की अध्यक्षता एवं प्रो. राजेंद्र मिश्र के मुख्य आतिथ्य में डॉ. दिनेश प्रसाद तिवारी द्वारा रचित काव्य-संग्रह 'माटी की महक' पर परिचर्चा का आयोजन किया गया, जिसमें आचार्य भरत ने अपने विचार व्यक्त किए। ☐

लोकार्पण सह परिचर्चा-गोष्ठी संपन्न

१० अप्रैल को पूर्णिया में श्री भोलानाथ आलोक के सिपाही टोला आवासीय परिसर में प्रो. ए. हसन की अध्यक्षता एवं श्री चंद्र किशोर जायसवाल के मुख्य आतिथ्य में डॉ. सुवंश ठाकुर अकेला की कृति 'गहरी स्मृति के दाग' एवं श्री शिव नारायण शर्मा 'व्यथित' की कृति 'धूप जब आँगन उतरी' का लोकार्पण सह परिचर्चा-गोष्ठी आयोजित की गई, जिसमें सर्वश्री इंदु शेखर, रामनरेश भक्त एवं छोटे लाल बहरदार ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री अवधेश कुमार सिंह ने किया तथा धन्यवाद श्री अशोक कुमार सिंह ने ज्ञापित किया। ☐

द्विसत्रीय कार्यक्रम संपन्न

विगत दिनों इलाहाबाद में बौद्धिक-शैक्षिक-साहित्यिक-सांस्कृतिक-सामाजिक संस्थान 'सर्जनपीठ' और इलाहाबाद संग्रहालय के संयुक्त तत्त्वावधान में श्री गौरवकृष्ण बंसल की अध्यक्षता, श्री शैलेंद्र कपिल के मुख्य आतिथ्य एवं सुश्री उर्वशी उपाध्याय के विशिष्ट आतिथ्य में 'अस्तित्व और अस्मिता की तलाश में भटकती नारी' विषय पर सर्वश्री बिमला देवी, प्रियंका चंद्रा, क्षमाशंकर पांडेय, राजेश कुमार मिश्र, साहिर लुधियानवी ने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. पृथ्वीनाथ पांडेय ने किया। द्वितीय सत्र में डॉ. पृथ्वीनाथ पांडेय की अध्यक्षता में कवि-शायर सम्मेलन का आयोजन किया गया, जिसमें सर्वश्री सोनाली घोष, उर्वशी उपाध्याय, दीनानाथ शुक्ल, शुभ्रांशु पांडेय, राधेश्याम ठाकुर, आकिल सुलतानपुरी, प्रद्युम्नाथ तिवारी 'करुणेश', कैलाश पांडेय, मुकुल मतवाला, शंभुनाथ त्रिपाठी 'अंशुल' ने काव्य पाठ किया। संचालन श्री सौरभ पांडेय ने किया। ☐

पं. कमलापति मिश्र की स्मृति में 'पुस्तक दान'

६ अप्रैल को लखनऊ में प्रसिद्ध स्वतंत्रता संग्राम सेनानी, साहित्यकार और अखिल भारतीय संस्कृत परिषद् के संस्थापक मंत्री स्व. पं. कमलापति मिश्र की स्मृति में ६९० पुरानी दुर्लभ प्रकाशित पुस्तकें और पुरानी उल्लेखनीय पत्र-पत्रिकाएँ अखिल भारतीय संस्कृत परिषद् के पुस्तकालय को देकर स्व. पं. कमलापति मिश्र के पुत्र सर्वश्री अरविंद मिश्र और इंदीवीर मिश्र द्वारा 'पुस्तक दान' का एक अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत किया गया। ☐

डॉ. धर्मवीर भारती के नाम पर चौक का नामकरण

३० अप्रैल को मुंबई के बांद्रा उपनगर के चौराहे पर 'डॉ. धर्मवीर भारती चौक' का अनावरण प्रख्यात अभिनेता श्री अमिताभ बच्चन द्वारा किया गया। इसके नामकरण के लिए पिछले दस वर्षों से प्रयास जारी थे। पर इस सफलता का सेहरा बँधा भारतीय जनता पार्टी के युवा नेता श्री अमरजीत मिश्र और नगरसेवक श्री महेश पारकर के नाम। इस उपलक्ष्य में आयोजित समारोह में डॉ. भारती की जीवनसंगिनी श्रीमती पुष्पा भारती तथा सर्वश्री अमिताभ बच्चन, आशीष शेलार, संजय राउत व विश्वनाथ सचदेव ने विचार व्यक्त किए। महाराष्ट्र में कुछ लोग हिंदी भाषियों के प्रति दुराग्रह रखते हैं, ऐसे में हिंदी के मूर्धन्य साहित्यकार-संपादक धर्मवीर भारती जी के नाम से एक सुंदर चौक बनाकर महाराष्ट्र सरकार ने हिंदीभाषियों के प्रति अपना सम्मान प्रकट किया है। हिंदी प्रदेशों में भी इसी प्रकार हिंदी साहित्य की विभूतियों के नाम से चौक/चौराहे बनने चाहिए, ताकि जनसामान्य भी इन विशिष्ट साहित्यकारों के अवदान को जान सकें। ☐

मुक्ति दिवस एवं जयंती समारोह संपन्न

८ मई को ओस्लो में भारतीय-नॉर्वेजीय सूचना एवं सांस्कृतिक फोरम द्वारा नॉर्वे का मुक्ति दिवस और साहित्य के नोबेल पुरस्कार विजेता गुरुदेव रवींद्र नाथ टैगोर की जयंती का समारोह बियर्के बीदेल के पूर्व मेयर श्री थूरस्ताइन विंगेर के मुख्य आतिथ्य में संपन्न हुआ। इस अवसर पर सर्वश्री रामप्रसाद भट्ट, सिगरीद मारिये रेफसुम, इंगेर मारिये लिल्लेएंगेन, नूरी रोयसेग, गुरु शर्मा, राय भट्टी, राज कुमार, निर्मल ब्रह्मचारी, सुरेशचंद्र शुक्ल ने अपना रचना पाठ किया। ☐

प्रविष्टियाँ आमंत्रित

हिंदी साहित्य निकेतन द्वारा 'लघुकथाकोश' के प्रकाशन की योजना है। इस कोश का उद्देश्य है—अच्छी लघुकथाओं को पाठकों एवं शोधार्थियों तक पहुँचाना। इस कोश में प्रतिष्ठित एवं नवोदित कथाकारों की स्तरीय लघुकथाएँ सम्मिलित की जाएँगी। चयन का अंतिम निर्णय संपादक-मंडल द्वारा लिया जाएगा। सम्मिलित होने के लिए किसी भी प्रकार का शुल्क या सहयोग राशि नहीं देनी होगी। इसमें सम्मिलित रचनाकारों को यह कोश मुद्रित मूल्य के आधे मूल्य पर प्रदान किया जाएगा। इच्छुक लेखक अपनी चुनी हुई प्रकाशित/अप्रकाशित अधिकतम तीन लघुकथाएँ इ-मेल से वर्ड की फाइल में यूनिकोड/वॉकमैन चाणक्य/कृतिदेव में हिंदी साहित्य निकेतन, बी-२०३ पार्क व्यू सिटी-२, सोहना रोड, गुड़गाँव (हरियाणा) पते पर ३१ जुलाई तक भेज सकते हैं। ☐

प्रविष्टियाँ आमंत्रित

'परंपरा-ऋतुराज सम्मान' के अंतर्गत एक-एक लाख के दो और इक्यावन हजार की सम्मान-राशि का प्रावधान है, जो घटाया-बढ़ाया जा सकता है। सम्मान के लिए पिछले दस वर्षों में प्रकाशित श्रेष्ठ काव्य-लेखन की कोई भी सामग्री या पुस्तक की एक प्रति १२ जुलाई तक श्री काशीनाथ मेमानी, संस्थापक 'परंपरा' डब्ल्यू-२, ग्रेटर कैलाश-२, नई दिल्ली-११००४८ के पते पर भेज सकते हैं। दूरभाष : ०९८१०२७६४४०☐

तीन दिवसीय कार्यक्रम संपन्न

२९ अप्रैल से १ मई तक न्यूयॉर्क में अमरीका के 'हिंदी संगम प्रतिष्ठान' और न्यूयॉर्क स्थित 'भारत सरकार के प्रभाष कौंसुलावास' के तत्त्वावधान में तीसरा अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन दस सत्रों में आयोजित किया गया, जिसके मख्य कर्णधार श्री अशोक ओझा थे। इस अवसर पर 'हिंदी भाषा : शिक्षा, साहित्य, कला और संचार माध्यमों में विविध मुद्दों पर अभिव्यक्ति की लोकतांत्रिक आवाज' विषय पर कौंसुल से सर्वश्री रीवा गांगुली दास, एल.टी. नगाईते अमरीका से विजय मेहता, सुरेंद्र गंभीर, विजय, सुषमा बेदी, पूर्णिमा देसाई, बिंदेश्वरी अग्रवाल, अनिल प्रभा, सीमा खुराना, एच.आर. शाह, नीताक्षी फुकन, राकेश रंजन, भारत से प्रेम जनमेजय, हरीश नवल, गिरीश रंजन तिवारी, स्वीडन से हीन्ज बर्नर, टर्की से साईनाथ चैपल, तमिलनाडु से जगन्नाथ रेड्डी, हेमलता बुद्धा, कुरुक्षेत्र से बाबूराम, रणधीर सिंह, सरला चौधरी, अर्पिता अटक, अन्य क्षेत्रों से इंद्रजित सलूजा, कुमार गर्ग एवं प्रवीण कुमार ने अपने परचे पढ़े। सत्र संचालन डॉ. सुषम बेदी एवं प्रो. गैनिल्ला ने किया। इस अवसर पर प्रभात प्रकाशन से प्रकाशित श्री हरीश नवल के उपन्यास 'रेतीले टीले का राजहंस' का लोकार्पण डॉ. सुषम बेदी एवं श्री अशोक ओझा द्वारा किया गया। साथ ही श्री प्रेम जनमेजय द्वारा संपादित पत्रिका 'व्यंग्य यात्रा' के नवीन अंक का भी लोकार्पण संपन्न हुआ। ☐

'शब्दशिल्पी : डॉ. नत्थन सिंह स्मृति-ग्रंथ' लोकार्पित

३० अप्रैल को नई दिल्ली में भाषा अभियान, दिल्ली एवं अखिल भारतीय अणुव्रत न्यास के संयुक्त तत्त्वावधान में डॉ. नत्थन सिंह के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर केंद्रित 'शब्दशिल्पी : डॉ. नत्थन सिंह स्मृति-ग्रंथ' का लोकार्पण समारोह के अध्यक्ष पद्मश्री डॉ. श्याम सिंह 'शशि' के कर-कमलों से संपन्न हुआ। इस अवसर पर सर्वश्री गीतिका सिंह, साधना तोमर, इंद्रसेंगर, कमलेश चौधरी, महेंद्र सिंह सिकरवार, गजेंद्र सिंह, प्रदीप कुमार चौधरी ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. हरिसिंह पाल ने तथा धन्यवाद डॉ. हीरालाल बाछोतिया ने ज्ञापित किया। ☐

लोकार्पण समारोह संपन्न

२२ अप्रैल को दिल्ली के दीनदयाल उपाध्याय मार्ग स्थित राष्ट्रीय छात्र शक्ति भवन में केंद्रीय हिंदी संस्थान के निदेशक प्रो. नंदकिशोर पांडेय की अध्यक्षता एवं श्री सुनील अंबेकर के मुख्य आतिथ्य में गुजरात के राज्यपाल प्रो. ओमप्रकाश कोहली द्वारा डॉ. अरुण भगत द्वारा संपादित चार पुस्तकों 'अटल बिहारी वाजपेयी की काव्य चेतना', 'डॉ. देवेंद्र दीपक के संपादकीय', 'आपातकाल की प्रतिनिधि कविताएँ' एवं 'हिंदी के विकास में पत्रकारिता की भूमिका' का लोकार्पण किया गया, जिसमें डॉ. अवनिजेश अवस्थी ने अपने विचार व्यक्त किए। इस अवसर पर भारतीय साहित्य-संस्कृति न्यास द्वारा कई रचनाकारों को शॉल तथा प्रशस्ति-पत्र देकर सम्मानित किया गया। संचालन डॉ. अशोक कुमार ज्योति ने किया तथा धन्यवाद श्री आर.के. यादव ने ज्ञापित किया। ☐

'लरन हिंदी एंड हिंदी फिल्म सोंग्स' कृति लोकार्पित

२३ अप्रैल को मुंबई के प्रसिद्ध एस.पी. जैन ऑडिटोरियम में साहित्यिक संस्था 'जीवंती फाउंडेशन' द्वारा डॉ. विश्वनाथ सचदेव की अध्यक्षता में आयोजित समारोह में डॉ. अंजना संधीर की पुस्तक 'लरन हिंदी एंड हिंदी फिल्म सोंग्स' का लोकार्पण भजन सम्राट् श्री अनूप जलोटा द्वारा किया गया। साथ ही डॉ. करुणाशंकर उपाध्याय द्वारा सुश्री संध्या रियाज के प्रथम काव्य-संग्रह 'बदलती लकीरें' का लोकार्पण भी हुआ। प्रथम सत्र का संचालन श्री अनंत श्रीमाली ने किया। द्वितीय सत्र में महफिले मुशायरों का आयोजन हुआ, जिसमें सर्वश्री कासिम इमाम, आलम निजामी, राम गोविंद 'अतहर', देवमणि पांडेय, असद अजमेरी, अंजना संधीर, संध्या रियाज, प्रज्ञा विकास व मायागोविंद ने अपनी रचनाएँ सुनाईं। ☐

'हम हैं राही प्यार के' कृति लोकार्पित

३० अप्रैल को लखनऊ के मरकरी सभागार, इंदिरा गांधी प्रतिष्ठान विभूति खंड, गोमती नगर में श्री वसीम बरेलवी की अध्यक्षता में प्रभात प्रकाशन द्वारा प्रकाशित श्री पार्थ सारथी सेन शर्मा की नव प्रकाशित पुस्तक 'हम हैं राही प्यार के' का लोकार्पण उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री माननीय श्री अखिलेश यादव के करकमलों से संपन्न हुआ। मुख्य अतिथि कन्नौज की सांसद श्रीमती डिंपल यादव थीं। ☐

'मेरी इतनी बात सुनो' कृति लोकार्पित

१९ अप्रैल को नई दिल्ली के हिंदी भवन में श्री बल्देव भाई शर्मा की अध्यक्षता में डॉ. देवेंद्र दीपक की सद्य:प्रकाशित पुस्तक 'मेरी इतनी बात सुनो' का लोकार्पण गोवा की राज्यपाल श्रीमती मृदुला सिन्हा द्वारा किया गया। इस अवसर पर सर्वश्री कमल किशोर गोयनका, शत्रुघ्न प्रसाद व रवि टेकचंदानी ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. अरुण कुमार भगत एवं डॉ. अशोक कुमार ज्योति ने किया। धन्यवाद श्री अशोक शर्मा ने ज्ञापित किया। ☐